मार्कण्डेय पुराण एक समीक्षात्मक अध्ययन
(इलाहाबाद विश्वविद्यालय की डी० फिल्० उपाधि के लिए प्रस्तुत)

शोध प्रबन्ध
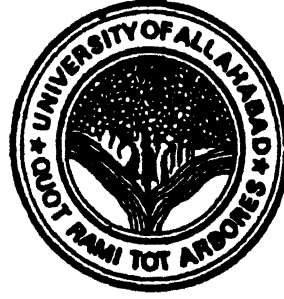
निर्देशिका-
डॉ० मंजुला जायसवाल
रीडर, संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

प्रस्तुतकर्त्री-
जया कुमारी पाण्डेय
एम० ए० (संस्कृत)
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
2002

प्राक्कथन

सस्कृत विश्व की सबसे प्राचीन भाषा है । सस्कृत के लोकप्रिय ग्रन्थो मे पुराणो का विशेष महत्व है। महापुराणो की सख्या अठारह है। अठारह महापुराणो की विलक्षण विशेषताओ के कारण ही छान्दोग्योपनिषद पुराणो को "पञ्चम वेद" के रूप मे स्वीकारता है–"

इतिहासपुराण पञ्चम वेदाना वेदम्"1

वस्तुत पुराण का मुख्य उद्देश्य वेद, उपनिषद, दर्शन आदि अन्य शास्त्रो मे वर्णित गूढ तथ्यो को सरल रूप मे व्याख्या करना है , जिससे साधारण मनुष्य धर्म ,आध्यात्म एव सदाचार आदि सम्बन्धी विषयो को सरलता से समझ सके। प्रोफेसर विल्सन के अनुसार– "यद्यपि पुराणो के द्वारा दी गयी सूचनाये असन्तोष जनक और उनकी प्रामाणिकता सन्देहास्पद हो सकती है, तो भी हिन्दुओ की विचारधारा तथा तत्व ज्ञान के लिए पुराण ही एक मात्र स्रोत है।"2

अठारह महापुराणो मे मार्कण्डेय पुराण सप्तम् स्थान पर आता है। मार्कण्डेय पुराण सत्य एव धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा देता है। यह पुराण लोक विश्वास तथा धार्मिक परम्पराओ को अनुभूति कराने मे सहायक है। मार्कण्डेय पुराण जीव को भुक्ति तदुपरान्त मुक्ति का सन्देश देता है मार्कण्डेय पुराण को तीन (सम्प्रदायो) श्रेणी मे रख सकते है। प्रथमत मार्कण्डेय ऋषि शैव थे अत मुख्य वक्ता के आधार पर मार्कण्डेय पुराण को शैव धर्म मे रखा गया किन्तु कालान्तर मे विष्णु धर्म का वर्चस्व होने पर वैष्णव सस्कार करके मार्कण्डेय पुराण को वैष्णव धर्म मे मिला लिया गया किन्तु वर्तमान रुप मे देवी माहात्म्य का विशेष उल्लेख होने की दृष्टि से मार्कण्डेय पुराण को शाक्त धर्म मे रखा जा सकता है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध को मैने कुल सात अध्यायो मे विभाजित करके मार्कण्डेय पुराण की समीक्षा करने का प्रयत्न किया है । मेरे शोध प्रबन्ध "मार्कण्डेय पुराण एक समीक्षात्मक अध्ययन" के प्रथम अध्याय मे पुराण, शब्द व्युत्पत्ति, समय, रचना स्थल एव पुराणो के पञ्चलक्षण आदि दृष्टि से विभाजन करते हुए अठारह

1 छान्दोग्योपनिषद 7/1/2
2 पद्मपुराण का सास्कृतिक अध्ययन प्रस्तावना पृष्ठ –1

पुराणो का सामान्य परिचय पर प्रकाश डाला गया है। सक्षेप मे उप पुराण एव पुराण और वेद के सम्बन्धो को रोचक ढग से प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। द्वितीय अध्याय मे मार्कण्डेय ऋषि के जीवन चरित्र एव ग्रन्थो की सहायता से मार्कण्डेय ऋषि सम्बन्धी कुछ छिटपुट जानकारी का वर्णन किया है। मार्कण्डेय पुराण का नामकरण, वक्तारूपी चार धर्म पक्षियो का वर्णन करते हुए वर्ण्य विषय का वर्णन किया है । मार्कण्डेय पुराण का अध्यायानुसार पञ्च लक्षणात्मक विभाजन करते हुए सृष्टि, प्रतिसृष्टि एव मन्वन्तर का वर्णन कुछ विस्तृत हो गया है । तृतीय अध्याय मे समाज की ओर प्रकाश डाला गया है। मार्कण्डेय पुराण का समाज चार वर्ण, चार आश्रम एव कुछ मुख्य सस्कारो से परिपूर्ण था, विवाह के भी कुछ महत्वपूर्ण नियमो का उल्लेख प्राप्त होता है । पुरुष एव स्त्रियो की दशा, शिष्टाचार आदि का उल्लेख इसी अध्याय मे किया गया है । आवास –निर्माण, माप–तौल का भी उल्लेख किया गया है । चतुर्थ अध्याय मे राजनीतिक समीक्षा प्रस्तुत की गयी है । राजा का स्वरूप, राज्याभिषेक, राजा के गुण –कर्तव्य एव राजा के धर्मो का वर्णन किया है। राज्य के सप्ताङ्गो के आधार पर राजा, मत्री, आमात्य आदि का वर्णन किया है। मार्कण्डेय पुराण मे राजनीतिक वर्णन अधिक नही प्राप्त होता है । पचमोध्याय मे भारतीय धर्म एव दर्शन पर प्रकाश डाला गया है यह अध्याय इस शोध प्रबन्ध का महत्वपूर्ण अध्याय है। धर्म भारतीय सस्कृति का मेरुदण्ड है । इस अध्याय मे तीन प्रकार की अग्नि, यज्ञ, होम, दान, बलि तथा तपस्या का वर्णन करते हुए श्राद्ध कर्म, व्रत –उपवास का वर्णन किया है । इसी प्रकार भारतीय धार्मिक अवधारणाओ के अन्य पहलुओ पर भी प्रकाश डालने का प्रयास किया है । इसी अध्याय के द्वितीय खण्ड 'दर्शन' मे आत्मा का स्वरूप, आत्म ज्ञान, मनुष्य द्वारा किये गये विभिन्न पाप –पुण्य कर्म एव उनके फलो का वर्णन किया है । इसके अतिरिक्त इस खण्ड मे शाक्तमत, शक्तितत्व एव देवी के महात्मय का वर्णन और कुछ महत्वपूर्ण पहलुओ पर प्रकाश डाला है ।

षष्ठ अध्याय मे पृथ्वी के भौगोलिक विभाजन का वर्णन किया है । इसके अन्तर्गत पृथ्वी पर सप्तद्वीप, जम्बू द्वीप के नौ वर्ष, भारत वर्ष का क्षेत्रीय विभाजन, प्राचीन विभाजन, जनपद, पर्वत, नदियो, वन, सरोवर एव नगर –पुरो आदि का वर्णन किया है । सप्तम अध्याय' ज्योतिष एव कला' पर सक्षिप्त प्रकाश डाला है। इस अध्याय मे ज्योतिष, गण्डदोष, नक्षत्र –राशि एव कला खण्ड मे सगीत कला, वाद्य यन्त्रो, गन्धर्व,

अप्सरा, विलासिनी गण, गृह मे स्वस्तिक, मूर्तिकला, रत्न –आभूषण एव वास्तुकला पर प्रकाश डाला है । शोध प्रबन्ध की उपसहार मे मार्कण्डेय पुराण के माहात्म्य का वर्णन किया है ।

परास्नातक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद शोध करने की प्रेरणा मुझे मेरे पिता स्वर्गीय श्री राम चन्द्र पाण्डेय जी से हुयी। तदन्तर ज्योतिष्पीठाधीश्वर जगद्गुरु शकराचार्य स्वामी वासुदेवानन्द सरस्वती जी महराज ने शोधकार्य के लिये निरन्तर प्रेरित किया। जिनका पादारविन्द –पराग ही मुझे इस शोध कार्य को पूरा करने मे समर्थ रहा। प्रस्तुत शोध कार्य प्रबन्ध को अपने लक्ष्य तक पहुचाने के लिए मेरी शोध निर्देशिका गुरुवर डॉ० मजुला जायसवाल जी ने मुझे निरन्तर प्रेरित करते हुये अपना अमूल्य समय मुझे प्रदान किया। इलाहाबाद विश्वविद्यालय का पुस्तकालय एव कर्मचारियो का महत्वपूर्ण योगदान मिला इनके सहयोग से पुस्तकालय से अत्यन्त महत्वपूर्ण एव उपयोगी पुस्तको का लाभ मिल सका। हमारे शोध कार्य मे विभाग के गुरुजनो एव कर्मचारियो का सदैव स्नेह एव सहयोग मुझे रहा। शोधकार्य मे मेरे चाचा डॉ० कृष्ण चन्द्र पाण्डेय का मार्ग दर्शन एव आशीवार्द प्राप्त हुआ। " पड्गु लघयते गिरिम् " की तरह मार्गजन्य समस्त दुर्लघ्य बाधाओ को दूर करने मे मेरी मा श्रीमती क्षमा देवी, मेरे अग्रज सदीप पाण्डेय, अतुल पाण्डेय, एव अनुज मनीष चन्द्र पाण्डेय, रोहित पाण्डेय एव सखी नीता सिह का आदि से अन्त तक विशेष सहयोग रहा। मैं अपने शुभचिन्तको और मित्रो ,जो मेरी पूजी और प्रेरणा स्रोत है सभी के सहयोग का आभार प्रकट करती हूँ। श्री लाल चन्द्र सिह एव राकेश यादव ने मेरी आवश्यकता को ध्यान मे रखते हुये कम्प्यूटर टाइपिग किया इसके लिये अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ।

जया कुमारी पाण्डेय

दिनाक

अक्टूबर, 2002

जया कुमारी पाण्डेय

शोधकर्त्री , सस्कृत विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय ,इलाहाबाद

विषयानुक्रमणी

प्रथम अध्याय
पुराण

शाब्दिक व्युत्पत्ति –

आचार्य बलदेव उपाध्याय ने पुराण शब्द की व्युत्पत्ति पाणिनी के सूत्रो द्वारा इस प्रकार करते है– "पुरा भवम्" (प्राचीन काल मे होने वाला) इस अर्थ मे "साय चिर प्राह्वे–प्रगेऽव्ययेभ्यष्टयुट्युलौ तुट् च"[1] पाणिनी के इस सूत्र से पुरा शब्द से "ट्यु" प्रत्यय करने तथा "तुट्" आगमन होने पर "पुरातन" शब्द निष्पन्न होता है, परन्तु स्वय पाणिनी ने ही अपने दो सूत्रो – "पूर्वकालैक सर्व जरत् पुराण नव केवला समानाधिकरणेन"[2] तथा पुराण प्रोक्तेषु ब्राह्मण कल्पेषु[3] मे "पुराण" शब्द का प्रयोग किया गया है। जिससे तुडागम का अभाव निपातनात् सिद्ध होता है, तात्पर्य यह है कि पाणिनी की प्रक्रिया के अनुसार 'पुरा' शब्द से ट्यु प्रत्यय अवश्य होता है, परन्तु नियम प्राप्त तुट का आगम नही होता।[4]

पुराण शब्द की व्युत्पत्ति अन्यत्र प्राप्त नही होती अपितु पुराण परिभाषा अवश्य प्राप्त होती है।

पुराण की परिभाषा – "पुराण आख्यानम्" प्राचीन आख्यान अर्थात् प्राचीनकाल की कोई घटना ,वृत्तान्त, कथा इत्यादि। मत्स्य पुराण मे लिखा है कि प्राचीन कल्प की वस्तुओ का जिसमे वर्णन हो उसे विद्वान लोग पुराण की सज्ञा प्रदान करते हैं– "पुरातनस्य कल्पस्य पुराणानि विदुर्बुधा"[5]

वायुपुराण एव पद्मपुराण के अनुसार –

"यस्मात् पुरा ह्यनतीद पुराण तेन हि स्मृतम्"[6]

"पुरा परम्परा वष्टि पुराण तेन हि स्मृतम्"[7]

"जो प्राचीन परम्परा को कहता है या वर्णन करता है पुराण कहते है"।

1 पाणिनी सूत्र 4/3/23
2 पाणिनी सूत्र 2/1/49
3 पाणिनी सूत्र 4/3/105
4 पुराण विमर्श पृष्ठ–3
5 मत्स्य पुराण 56/63
6 पद्मपुराण/सृष्टि खण्ड /2/53
7 वायु पुराण 1/103

इस प्रकार इन पुराणो के मतो से हमे यही ज्ञात होता है कि प्राचीनकाल की कथाओ, राजाओ, ऋषियो एव देवताओ आदि का आख्यान उनकी सस्कृति से परिपूर्ण ग्रन्थ ही पुराण है। पुराण अर्थात् जिसमे प्राचीन कथाओ का वर्णन हो वही पुराण है।

पुराणो की उत्पत्ति –

पुराणो की उत्पत्ति के सम्बन्ध मे ऋषियो, मुनियो का यही मत रहा है कि पुराण अनादि एव अपौरुषेय है। वेदो मे कहा गया है कि उच्छिष्ट ब्रह्म से वेदो के साथ पुराणो का आविर्भाव हुआ।

अथर्ववेद के अनुसार –

ऋच सामानि छन्दासि पुराण यजुषा सह।

उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वं दिवि देवा विपश्चित ।।

ऋक्, साम, छन्द (अथर्व) और यजुर्वेद के साथ ही पुराण भी उस उच्छिष्ट से यज्ञ के अवशेष से अथवा जगत पर शासन करने वाले यज्ञमय परमात्मा से उत्पन्न हुये तथा द्यूलोक मे निवास करने वाले देव भी उच्छिष्ट से पैदा हुये।[1]

गोपथ ब्राह्मण ने तो यहॉ तक कहा है कि "यदि पुराण, वेद, उपनिषद आदि धार्मिक ग्रन्थो मे प्रस्तुत वस्तु एव विषय जो कुछ भी है सब पर ब्रह्मा का अधिकार है और ब्रह्ममय ऐसी स्थिति मे पुराणो की उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से हुयी यह सर्वथा सत्य प्रतीत हो रही है।

उपनिषद का मानना है कि पुराण की व्युत्पत्ति महाभूत के निश्वास से हुयी।[2]

1 अथर्ववेद 11/7/24

2 अरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद् ऋग्वेदो यजुर्वेद ।

सामवेदोऽथर्वाङ्गिरस इतिहास पुराण विद्या उपनिषद ।।

वृहदारण्यक उपनिषद /2/4/10

पद्मपुराण मे कहा गया है कि ब्रह्मा जी ने समस्त शास्त्रो मे सर्वप्रथम पुराण का स्मरण किया।[1]
सूत्र ग्रन्थो मे पुराण शब्द का उल्लेख मिलता है। आश्वलायन गृहसूत्र मे पुराण को स्वाध्याय रूप मे स्वीकारा गया है।[2] आपस्तम्ब धर्मसूत्र मे किसी पुराण से दो श्लोक उद्धृत किये गये है।[3] गौतम धर्मसूत्र मे वेद–वेदाङ्ग के साथ–साथ पुराणो को भी उपयोगी बताया गया है।[4]

याज्ञवल्क्य स्मृति एव विष्णु पुराण मे पुराणो की उपादेयता के बारे मे उल्लेख होता है–

पुराण न्याय मीमासा धर्मशास्त्राङ्ग मिश्रिता ।

वेदा स्थानानि विद्याना धर्मस्य च चतुर्दश।।[5]

पार्टिजर महोदय ने पुराण उत्पत्ति के विश्लेषण के प्रसङ्ग मे यह निष्कर्ष निकाला कि अर्थशास्त्र की जब रचना हुयी पुराण ग्रन्थ के रूप मे प्रतिष्ठित हो चुके थे।[6]

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पुराण की उत्पत्ति "ब्रह्मा जी के मुख से पुराण की उत्पत्ति हुयी है ऋषियो ने पुराण को अनेक प्रकार से विभाग किया। ब्रह्मा जी के मन से सप्तर्षियो की उत्पत्ति हुयी भृगु ऋषि से लेकर च्यवन ऋषि ने पुराण को अन्य ऋषियो पर प्रकट किया उन ऋषियो ने दक्ष के प्रति कहा, दक्ष ने मुझसे (मार्कण्डेय ऋषि) कहा। इसके सुनने से कलियुग के समस्त पाप नष्ट हो जाते है।[7]

1 पद्मपुराण 1/45

2 आश्वलायन गृह सूत्र मन्त्र 3/3/1

3 पुराण विमर्श पृष्ठ 15

4 गौतम धर्मसूत्र 11/19

5 याज्ञवल्क्य स्मृति 1/3, विष्णु पुराण 3/6/28

6 पार्टिजर एशॅण्ट इण्डियन हिस्ट्रारिकल ट्रेडिशन पृष्ठ 34

7 "उत्पन्न मात्रस्यपुरा कलिकल्मष नाशनम्" मार्कण्डेय पुराण। 42/20–25

समय –

,पुराणो का काल निर्धारण करना निश्चित रूप से बहुत कठिन है। जैसे–जैसे हम पुराणो के बारे मे पढते है उसके सामाजिक, भौगोलिक एव राजनीतिक परिवेश के अनुसार उसके समय का भी निर्धारण कर लेते है यद्यपि मार्कण्डेय पुराण मे यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि–

उत्पन्नमात्रस्य पुरा ब्रह्मणोऽव्यक्त जन्मन ।

पुराणमेतद्वेदाश्च मुखेभ्योऽनुविनिसृता ।।[1]

पूर्वकाल मे अव्यक्त योनि ब्रह्मा जी के उत्पन्न होते ही उनके चारो मुख से वेदो एव पुराणो का आविर्भाव हुआ। इस आधार पर तो यही कहा जा सकता है कि सृष्टि के प्रारम्भ मे ही पुराणो की रचना हुयी एव समय के साथ–साथ इनकी सख्या घटती–बढती गयी। यद्यपि पार्टिजर महोदय ने अपने अनेक प्रमाणो द्वारा यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि पुराणो की रचना ईसा पूर्व चतुर्थ शताब्दी मे हो गयी थी।

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार–"ज्ञात होता है कि गुप्त युग के अन्त मे बौद्ध और जैन साहित्य की सम्मिलित श्लोक सख्या 16 लाख मानी गयी। उसी समय हिन्दू लेखको के चतुर्लक्ष श्लोकात्मक पुराण साहित्य का सृजन किया।[2]

पुराणो का रचना स्थल –

पुराणो का रचना स्थान किसी न किसी पवित्र स्थल, तीर्थस्थल या नदी के किनारे होने का लगभग प्रमाण प्राप्त होता है। गरुड पुराण के अनुसार नैमिषारण्य (वर्तमान मे उत्तर प्रदेश के सीतापुर जिला स्थान) मे शौनक आदि मुनियो को श्रीसूतजी ने गरुड पुराण की कथा सुनायी थी।

"नैमिषेऽनिमिषक्षेत्रे ऋषय शौनकादय ।"[3]

1 मार्कण्डेय पुराण 42/20

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ–7

3 गरुड पुराण 1/2

इसी प्रकार पद्मपुराण मे पुष्कर क्षेत्र की महत्ता का अधिक वर्णन होने से पुष्कर क्षेत्र को पद्मपुराण का रचना स्थल माना जाता है।[1] श्री दीक्षितार महोदय– वायु पुराण की रचना गया, ब्रह्मवैवर्त की उडीसा मानते है।[2]

ब्रह्मपुराण की रचना उडीसा, पद्मपुराण की पुष्कर, अग्निपुराण गया, कूर्मपुराण की वाराणसी, वाराह पुराण की मथुरा, वामन पुराण की स्थाणेश्वर और मत्स्यपुराण की रचना नर्मदाघाटी मे हुयी थी।[3] इसी प्रकार मार्कण्डेय पुराण की रचना विन्ध्यपर्वत के समीप रेवा नदी के तट पर हुयी ऐसा माना जाता है।[4]

पुराणो की प्राचीनता –

पुराणो का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है इसका स्थान वेदो के समकक्ष माना गया है। ऋग्वेद मे 'पुराण' 'एव 'पुराणी' शब्दो का उल्लेख प्राप्त होता है किन्तु यह विशेषण के रूप मे प्राप्त होता है। पुराण शब्द का ग्रन्थ के अर्थ मे उल्लेख हमे सर्वप्रथम अथर्ववेद मे प्राप्त होता है।

अथर्ववेद के अनुसार –

"ऋच सामानि छन्दासि पुराण यजुषा सह।
उच्छिष्टज्जज्ञिरे सर्वं दिवि देवा विपश्चित ।।"[5]

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ 10

2 दीक्षितार, दि पुराण ए स्टडी, इ0 हि0 क्वा0 भाग 8 पृष्ठ 747

3 एस0 भीमशकर राव, हिस्टारिकल इम्पार्टेस आफॅ दॅ पुराणाज, क्वा0 ज0 आ0 हि0 रि0 सो0,भाग 2 पृष्ठ 80

4 मार्कण्डेय पुराण 4/22

5 अथर्ववेद 11/7/24

अथर्ववेद मे पुराण शब्द का उल्लेख होने का अर्थ है कि पुराणो की रचना वेदो से पहले हो चुकी थी। मत्स्यपुराण भी समर्थन करता है कि वेदो की रचना से पहले पुराणो की रचना हो चुकी थी।

"पुराण सर्वशास्त्राणा प्रथम ब्रह्मणा स्मृतम्।

अनन्तर च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गता ।।"[1]

गोपथ ब्राह्मण[2] के मन्त्र मे वेदाङ्ग के रूप मे उपनिषद कल्पादि के साथ पुराण का भी उल्लेख प्राप्त होता है। इसी के दो मन्त्रो मे वेदपचक अर्थात् पाच वेदो की चर्चा मिलती है। ये वेद पचक है—सर्ववेद, पिशाचवेद, असुरवेद, इतिहासवेद एव पुराणवेद।[3]

तैत्तरीय आरण्यक मे पुराण का बहुवचन "पुराणानि" शब्द मिलता है।[4]

इतने साक्ष्यो से हमे यह स्पष्ट सकेत मिलता है कि वेद एव उपनिषदो के समय तक पुराणो की रचना हो चुकी थी। चूकि वेद एव उपनिषदो का काल लगभग 1500 ई0पू0 से 1000 ईसा पूर्व तक मानी जाती है। अत इस समय तक कुछ पुराण लिखे जा चुके थे।

पुराणों के कर्त्ता .—

पुराणो के सपादक या मुख्य सग्रहकर्त्ता कृष्णद्वैपायन व्यास माने जाते है किन्तु विष्णु पुराण के अनुसार ये व्यास सख्या मे 28 (अट्ठाइस) हैं। ये 28 व्यास युग—युग मे उत्पन्न होकर पुराणो का सपादन मात्र करते रहे है क्योकि काल प्रभाव से वेद पुराणो का विनाश भी हो जाया करता है।

मार्कण्डेय पुराण मे कहा गया है कि ब्रह्मा के मुख से वेद और पुराणो का जो आविर्भाव हुआ उसे ऋषियो ने वेदो को सहस्त्र भागो मे एव पुराणो को विविध अश मे विभक्त किया। इस प्रकार पुराण को परम्परानुसार ऋषियो ने च्यवन को, च्यवन ने भृगु को, भृगु ने दक्ष से कहा, एव दक्ष ने मार्कण्डेय जी को यह पुराण प्रदान किया था।

1 मत्स्य पुराण 53/1
2 गोपथ ब्राह्मण 1/2/10
3 गोपथ ब्राह्मण 1/1/10
4 तैत्तरीय आरण्यक 2 प्रपाठक 9 अनुवाक

" पुराण सहिताश्चक्रुर्बहुला परमर्षय ।

वेदाना प्रविभागश्च कृतस्तैस्तु सहस्त्रश ।।[1]

कुछ अन्य स्थलो पर पुराणो के रचयिता मनु को भी माना है। पद्मपुराण मे पुराणो के रचयिता मनु है।

"अष्टादश पुराणाना व्यास कर्त्ता तु भवेन्मनु ।"[2]

मत्स्यपुराण के अनुसार अठारह पुराणो के रचयिता सत्यवती के पुत्र व्यास हैं जिन्होने इसके पश्चात् महाभारत की रचना की।

" अष्टादश पुराणानि कृत्वा सत्यवती सुत"[3]

स्कन्दपुराण के अनुसार पुराणो के रचयिता व्यास को एक ही व्यक्ति माना है। ये 28 व्यास नही मानते। इसका कहना है कि भगवान स्वय हर युग मे अवतार लेते है और व्यास का रूप धारण कर 18 पुराणो को ससार मे प्रकाशित करते हैं –

" व्यास रूप विभु कृत्वा सहरेत् स युगे–युगे।

तदेष्टादशधाकृत्वा भूर्लोकेऽस्मिन् प्रकाशते।।[4]"

लगभग यही वक्तव्य हमे पद्मपुराण मे भी मिलता है कि समय परिवर्तन से जब मनुष्यो की आयु कम हो जाती है और इतने बडे पुराणो का श्रवण और पठन एक जीवन मे उसके लिये असम्भव हो जाता है तब पुराणो का सक्षेप करने के लिये स्वय सर्वव्यापी हिरण्यगर्भ भगवान ही प्रत्येक द्वापर युग मे व्यास रूप मे अवतीर्ण होते हैं और उन्हे 18 भागो मे बाटकर चार लाख श्लोको मे सीमित कर देते है। पुराणो का यह सक्षिप्तसस्करण ही भूलोक मे प्रकाशित होता है। कहते हैं कि स्वर्गादि लोको मे आज भी एक अरब श्लोको का विस्तृत पुराण विद्यमान है।[5]

1 मार्कण्डेय पुराण 42/21

2 पद्मपुराण/पाताल खण्ड/111 98

3 मत्स्य पुराण/53 70

4 स्कन्द पुराण/रेवाखण्ड/1 23 30

5 पद्मपुराण/सृष्टिखण्ड 1/51–53

कालेना ग्रहण दृष्ट्वा पुराणस्य तथा विभु ।

व्यासरूपस्तदा ब्रह्मा सग्रहार्थे युगे–युगे ।।

चतुर्लक्षप्रमाणेन द्वापरे–द्वापरे जगौ।

तदाष्टादशधा कृत्वा भूलोकेऽस्मिन् प्रकाशितम् ।।

अद्यापि देवलोकेषु शतकोटिप्रविस्तरम् ।[1]

इस प्रकार भगवान वेदव्यास भी पुराणो के रचयिता ही नही अपितु सक्षेपक एव सग्राहक भी है। महाभारत मे उल्लेख हुआ है कि पुलस्त्य, मार्कण्डेय आदि पुरातन ऋषियो के द्वारा रचित अनेको पुराणो का सार ग्रहण कर व्यास जी ने मात्र चतु सहस्त्रश्लोकात्मक पुराण रचा था।

पुराणों के वक्ता –

अधिकतर पुराणो के वक्ता सूत जी हैं इसके उदाहरण हमे कई पुराणो मे मिलते हैं। महापुराणो के अनुसार 18 पुराणो के पुन सम्पादक एव प्रवक्ता सूत जी हैं वे अट्ठासी हजार (88000) ऋषियो को नैमिषारण्य मे जो कि भगवान विष्णु का स्थान है कथा सुनाया करते थे।

नैमिषारण्य मे शौनक आदि मुनियो ने सूत जी से यम मार्ग की कथा पूछी और उन्होने गरूण पुराण की कथा सुनायी थी।[2]

अग्नि पुराण मे नैमिषारण्य मे सूत जी द्वारा कथा सुनाये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है –

"नैमिषे हरिभीजाना ऋषय शौनकादय ।

तीर्थयात्रा प्रसङ्गेन स्वागत सूतमब्रुवन् ।।"[3]

मार्कण्डेयपुराण के प्रमुख वक्ता स्वय मार्कण्डेय जी है इसमे सूत जी द्वारा कथा सुनाये जाने का उल्लेख तो मिलता है किन्तु यह नही बताया गया है कि वो मार्कण्डेय पुराण की कथा सुना रहे हैं या अन्य पुराण की।

1 पद्मपुराण/सृष्टिखण्ड 1/51–53
2 गरुड पुराण 1/1–3
3 अग्नि पुराण 1/2

सूत जी का सभी पुराणो के वक्ता के रूप मे चित्रण तो मिलता है यहॉ तक कि उनके महत्व को बताने के लिये सूत जी की उत्पत्ति कैसे हुयी इसका भी वर्णन पुराणो मे किया गया है। यद्यपि इस विषय मे कुछ मतभेद है। भागवत्पुराण के अनुसार –

" विलोमजोऽपि धन्योऽस्मि यन्मा पृच्छथ सन्तमा"[1]

मनुस्मृति के अनुसार –

" क्षत्रियात् विप्रकन्यायाा सूतो भवति जातित ।

वैश्यात् मागधवैदेहौ क्षत्रियात् सूत एव तु।।[2]

क्षत्रिय पुरुष एव बाह्मण कन्या से सूत की उत्पत्ति हुयी यह भी कहा जाता है कि राजा पृथु के अग्निकुण्ड से उत्पन्न होने से सूत नाम से प्रसिद्ध हुये। सूत के पुत्र सूत 'उगश्रवा सौति' के नाम से प्रसिद्ध है।

सूत का कार्य –

पुराणो मे सूत के कार्यों का भी उल्लेख प्राप्त होता है। वायुपुराण के अनुसार सूत का कार्य वेदाध्ययन, धर्म का उपदेश जनता को देना, धर्म का प्रसार करना, पुराणो की कथा को सुनाना, पठन–पाठन करना ही इनका कार्य था।

" वशाना धारण कार्य श्रुताना च महात्मनाम्।

इतिहास पुराणेषु दृष्टा ये ब्रह्मवादिभि ।।[3]

मार्कण्डेय पुराण मे भी सूत जी को पुराण वक्ता के रूप मे दर्शाया गया है–

"कृष्णाजिनोत्तरीयेषु कुशेषु च ब्रसीषु च।

सूत च तेषा मध्यस्थ कथयान कथा शुभा ।।"[4]

1 भागवत पुराण 10/78/24

2 मनुस्मृति 10/11/17

3 वायु पुराण 1/32

4 मार्कण्डेय पुराण 6/26

"कोई मृगछाला पर कोई वस्त्र पर कोई कुशासन पर और कितने ही पुरुष घास इत्यादि पर विराजमान है, और उनके बीच मे पुराण वक्ता सूत जी बैठे हुये कल्याणमयी कथा वाचन कर रहे है।" सूत के कार्यों के अध्ययन से हम यह कह सकते है कि जो कार्य ब्राह्मण का है वही सूत का।

व्यास –

पुराण का वाचन करने वाले को व्यास कहा गया है। यह ब्रह्म के समान पूज्य होते थे इनकी पूजा करके ही पुराण को सुनना चाहिये अन्यथा फल नही मिलता।

अपूज्यपाठकर्तार श्लोकमेक श्रणोति य ।

नासौ पुण्यमवाप्नोति शास्त्रचोर स्मृति हि स ।।[1]

पुराणो का विभाजन –

भारतीय साहित्य मे पुराणो का अपना एक अलग स्थान एव महत्व है। पुराणो का विभाजन दो वर्गो मे हुआ है–

1 महापुराण 2 लघुपुराण

1 महापुराण –

महापुराणो की सख्या 18 है जिनके नाम निम्न है–

1 ब्रह्म पुराण 2 पद्ममपुराण 3 विष्णु पुराण 4 वायु पुराण 5 भागवत पुराण 6 नारदीय 7 मार्कण्डेय 8 अग्नि 9 भविष्य 10 ब्रह्मवैवर्त्त 11 लिग 12 वाराह 13 स्कन्द 14 वामन 15 कूर्म 16 मत्स्य 17 गरुड 18 ब्रह्माण्ड पुराण।

लघुपुराण –

लघुपुराण के उपभेद निम्न प्रकार से प्राप्त होता है। आचार्य बदरीनाथ शुक्ल लघु पुराण के तीन उपभेद मानते है जो कि निम्न हैं–

1 उपपुराण 2 अतिपुराण 3 पुराण

उपपुराण, अतिपुराण एव पुराण की सख्या भी 18 ही है।

1 मार्कण्डेय पुराण 134/21

मद्वय भद्वय चैव ब्रत्रय वचतुष्टयम्।

नालिङ्गाविन पुराणानि कूस्क गारुडमेव च।।[1]

2 म – मत्स्य, मार्कण्डेय

2 भ – भागवत,भविष्य

3 ब्र – ब्रह्म, ब्रह्मवैवर्त्त, ब्रह्माण्ड

4 व – वराह, वामन, विष्णु, वायु

अ – अग्नि, ना – नारद, पा – पद्म, लि – लिङ्ग ग – गरुड, कू – कूर्म, स्क – स्कन्द पुराण।

इसे हम पुराणो का क्रम नही अपितु सुविधाजनक सूत्र रूप मे मान सकते है। आचार्य बलदेव उपाध्याय उपर्युक्त देवीभागवत के मन्त्र को अनुष्टुप छन्द मानते है।[2]

आचार्य बलदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक पुराण विमर्श मे अठारह पुराणो की श्लोक सख्या, भागवत पुराण, देवीभागवत, अग्निपुराण एव मत्स्यपुराण मे उपस्थित अठारह पुराणो की श्लोक सख्या के अनुरूप निम्न तालिकाबद्ध रूप मे प्रस्तुत किया है –

	भागवत	देवीभागवत	अग्नि	मत्स्य
	12/13	1/3	272	53
ब्रह्म	10 हजार	10 हजार	25 हजार	13 हजार
पद्म	55 हजार	55 हजार		55 हजार
विष्णु	23 हजार	23 हजार	23 हजार	23 हजार
शिव	24 हजार	24 हजार 6 सौ	14 हजार	24 हजार
भागवत	18 हजार	18 हजार	18 हजार	18 हजार

1 देवी भागवत 1/3/21

2 पुराण विमर्श पृष्ठ –75

	भागवत	देवीभागवत	अग्नि	मत्स्य
	12/13	1/3	272	53
नारद	25 हजार	25 हजार	25 हजार	25 हजार
मार्कण्डेय	9 हजार	9 हजार	9 हजार	9 हजार
अग्नि	15 हजार 4 सौ	16 हजार	12 हजार	16 हजार
भविष्य	14 हजार 4 सौ	14 हजार 5 सौ	14 हजार	14 हजार 5 सै
ब्रह्मवैवर्त्त	18 हजार	18 हजार	18 हजार	18 हजार
लिङ्ग	11 हजार	11 हजार	11 हजार	11 हजार
वराह	24 हजार	24 हजार	14 हजार	24 हजार
स्कन्द	81 हजार 1 सौ	81 हजार	84 हजार	81 हजार
वामन	10 हजार	10 हजार	10 हजार	10 हजार
कूर्म	17 हजार	17 हजार	8 हजार	18 हजार
मत्स्य	14 हजार	14 हजार	13 हजार	14 हजार
गरुड	19 हजार	19 हजार	8 हजार	19 हजार
ब्रह्माण्ड	12 हजार	12 हजार 1 सौ	12 हजार	12 हजार 2 सौ

4 लाख

आचार्य बलदेव उपाध्याय की उपर्युक्त तालिका मे अन्य पुराणो की अपेक्षा अग्नि पुराण मे उपस्थित पुराणो की श्लोक सख्या मे अन्तर मिलता है।[1]

. . .

1 पुराण विमर्श – बलदेव उपाध्याय पृष्ठ 76

समीक्षा –

उपर्युक्त पुराण वचनो के आधार पर कहा जा सकता है कि पुराणो की सख्या तो अठारह ही है किन्तु पुराणो के क्रमो मे भिन्नता प्राप्त होती है।

पुराणो का विषय दृष्टि से विभाजन –

पुराणो का उनके प्रधान विषय की दृष्टि से अनेक प्रकार से विभाजन किया जा सकता है। मुख्य रूप से यह विभाजन इस प्रकार है –

1 त्रिगुण प्रधान दृष्टि से

2 देवता प्रधान दृष्टि से

3 पुराणो मे वर्णित विषय प्रधान विभाजन

4 सृष्टि एव प्रतिसृष्टि प्रधान विभाजन

1 त्रिगुण प्रधान दृष्टि से –

पुराणो को हम सत्व, रज, तम इन तीन गुणो की पुराणो मे प्रधानता होने पर विभाजित कर सकते है – जिस पुराण मे जिन गुणो की अधिकता है उसको उसी श्रेणी मे रखा गया –

सत्व प्रधान पुराण – विष्णु/नारद/भागवत/गरुड/पद्म/वाराह।

रजस् प्रधान पुराण – ब्रह्म/मार्कण्डेय/भविष्य/ ब्रह्मवैवर्त्त/ ब्रह्माण्ड/वामन।

तमस् प्रधान पुराण – शिव/अग्नि/लिङ्ग/स्कन्द/कूर्म/मत्स्य।

सत्व, रज, एव तम इन त्रिगुणो का फल क्या होना चाहिये हमे इसका वर्णन उसके अतिरिक्त पद्मपुराण मे देखने को मिलता है –

सात्विका मोक्षदा प्रोक्ता राजसा स्वर्गदा शुभा।

तथैव तामसा देवि निरय प्राप्ति हेतव ।। [1]

1 पदमपुराण/उत्तरखण्ड 263/85

सात्विक प्रधान पुराणो मे विष्णु का, रज प्रधान पुराणो मे ब्रह्मा का एव तम प्रधान पुराणो मे शिव, अग्नि, लिङ्ग आदि पुराणो का गुण कृत भेद किया गया है। यद्यपि यह भी कहा गया है कि विष्णु पालनकर्त्ता है इसलिये सत्व प्रधान देवता है, ब्रह्मा सृष्टि उत्पन्नकर्त्ता है इसलिये रज प्रधान है एव शिव सहारकर्त्ता है अर्थात् सृष्टि नाश, प्रलयकर्त्ता है। अत तम प्रधान देवता है।

2 देवता प्रधान पुराण विभाजन –

जिस पुराण मे जिस देवता को प्रधान रूप से दर्शाया गया है उसी देवता के रूप मे उस पुराण का धर्म निश्चय होता है जैसा कि स्कन्दपुराण मे उल्लेख है –

अष्टादश पुराणेषु दशभि गीयते शिव ।

चतुर्थी भगवान ब्रह्मा द्वाभ्या देवी तथा हरि ।। [1]

दशभि गीयते शिव – शैव पुराणो की सख्या 10 है।

चतुर्थी भगवान ब्रह्मा – ब्राह्म पुराण चार हैं।

द्वाभ्या देवी – शाक्त पुराण दो है।

तथा हरि – वैष्णव पुराण दो है।

किन्तु स्कन्द पुराण मे एक अन्य विभाजन इस रूप मे मिलता है –

शैवपुराण – 10
वैष्णव – 4
ब्राह्म – 2
अग्नि – 1
सूर्य – 1

1 स्कन्दपुराण/केदारखण्ड/अध्याय 1

इस प्रकार स्कन्द पुराण मे ही दो स्थानो पर भिन्न–भिन्न वर्गीकरण प्राप्त होता है पहले केदारखण्ड के पुराणो की विभाजन सख्या चार थी तो सभवकाण्ड मे पॉच हो गयी। इसी प्रकार पुराणो का विभाजन हम पुराणो मे उपस्थित विषय प्रधान दृष्टि से भी कर सकते है। जो निम्न है –

3 विषय प्रधान दृष्टि से विभाजन –

(क) ऐतिहासिकता की दृष्टि से – ब्रह्माण्ड, वायु।

(ख) साम्प्रदायिकता की दृष्टि से – मार्कण्डेय, लिङ्ग, वामन।

(ग) साहित्यिक दृष्टि से – नारद, गरुड, अग्नि।

(घ) तीर्थव्रत उपासना दृष्टि से – भविष्य, पद्म, स्कन्द।

(ङ) प्रक्षिप्ताश के आधार पर पुराणो का वर्गीकरण किया गया है – ब्रह्मवैवर्त्त, भागवत, ब्रह्म।

(च) पुराणो मे आमूल परिवर्तन हो गया – वाराह, कूर्म, मत्स्य।[1]

पुराणो का चौथा वर्गीकरण निम्न विषयो के आधार पर कर सकते है –

4. सृष्टि एव प्रतिसृष्टि मूलक विभाग –

(क) आधिदैविक सृष्टि – ब्रह्म, पद्म, विष्णु, वायु, नारद, भागवत्।

(ख) आधिभौतिक सृष्टि – मार्कण्डेय, अग्नि, भविष्य, ब्रह्मवैवर्त्त।

(ग) सृष्टि के अवान्तर कारण – लिङ्ग वाराह, स्कन्द, वामन, कूर्म,मत्स्यपुराण

(घ) सृष्टि विरोधी प्रतिसृष्टि – गरुड, ब्रह्माण्ड।

इस तरह कुछ पुराण आधिदैविक एव आधिभौतिक सृष्टि मानते है तो कुछ विद्वान सृष्टि के अवान्तर कारण को मानते है।[2]

पुराणो का वर्गीकरण हम श्लोक सख्या एव उनमे उपस्थित सामग्रियो के आधार पर भी कर सकते है किन्तु मुख्य वर्गीकरण के आधार उपर्युक्त ही हैं।

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ 19

2 सक्षेप मे आचार्य बदरी नाथ शुक्ल के "मार्कण्डेय पुराण एक–अध्ययन के अनुसार विभाग/पृष्ठ–9

पुराणो मे पचलक्षण –

पुराणो मे सर्ग, प्रतिसर्ग, वश, मन्वन्तर एव वशानुचरित इन पॉचो का वर्णन प्राप्त होता है जो आगे चलकर पुराणो के लक्षण ही बन गये। इन पचलक्षणो का उल्लेख हमे अनेक महापुराणो मे मिलते है –

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वशो मन्वन्तराणि च।

वशानुचरित चेति पुराण पचलक्षलणम्।। [1]

ये पॉचो विशिष्ट विषय महापुराण के है। श्री पुसालकर मानते है कि कोई भी पुराणो मे ये पॉचो लक्षण घटित नही होते और कुछ पुराणो मे उनसे अधिक विषय मिलते है।[2] डॉ0 किरफेल ने अपने ग्रन्थ "दासपुराण पचलक्षण" की भूमिका मे इसका विस्तार से वर्णन किया है।

भागवत् पुराण इन पचलक्षणो को न मानकर दशलक्षण को मानता है–

1 सर्ग 2 विसर्ग 3 वृत्ति 4 रक्षा 5 अन्तर 6 वश 7 वशानुचरित 8 सस्था 9 हेतु 10 अपाश्रय।

इस दशलक्षणो का उल्लेख एव इनका अर्थ भागवत पुराण मे मिलता है।[3]

ब्रह्मवैवर्त्त आदि पुराणो को छोडकर लगभग सभी महापुराणो ने इन पचलक्षणो का ही पालन किया हे। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण का कहना है कि महापुराण दशलक्षणो से युक्त होने चाहिये।

पॉचो लक्षणो से युक्त पुराण अर्थात् उपपुराण होते है–

"सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वशो मन्वन्तराणि च।

वशानुचरित विप्र! पुराण पचलक्षणम्।। [4]

मार्कण्डेय पुराण मे भी पॉचो लक्षणो – सर्ग–प्रतिसर्ग–वश–मन्वन्तर एव वशानुचरित का वर्णन प्राप्त है।

1 ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अध्याय 133/6

2 पुसालकर, हमारे पुराण एक समीक्षा "कल्याण" हिन्दू सस्कृति अक वर्ष 24 सख्या 1, पृष्ठ 551 सन् 1950 ई0

3 भागवत पुराण 12/7/11–19

4 ब्रह्मवैवर्त्त पुराण अध्याय 131

18 पुराणो का सामान्य परिचय –

18 महापुराणो का सामान्य परिचय निम्न है –

1 ब्रह्मपुराण –

विष्णु पुराण मे (आद्य सर्वपुराणाना पुराण ब्राह्ममुच्यते) इसको प्रथम पुराण माना गया है। यह पुराण "आदि ब्राह्म" के नाम से भी प्रसिद्ध है।[1] वायु पुराण मे इस पुराण को सातवे स्थान पर रखा गया है। लिङ्ग कूर्म तथा मार्कण्डेय पुराण मे यह प्रथम स्थान प्राप्त करता है।

ब्रह्मपुराण के सङ्कलन के सम्बन्ध मे विद्वानो के प्रतिक्रिया स्वरूप यह पुराण सभवत 10वी से 12वी शताब्दी के मध्य सङ्कलित हुआ। विल्सन ने इसे 13वी शताब्दी मे सङ्कलित पुराण स्वीकार किया है।[2]

पद्मपुराण के अनुसार यह राजसपुराण है जो कि स्वर्ग प्रदान करने वाला होता है। ब्रह्मपुराण के दो भाग है पूर्व भाग, उत्तर भाग।[3]

ब्रह्मपुराण मे लगभग 10,000 श्लोक है। ब्रह्मपुराण के प्रथम अध्याय से लेकर 175वे अध्याय तक वक्ता एव श्रोता क्रमश ब्रह्मा एव मरीचि है तथा अध्याय 176 से लेकर अन्त तक वक्ता व्यास कहे गये है।[4]

ब्रह्मपुराण मे ब्रह्मा का उल्लेख विशेषरूप से तो प्राप्त होता है किन्तु सूर्य से जगत की उत्पत्ति कारण है, यह बताकर सूर्य को ही अधिक महत्व दिया है। सूर्यवश एव सोमवश के वर्णनो के अतिरिक्त सूर्य की महिमा[5] का भी वर्णन प्राप्त होता है।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 140
2 पुराण समीक्षा पृष्ठ 54
3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 53
4 पुराण समीक्षा पृष्ठ 54
5 ब्रह्मपुराण / 128 / 33

भगवान कृष्ण के चरित्र का वर्णन लगभग 32 अध्यायो मे प्राप्त होता है।[1] ब्रह्मपुराण मे भूगोल का भी वर्णन थोडा बहुत प्राप्त होता है। महर्षि वशिष्ठ द्वारा साख्य के सिद्धातो का वर्णन लगभग 10 अध्यायो मे प्राप्त होता है।[2]

आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार ब्रह्मपुराण मे वर्णित "धर्म ही परम् पुरुषार्थ है" जिसका पुराण के अन्त मे निम्न सुन्दर श्लोक मे वर्णित किया गया है –

"धर्मे मतिर्भवतु व पुरुषोत्तमाना

स ह्येक एव परलोक गतस्य बन्धु ।

अर्था स्त्रियश्च निपुणैरपि सेव्यमाना,

नैव प्रभावमुपयन्ति न च स्थिरत्वम्।।[3]

इसके अतिरिक्त ब्रह्मपुराण मे सप्तद्वीप, सप्तलोक, नरक, शिव–पार्वती विवाह, भगवान विष्णु के अवतार एव कल्कि अवतारो आदि की कथा का वर्णन प्राप्त होता है।

2 पद्मपुराण –

हिरण्यमय पद्म से सृष्टि की उत्पत्ति होने के कारण इस पुराण का नाम पद्मपुराण पडा। नारायण की नाभि से एक पद्म की उत्पत्ति तथा उस पर आसीन ब्रह्मा जी द्वारा इस पुराण की कथा का उद्घाटन सम्बन्धी नामकरण विशेष उल्लेखनीय है।[4] पद्मपुराण विष्णु भक्ति का प्रधान पुराण है। पद्मपुराण मे लगभग 55000 श्लोक है।

18 पुराणो के क्रम मे पद्मपुराण का द्वितीय क्रम है यह पुराण सात्विक पुराण की श्रेणी मे आता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार इसके दो सस्करण उपलब्ध होते है।

1 ब्रह्मपुराण 180–212

2 , ब्रह्मपुराण 234–44

3 ब्रह्मपुराण 255/35

4 पुराण समीक्षा पृष्ठ 54

1 बगाली सस्करण

2 देवनागरी सस्करण

बगाली सस्करण तो अभी अप्रकाशित हस्तलिखित प्रतियो मे पडा है। देवनागरी सस्करण "आनन्दाश्रम सस्कृत–ग्रन्थावली" मे चार भागो मे प्रकाशित हुआ है।[1] पद्मपुराण के भूमिखण्ड मे उद्धृत निम्न श्लोक द्वारा यह ज्ञात होता है कि पद्मपुराण पाच खण्डो मे विभाजित था –

प्रथम सृष्टि खण्ड हि भूमिखण्ड द्वितीयकम्।

तृतीय स्वर्गखण्ड च पाताल तु चतुर्थकम्।।

पचम चोत्तरखण्ड सर्वपापप्रणाशनम्।[2]

1 सृष्टि खण्ड
2 भूमि खण्ड
3 स्वर्ग खण्ड
4 पाताल खण्ड
5 उत्तर खण्ड

यह पुराण पाच खण्डो मे तो विभक्त था ही, साथ ही साथ सृष्टि खण्ड के अनुसार यह पाच पर्वों मे भी विभक्त था। ये पाच पर्व निम्न है–

1 पौष्कर पर्व
2 तीर्थ पर्व
3 तृतीय पर्व
4 वशानुचरित पर्व
5 मोक्ष पर्व

इसके अतिरिक्त पद्मपुराण मे समुद्रमन्थन, मार्कण्डेय उत्पत्ति, महर्षि च्यवन कथा, रामायण कथा, विष्णु के व्रत एव नाम कीर्तन के वर्णनो के साथ–साथ अन्य महत्वपूर्ण सामग्री इस महापुराण मे उपलब्ध होती है।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 141

2 पद्मपुराण/भूमि खण्ड/125/48–49

3. विष्णुपुराण –

विष्णुपुराण वैष्णवधर्म का मूलाधार है। इसीलिये आचार्य रामानुज ने अपने "श्री भाष्य" मे इसका प्रमाण तथा उद्धरण दिया है।[1]

दार्शनिक दृष्टि से विष्णु पुराण को भागवत के बाद दूसरा स्थान प्राप्त है। आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार–"दार्शनिक महत्व की दृष्टि से यदि भागवत पुराण पुराणो की श्रेणी मे प्रथम स्थान रखता है तो विष्णु पुराण निश्चय ही द्वितीय स्थान का अधिकारी है।[2] काणे महोदय विष्णु पुराण की रचना तिथि 300ई0 से 500ई0 के मध्य स्वीकार करते हैं।[3] विष्णु पुराण मे पुराण–पचलक्षण पूर्णरूप से प्राप्त होता है। इस पुराण मे लगभग 23,000 श्लोक हैं। यह पुराण सात्विक पुराण की श्रेणी मे आता है। विष्णु पुराण खण्डो मे विभक्त न होकर अशो मे विभक्त है। इस पुराण मे 6 अश हैं। विष्णु पुराण का उत्तर खण्ड ही विष्णु धर्मोत्तर पुराण कहलाता है। इसके अतिरिक्त इस पुराण मे सृष्टि, प्रलय, वश भूगोल के वर्णनो के साथ–साथ कृष्ण जन्माष्टमी कथा, देवी स्तुति, विष्णु पूजा एव अनेक स्त्रोत का उल्लेख प्राप्त होता है। विष्णु पुराण के पचम अश मे भगवान कृष्ण की लीलाओ का अलौकिक वर्णन प्राप्त होता है।

4. वायुपुराण –

वायुपुराण के रचनाकाल के सम्बन्ध मे कहा जाता है कि बाणभट्ट ने "पुराणे वायुप्रलपितम्" इस प्रकार का वाक्य कादम्बरी मे उद्धृत किया है इससे यह प्रमाणित होता है कि वायुपुराण की रचना बाणभट्ट के पहले हो चुकी थी।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 143

2 पुराण विमर्श पृष्ठ 143

3 पुराण समीक्षा/56

काणे महोदय ने वायुपुराण की रचना तिथि 350 से 550 ई० के मध्य स्वीकार करते है।[1]

देवीभागवत मे वायुपुराण को ग्यारहवे स्थान पर रखा गया है एव स्वय वायुपुराण मे 10वे स्थान पर रखा है।

श्री हरि नारायण दुबे के अनुसार–"इनमे शिवमाहात्म्य से सम्बन्धित विविध स्थलो के आलोक मे कतिपय विद्वान इसे "शिवपुराण" की अभिधा भी देते है। मत्स्य, नारद और देवी भागवत मे इसे वायु नाम से तथा विष्णु, मार्कण्डेय, भागवत, पद्म, कूर्म, वाराह, ब्रह्मवैवर्त्त, तथा स्कन्दपुराणो मे इसे शिवपुराण की सज्ञा से सम्बोधित किया गया है।"[2]

इसमे लगभग 112 अध्याय हैं एव यह चार पादो मे विभक्त है –

1 प्रक्रियापाद

2 अनुषङ्ग पाद

3 उपोद्घातपाद

4 उपसहारपाद।

वायुपुराण पुराणो के पचलक्षणो को पूरा करते है। इस पुराण मे सृष्टि, भूगोल, ऋषियो एव तीर्थों का वर्णन, वशो का वर्णन, श्राद्ध, सगीत एव विष्णु के अवतारो आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त इस पुराण मे पाशुपत पूजा का भी वर्णन अनेक अध्यायो मे प्राप्त होता है। वायुपुराण मे प्राचीन योगशास्त्र का वर्णन भी प्राप्त होता है जो कि योगशास्त्र की विद्या जानने के लिये अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वायु पुराण मे स्थित शिवस्तुति वैदिक रुद्राध्याय के पौराणिक रूप हैं –

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ/56

2 पुराण समीक्षा पृष्ठ /56

"नम पुराण–प्रभवे, युगस्य प्रभवे नम ।

चतुर्विधस्य सर्गस्य, प्रभवेऽनन्त चक्षुषे।।

विद्याना प्रभवे चैव, विद्याना पतये नम ।

नमो व्रताना पतये, मन्त्राणा पतये नम ।।"[1]

5 भागवत् पुराण –

भागवतपुराण के नाम से दो ग्रन्थ प्राप्त होते हैं, श्रीमद्भागवत पुराण एव देवी भागवत पुराण। यह मान्यता है कि श्री मद्भागवत वैष्णव ग्रन्थ है। एव देवी भागवत पुराण शाक्त ग्रन्थ है। श्रीमद्भागवत पुराण वैष्णव भक्ति शाखा का उपजीव्य ग्रन्थ है।[2] यह पुराण सात्विक पुराण की श्रेणी मे आता है। 18 पुराणो के क्रम मे यह पाचवा पुराण है इससे लगभग 18,000 श्लोक प्राप्त होते है। पद्मपुराण भागवतपुराण के माहात्म्य पर प्रकाश डालता है भागवतपुराण पुराणो के पचलक्षणो को न मानकर दस लक्षणो का वर्णन करता है। भागवत पुराण मे भगवान विष्णु के अवतारो की चर्चा मिलती है। ये ही विभिन्न रूपो मे अवतरित होकर सृष्टि, पालन एव सहार करते हैं। ये ही अद्वैत तत्व है ये निर्गुण एव सगुण रूप मे एक ही परब्रह्म है–

अहमेवासमेवाग्रे नान्यद् यत्सदसत्परम्।

पश्चादह यदेतच्च योऽवशिष्येत सोऽस्म्यहम्।।[3]

"सृष्टि के पूर्व मै ही था – मैं केवल था, कोई क्रिया न थी। उस समय सत् अर्थात् कार्यात्मक स्थूल भाव न था, असत्–कारणात्मक सूक्ष्मभाव न था। यहॉ तक कि इनका कारणभूत प्रधान भी अन्तर्मुख होकर मुझमे लीन था। सृष्टि का यह प्रपञ्च मैं ही हूँ और प्रलय मे सब पदार्थों के लीन हो जाने पर मै ही एकमात्र अवशिष्ट रहूगा।"

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 145

2 भागवत दर्शन पृष्ठ 44

3 भागवत पुराण 2/9/32

जीव एव जगत् भगवान के रूप है, माया भी भगवान के ही रूप है, भगवान की शक्ति का नाम माया है। जिसका स्वरूप भगवान ने इस प्रकार दिया है–

ऋतेऽर्थ यत् प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि।

तद् विद्यादात्मनो माया यथा भासो यथा तम ।।[1]

" वास्तविक वस्तु के बिना भी जिसके द्वारा आत्मा मे किसी अनिर्वचनीय वस्तु की प्रतीति होती है। और जिसके द्वारा विद्यमान रहने पर भी वस्तु की प्रतीति नही होती। वही "माया" है। भागवत् पुराण का उद्देश्य है कि जीव को माया मोह से हटाकर भगवान की सच्ची भक्ति करने के लिये प्रेरित करना। भागवत् पुराण भक्ति को ही मुक्ति का साधन मानते है। भागवत भक्ति से साथ–साथ सत्सङ्गति की भी प्रेरणा देता है।

भागवत्पुराण मे भगवान विष्णु के अवतार का वर्णन, मदालसा की कथा, राम की वशावली एव भगवान कृष्ण के जन्म से लेकर महाभारत के युद्ध आदि का वर्णन बहुत विस्तार से प्राप्त होता है।

काणे महोदय भागवत्पुराण की रचना तिथि 5वी शती से लेकर 1,000ई0 के मध्य मानते है।[2]

6 नारदीयपुराण –

यह पुराण वैष्णव पुराण की श्रेणी मे आता है। 18 पुराणो के सामान्य क्रम मे छठवे स्थान पर आता है। इस पुराण मे लगभग 25,000 श्लोक प्राप्त होते है।

नारदीयपुराण दो खण्डो मे विभाजित हैं। पूर्व एव उत्तरखण्ड। इस पुराण की विशेषता यह है कि इसके प्रत्येक अध्याय के अन्त मे श्लोको की सख्या दी गयी है। नारदीयपुराण मे 18 पुराणो की सूची प्राप्त होती है। नारदीयपुराण भी भागवत्पुराण की भाति विष्णु भक्ति को ही मुक्ति का साधन बताते है। नारदीय पुराण मे वर्ण, धर्म, एव आश्रम, श्राद्ध, प्रायश्चित, पितरकर्मों के साथ–साथ दर्शन, व्याकरण छन्द, ज्योतिष आदि का वर्णन प्राप्त होता है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश के अतिरिक्त काली, हनुमान, एव भगवान के गुणो एव रूपो का वर्णन प्राप्त होता है।

1 भागवत पुराण 2/9–34

2 पुराण समीक्षा पृष्ठ 57

इसके उत्तर भाग मे (अ07–37 तक) विख्यात विष्णु भक्त राजा रुक्माङ्गद का वर्णन प्राप्त होता है।[1]

श्री हरिनारायण दुबे अनेक साक्ष्यो को प्रस्तुत करते हुये नारदीयपुराण की रचना तिथि ईसा की 10वी शती से पूर्व मानते है।[2]

7. मार्कण्डेयपुराण –

मार्कण्डेयपुराण का नामकरण मार्कण्डेय ऋषि के नाम से हुआ है जो कि मार्कण्डेयपुराण के प्रमुख वक्ता है। इस पुराण के विषय मे विशिष्ट चर्चा इस शोध प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय मे की जायेगी।

8. अग्निपुराण .–

इस पुराण के वक्ता अग्नि है इसलिये वक्ता के आधार पर इस पुराण का नाम अग्निपुराण पडा। अग्नि पुराण तामस पुराण की श्रेणी मे आता है इसमे लगभग 10500 श्लोक प्राप्त होते है। अग्निपुराण पुराणो के पाचो लक्षणो को पूरा करता है। अग्निपुराण का प्रारम्भ भगवान विष्णु के अवतारो मत्स्य, कूर्म, वाराह, नृसिह एव राम, कृष्ण आदि से होता है। इसमे दर्शन, कला, विद्या, गृहस्थ, राजधर्म आदि नाना प्रकार के विषयो का उल्लेख प्राप्त होता है।

शालग्राम पूजा[3], चतु षष्टि योगिनी प्रतिमालक्षण[4], कूपवापी–तडाग प्रतिष्ठाविधि[5], भुवनकोष[6], प्रयाग, गगा वाराणसी माहात्म्य, मन्वन्तर[7], चारो आश्रम, वर्ण–व्यवस्था का वर्णन प्राप्त होता है।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 150

2 पुराण समीक्षा पृष्ठ 58

3 अग्नि पुराण अध्याय 18

4 अग्नि पुराण अध्याय/23

5 अग्नि पुराण अध्याय/27–28

6 अग्नि पुराण अध्याय/43

7 अग्नि पुराण अध्याय/56

नाडीचक्र[1], पुरुष स्त्री लक्षण, गृहस्थ, वास्तु लक्षण[2], धनुर्वेद[3], चारो वेदो का विधान, पुराण दान माहात्म्य, वशो का वर्णन, चिकित्सा[4], छन्द, काव्य लक्षण[5], अष्टागयोग, गीतासार एव अग्निपुराण के माहात्म्य आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। अग्निपुराण "भारतीय विद्याओ का विश्वकोश" कहलाता है।

9 भविष्यपुराण :–

भविष्य मे होने वाली घटनाओ का वर्णन होने के कारण इस पुराण का नाम भविष्यपुराण पड़ा होगा किन्तु आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार–भविष्य पुराण मे होने वाली घटनाओ का वर्णन होने के कारण अनेक दुष्परिणाम यह हुआ कि समय–समय पर होने वाले विद्वानो ने इसमे अपने समय मे होने वाली घटनाओ को भी जोडना प्रारम्भ कर दिया।[6]

भविष्यपुराण, शैवपुराण की श्रेणी मे आता है इसमे लगभग 14,000 श्लोक प्राप्त होते हैं , यह पुराण पॉच पर्वों मे विभाजित है– 1 ब्राह्मपर्व 2 वैष्णवपर्व 3 शैवपर्व 4 सौरपर्व 5 प्रतिसर्गपर्व।[7] भविष्यपुराण मे सूर्य एव सूर्योपासना विधि, सूर्य का कुटुम्ब आदि का वर्णन मुख्य रूप से प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त आश्रम, वर्णव्यवस्था, दान, वट–सावित्री व्रत, होलिकोत्सव, दीपमालिकोत्सव, आल्हा–ऊदल की कथा, ईसामसीह आदि की कथा प्राप्त होती है।

1 अग्नि पुराण/82

2 अग्नि पुराण/ 99

3 अग्नि पुराण अध्याय/ 101

4 अग्नि पुराण अध्याय/126

5 अग्नि पुराण अध्याय/174

6 पुराण विमर्श पृष्ठ/ 152

7 पुराण समीक्षा पृष्ठ/ 60

10.ब्रह्मवैवर्त्त पुराण :–

ब्रह्म के विवर्त्त प्रसङ्ग को वर्णित करने के कारण इस पुराण का नाम ब्रह्मवैवर्त्त पुराण पडा।[1] यह पुराण रजप्रधान पुराण है इसमे लगभग 18,000 श्लोक प्राप्त होते हैं।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण चार खण्डो मे विभक्त है–

1 ब्रह्मखण्ड

2 प्रकृतिखण्ड

3 गणपतिखण्ड

4 कृष्णखण्ड

ब्रह्मखण्ड मे सृष्टि निरूपण, सृष्टि के प्रकार, ब्रह्मनारद सवाद, आदि का वर्णन प्राप्त होता है। द्वितीय प्रकृतिखण्ड मे देवी का चरित्र, कवच, स्तोत्र, मन्त्र, शालग्राम की पूजा एव शुभ–अशुभ आदि का वर्णन प्राप्त होता है। तृतीयगणपति खण्ड मे गणेश जी के जन्म से लेकर उनके चरित्रो आदि का वर्णन एव कुछ गुप्त स्तोत्र मन्त्र आदि का वर्णन मिलता है। चतुर्थ खण्ड कृष्ण 133 अध्यायो मे है। इसमे भगवान कृष्ण एव राधा के चरित्रो का विस्तार से वर्णन प्राप्त होता है। ब्रह्मवैवर्त्त पुराण की रचना तिथि "जोगेश चन्द्र राय" ने 8वी शती ई0 स्वीकार किया है तो हाजरा अपने अनेक मतो को प्रतिपादित करते हुये 7वी शती ई0 तक सङ्कलित होने की पुष्टि करते है। [2]

11 लिङ्ग पुराण –

शिवपुराण के अनुसार शिवलिङ्ग चरित का वर्णन करने के कारण इसका नाम लिग पुराण पडा (लिगस्य चरितोक्तत्वात् पुराण लिङ्ग मुच्यते)[3] लिग पुराण शैवपुराण की श्रेणी मे आता है, लिङ्ग पुराण अन्य पुराणो की अपेक्षा छोटा है लिङ्गपुराण की गणना 11वे क्रम पर होती है। इसमे लगभग 11,000 श्लोक प्राप्त होते हैं। इसके दो भाग हैं– पूर्वभाग एव उत्तर भाग। लिङ्गपुराण मे शिव के 28 अवतारो का वर्णन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त इस पुराण मे ओकार का रहस्य, शिवसहस्त्रनाम आदि का भी वर्णन प्राप्त होता है।

1 विवृत ब्रह्म कार्त्स्न्येन कृष्णेन यत्र शौनक
ब्रह्म –वैवर्तक तेन, प्रवदन्ति पुराविद ।। ब्रह्मवैवर्त्तपुराण /1/1/10

2 पुराण समीक्षा पृष्ठ 61

3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 61

12 वाराह पुराण –

पुराणो के क्रम मे इसका स्थान बारहवा है। ऐसी मान्यता है कि भगवान विष्णु के वाराह अवतार का वर्णन इस पुराण मे होने से इसका नाम वाराह पुराण पडा। भाषा की दृष्टि से यह पुराण अत्यन्त प्राचीन है। इसमे लगभग 24,000 श्लोक प्राप्त होते हैं। इसके दो प्रमुख सस्करण प्राप्त होते है –

1 गौडीय

2 दाक्षिणात्य।

वाराह पुराण का "मथुरा माहात्म्य" जिसमे मथुरा सम्बन्धी अत्यन्त उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है इसके अतिरिक्त दूसरा महत्वपूर्ण विषय वाराह पुराण मे उपस्थित "नाचिकेतोपाख्यान" है।

वाराह पुराण मे सृष्टि, भुवनकोश एव विष्णु के व्रतो, तीर्थों एव उपासना विधि आदि का भी वर्णन प्राप्त होता है। बलदेव उपाध्याय ने वाराह पुराण मे स्थित द्वादशी व्रत का भिन्न–भिन्न मासो मे विष्णु के अवतारो का सम्बन्ध इस प्रकार करते हैं –

मास	शुक्ल द्वादशी का नाम
अगहन	मत्स्य द्वादशी
पौष	कूर्म द्वादशी
माघ	वाराह द्वादशी
फाल्गुन	नृसिह द्वादशी
चैत्र	वामन द्वादशी
वैशाख	परशुराम द्वादशी
ज्येष्ठ	राम द्वादशी
आषाढ	कृष्ण द्वादशी
श्रावण	बुद्ध द्वादशी
भाद्रपद	कल्कि
आश्विन	पद्मनाभ द्वादशी
कार्तिक	द्वादशी [1]

1 पुराण विमर्श /154

13 स्कन्दपुराण –

स्कन्दपुराण पुराणो मे सबसे बडा है। इसमे स्कन्द द्वारा शैव तत्व का विवेचन करने के कारण इसका नाम स्कन्दपुराण पडा। स्कन्दपुराण मे लगभग 81,100 श्लोक प्राप्त होता है। स्कन्दपुराण मे 6 सहिताये प्राप्त होती है – [1]

1 सनत्कुमार सहिता

2 सूत सहिता

3 शकर सहिता

4 वैष्णव सहिता

5 ब्राह्म सहिता

6 सौर सहिता

सूत सहिता के भी चार खण्ड हैं – [2]

1 शिव माहात्म्य खण्ड

2 ज्ञानयोग खण्ड

3 मुक्ति खण्ड

4 वैभव खण्ड

वैभव खण्ड के भी दो भाग है– पूर्वभाग एव उत्तर भाग।

स्कन्दपुराण अन्य अनेक भागो मे विभाजित होते हैं।

1 स्कन्दपुराण सूत सहिता अध्याय 20 श्लोक 12

2 पुराण विमर्श पृष्ठ 155

सहिता विभाजन के अतिरिक्त स्कन्दपुराण 7 खण्डो मे भी विभाजित है ये सात खण्ड निम्न है–

1 माहेश्वर खण्ड

2 वैष्णव खण्ड

3 ब्रह्म खण्ड

4 काशी खण्ड

5 रेवा खण्ड

6 तापी खण्ड

7 प्रभास खण्ड

स्कन्दपुराण मे उज्जैन मे स्थित महाकाल की प्रतिष्ठा, पूजनविधि, काशी का प्राचीन भूगोल, प्राचीन अवन्ति देश की धार्मिक स्थिति, जगन्नाथ जी के मन्दिर एव भगवान सत्य नारायण की कथा प्राप्त होती है। काणे महोदय ने स्कन्दपुराण की रचना तिथि 7वी शती से लेकर 9वी शती के मध्य मानते है। [1]

14 वामनपुराण –

विष्णु के द्वारा वामन रूप मे अवतार लेने के कारण इस पुराण का नाम वामन पुराण पडा पुराणो के क्रम मे यह 14वा स्थान रखता है। यह पुराण छोटा है इसमे लगभग 10,000 श्लोक प्राप्त होते है। यह पुराण राजस् पुराण की श्रेणी मे आता है। इस पुराण मे मुख्य रूप से भगवान वामन के माहात्म्य एव अवतार का ही वर्णन है इसके अतिरिक्त वामन पुराण मे कर्क चतुर्थी कथा, शिव की उपासना, शिव का माहात्म्य, दुर्गा–पार्वती, गणेश का वर्णन, उमा–शिव विवाह आदि का वर्णन प्राप्त होता है। वामन पुराण की रचना तिथि 7वी–8वी शती से पूर्व मानी जा सकती है। [2] श्री हरिनारायण दुबे के अनुसार वामन पुराण के प्रचलित सस्करणो तथा विश्व भर की पुस्तकालयो मे सुरक्षित इसकी हस्तलिखित प्रतियो को सग्रहीत कर सर्व भारतीय काशिराज न्यास, दुर्ग, रामनगर वाराणसी से इसका प्रामाणिक पाठ समीक्षात्मक सस्करण 1968ई0 मे प्रकाशित किया गया है।[3]

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ 63

2 पुराण समीक्षा पृष्ठ 63

3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 63

15 कूर्म पुराण –

विष्णु भगवान द्वारा कूर्म रूप धारण करने का विशेष उल्लेख इस पुराण मे होने से इसका नाम कूर्म पुराण पडा। कूर्म पुराण मे 17,000 श्लोक प्राप्त होते है।

कूर्म पुराण दो भागो मे विभाजित है–

1 पूर्व भाग 2 उत्तर भाग।

आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार कूर्मपुराण के उपक्रम से पता चलता है कि मूलरूप से इसमे चार सहिताये थी और आजकल ब्राह्मी सहिता (6000 श्लोक) ही उपलब्ध होती हैं –

"ब्राह्मी भागवती सौरी वैष्णवी च प्रकीर्तिता।

चतस्त्र सहिता पुण्या धर्मकामार्थ मोक्षदा।।

इय तु सहिता ब्राह्मी चतुर्वेदैश्च सम्मता।

भवन्ति षट् सहस्त्राणि श्लोकानामत्र सख्यया।। 1

कूर्म पुराण मे शिव का विशेष उल्लेख प्राप्त होता है। पार्वती तपस्या, काशीमाहात्म्य, प्रयाग माहात्म्य, ईश्वर गीता, व्यास गीता आदि का उल्लेख प्राप्त होता है। ईश्वर गीता मे ध्यानयोग द्वारा शिव के साक्षात्कार का वर्णन प्राप्त होता है। 2

16.मत्स्यपुराण –

भगवान विष्णु के मत्स्य रूप मे अवतार लेने के कारण सभवत इस पुराण का नाम मत्स्य पुराण पडा होगा। मत्स्य पुराण शैव महापुराण है। इस पुराण मे 14,000 श्लोक प्राप्त होते हैं। मत्स्य पुराण मे अठारह पुराणो की सूची प्राप्त होती है। इस पुराण मे पुराणो के पाचो लक्षण प्राप्त होते हैं।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 159

2 ईश्वर गीता 1–11 अ0

मत्स्य पुराण मे ऋषियो के वश, सोम वश, ययाति राजा का वर्णन, त्रिपुरासुर की कथा, [1] तारकासुर की कथा एव नर्मदा माहात्म्य एव विभिन्न प्रकार की दान विधियो का वर्णन प्राप्त होता है। राजधर्म के वर्णन मे राजा को अपने शत्रु पर चढाई करते समय किन–किन बातो पर ध्यान रखना चाहिये इसका वर्णन हमे मत्स्यपुराण के निम्न श्लोक मे प्राप्त होता है –

"विज्ञाय राजा द्विजदेश कालो।

देव त्रिकाल च तथैव बुद्ध्वा।।

यायात् पर काल विदा मतेन।

सचिन्त्य सार्ध द्विजमन्त्रविद्भि ।। [2]

17 गरुड पुराण –

गरुड पुराण का नाम इस पुराण के श्रोता के नाम पर पडा है, भगवान विष्णु ने गरुड को इसकी कथा सुनायी थी। यह पुराण सात्विक पुराण की श्रेणी मे आता है। इस पुराण मे लगभग 19000 श्लोक प्राप्त होते है। गरुड पुराण दो खण्डो मे विभाजित है –

1 पूर्व खण्ड 2 उत्तर खण्ड।

गरुड पुराण के पूर्व खण्ड मे राजनीति, छन्द, चिकित्सा, साख्य योग के अतिरिक्त भगवान विष्णु के अवतारो का उल्लेख प्राप्त होता है। उत्तर खण्ड प्रेतकल्प कहलाता है इसमे मृतक मनुष्य के क्रिया कर्म करने की विधि एव मृतक किस प्रकार किन–किन योनियो मे पहुँचता है इसकी चर्चा प्राप्त होती है। गर्भावस्था से लेकर नरक, यममार्ग, प्रेत का स्थान, सपिण्डीकरण, वृषोत्सर्ग आदि का वर्णन प्राप्त होता है। हिन्दू समाज मे श्राद्ध के समय गरुड पुराण कथा का वाचन होता है।

1 मत्स्य पुराण 129–140

2 पुराण विमर्श 160

काणे महोदय गरुड पुराण की रचना तिथि 6वी शती से लेकर 850ई0 के मध्य मानते है एव हाजरा गरुड पुराण की रचना तिथि 7वी शती से 1100 ई0 के पूर्व मानते है।[1]

18 ब्रह्माण्ड पुराण –

ब्रह्माण्ड का उल्लेख होने के कारण इस पुराण का नाम ब्रह्माण्ड पुराण है। यह पुराण शैवपुराण की श्रेणी मे आता है एव यह राजस पुराण भी है। 18 पुराणो के क्रम मे यह सबसे अन्त मे आता है। ब्रह्माण्ड पुराण मे लगभग 12,000 श्लोक प्राप्त होते है।

वेकटेश्वर प्रेस–मुम्बई द्वारा प्रकाशित ब्रह्माण्ड पुराण चार पादो मे विभक्त है जो निम्न है –

1 प्रक्रिया पाद

2 अनुषङ्ग पाद

3 उपोद्घात् पाद

4 उपसहार पाद।

इस पुराण मे विशेष रूप से भूगोल का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। क्षत्रिय वशीय राजाओ का वर्णन, ग्रह–नक्षत्रादि का वर्णन प्राप्त होता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय ने ब्रह्माण्ड पुराण के विषय मे एक विशेष उल्लेखनीय बात बताते हैं कि "ईस्वी सन् 5वी शताब्दी मे इस पुराण को ब्राह्मण लोग जावा द्वीप ले गये थे। जहॉ उसका जावा की प्राचीन "कवि भाषा" मे अनुवाद आज भी उपलब्ध होता है।[2] इस प्रकार इस पुराण का समय बहुत ही प्राचीन सिद्ध होता है।

उप पुराण :–

पहले जो पुराणो की सख्या दी गयी है वे महापुराण के नाम से जाने जाते हैं। इन महापुराणो के अतिरिक्त कुछ उपपुराण भी लिखे गये। जिनकी सख्या 18 है। इन उपपुराणो की रचना के विषय मे यह कहा जा सकता है कि कालान्तर मे महापुराणो की रचना के बाद सम्प्रदायो के अनुसार छोटे–छोटे उपाख्यानो को जोडकर उपपुराणो की रचना हुयी होगी।

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ 66
2 पुराण विमर्श पृष्ठ 162

श्री वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार – "महापुराणो की रचना के बाद जो उसी परम्परा मे रचना हुयी वह साहित्य उपपुराण के नाम से अभिहित हुआ।" 1

आचार्य बदरीनाथ शुक्ल पुराणो को दो भागो मे विभक्त करते हैं –

1 महापुराण

2 लघुपुराण

लघुपुराण को पुन उन्होने तीन उपवर्गों मे विभाजित किया है –

(क) उपपुराण

(ख) अतिपुराण

(ग) पुराण

महापुराणो की सख्या तो अठारह ही मानते हैं किन्तु आचार्य बदरी नाथ शुक्ल उपपुराणो, अतिपुराणो एव पुराणो की भी सख्या अठारह ही मानते है, जो निम्न है –

उपपुराण –

भागवत/माहेश्वर/ब्रह्माण्ड/आदित्य/पाराशर/सौर/नन्दिकेश्वर/साम्ब/कालिका/वारूण/औशनस्/मानव/कापिल/दुर्वासस्/शिवधर्म/वृहन्नारदीय/नारसिह/सनत्कुमार उपपुराण।

अतिपुराण –

कार्तव/ऋजु/आदि/मुद्गल/पशुपति/गणेश/सौर/परानन्द/वृहद्धर्म/महाभागवत्/देवी/कल्कि/भार्गव/वशिष्ठ/कौर्म/गर्ग/चण्डी/लक्ष्मी अतिपुराण।

पुराण –

वृहद्विष्णु/शिवउत्तरखण्ड/लघु वृहन्नारदीय/मार्कण्डेय/वह्नि/भविष्योत्तर/वराह/स्कन्द/वामन/वृहद्वामन/वृहन्मत्स्य/स्वल्पमत्स्य/लघुवैवर्त्त/पचविध भविष्य पुराण। 2

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ सख्या 5

2 उक्त सूची "मार्कण्डेयपुराण एक अध्ययन" आचार्य बदरी नाथ शुक्ल के अनुसार है।

श्री शुक्ल महापुराणो के समान लघुपुराण भी शैव, शाक्त, विष्णु एव सौर धर्म से सम्बन्ध रखते है – ऐसा स्वीकार करते है।

सामान्य रूप से उपपुराण का क्रम निम्न रूप से प्राप्त होता है –

सनत्कुमार / नारसिह / स्कान्द / शिव / आश्चर्य / नारदीय / कापिल / वामन / औशनस् /

ब्रह्माण्ड / वारूण / कालिका / महेश्वर / साम्ब / सौर / पाराशर / मारीच / भार्गव /

विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार–प्राचीन वागमय के अनुसार पुराणो के सङ्कलन की प्रक्रिया निरन्तर चलती रही और विभिन्न मत वालो ने अपने पुराण को प्रधान अठारह पुराणो अथवा उपपुराणो मे सम्मिलित करने के लिये ही इन सूचियो मे बार–बार परिवर्तन किया।" [1]

पुराण और वेद :–

पुराण को पचम वेद कहा गया हैं।

पुराण पचमो वेद इति ब्रह्मानुशासनम्।

यो न वेद पुराण हि न स वेदात्र किञ्चन।। [2]

अर्थात् वेदविद्या को जानने से पहले पुराण विद्या को जानना होगा जो पुराण को नही जानता वह वेद को भी नही जान सकता। अथर्ववेद मे चारो वेदो के साथ पुराण की भी उत्पत्ति पर प्रकाश डालते हुये यह बताया गया वेद एव पुराणो का सम्बन्ध बहुत गहरा है।

ऋच सामानि छन्दासि पुराण यजुषा सह।

उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वं दिवि देवा विपश्चित।।[3]

ब्रह्माण्ड पुराण मे कहा गया है कि चारो वेद, सभी वेदाङ्ग तथा समग्र उपनिषदो का ज्ञान होते हुये भी पुराणो का ज्ञान जिस मनुष्य को नही होगा वह विद्वान नही हो सकता –

यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विज।

न चेत्पुराण सविद्यान्नैव स स्याद् विचक्षण।।[4]

1 विष्णु धर्मोत्तर पुराण मे चित्रकला विधान पृष्ठ सख्या 5
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन भूमिका पृष्ठ 3
3 अथर्ववेद 11/7/24
4 ब्रह्माण्ड पुराण अध्याय 1

इस प्रकार यह कहा जाता है कि वेदो के गूढ रहस्य को आसानी से सरल शब्दो का ज्ञान नहीं समझ सकता अत वेदो के रहस्य को जानने के लिये उसे पुराणो को अर्थात् उसके उपाङ्गो को जानना अति आवश्यक है। "वेदो की त्रिक विद्या, पुराणो की त्रिकविद्या है।"

"एत एव त्रयो देवा एत एव त्रयोऽग्नय ।

एत एव त्रयो वेदा एत एव त्रयो गुणा ।।

"तीन देव, यज्ञ की तीन अग्निया, वेदत्रयी और तीन गुण ये एक ही त्रिक विद्या के प्रतीक है। वस्तुत वेद मे जिन्हे अव्यय, अक्षर और क्षर पुरुष कहा जाता है। वे ही पुराणो मे ब्रह्मा, विष्णु और शिव नामक तीन देव है और वे ही दर्शन मे सत्व, रज, तम नामक तीन गुण है।" 1

वेद के अनेक विषय पुराणो मे अनेक स्थलो पर प्राप्त होते हैं, जैसे –

वेद	**पुराण**
छन्द विद्या	सौपर्ण उपाख्यान
हिरण्यगर्भ	ब्रह्माण्ड सृष्टि
अग्नि सोम विद्या	हरिहर मूर्ति
त्रयी विद्या	सूर्योपासना
सवत्सर चक्र	विष्णु चक्र

इसके अतिरिक्त सरस्वती स्तोत्र, रात्रि सूक्त, देवी सूक्त, सूर्य के अनेक स्तोत्र, विष्णु आख्यान, यम–यमी आदि प्रसङ्गो का मूल वेद ही है जिसका वर्णन हमे पुराणो मे प्राप्त होता है। मुख्यत यही कहा जा सकता है कि जो विषय वेदो मे सूत्र रूप से कहा गया है वही बात पुराणो मे विस्तारपूर्वक कहा गया है जिससे कि एक अल्पज्ञ व्यक्ति भी जब वेदो को पढे, तो उसे सरलता से सभी विषयों का स्मृति के आधार पर पुराणो मे पढी हुयी बातो के आधार पर, वेद का ज्ञान हो जाता है। पुराण एव वेद का प्रतिपाद्य एक ही है इस विषय पर आचार्य बदरी नाथ शुक्ल कहते है कि–

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन भूमिका पृष्ठ–2

'जो तत्व वेद का प्रतिपाद्य है वही पुराण का भी प्रतिपाद्य है। वेद का प्रतिपाद्य पुराण पुरुष परमेश्वर सच्चिदानन्द अखण्ड ब्रह्म है, और पुराण का भी प्रतिपाद्य वही है। [1]

पुराणो मे सर्वत्र कहा गया है कि –

इतिहास पुराणाभ्या वेद समुपवृहयेत्।

विभेत्यल्पश्रुताद् वेदो मामय प्रहरिष्यति।।

इसी प्रकार महाभारत मे कहा गया है कि पुराण रूपी पूर्ण चन्द्रमा के द्वारा श्रुति रुपी चन्द्रिका छिटकी हुयी है अर्थात पुराण श्रुति के अर्थ को ही विस्तार से प्रकाशित करता है –

"पुराण पूर्ण चन्द्रेण श्रुति ज्योत्सना प्रकाशिता" [2]

इस प्रकार यह निष्कर्ष निकलता है कि वेद के गम्भीर से गम्भीर रहस्य को खोलना पुराण का काम है, क्योकि पुराण, वेद की सरस और सरल व्याख्या करता है।

1 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन–प्राक्कथन पृष्ठ–2

2 महाभारत/आदिपर्व /1/86

द्वितीय अध्याय
मार्कण्डेय ऋषि एवं मार्कण्डेय पुराण

मार्कण्डेय ऋषि (मृकण्डो अपत्यम्–अण, मृकण्डु+ढक) –

मार्कण्डेय पुराण के प्रमुख वक्ता मार्कण्डेय ऋषि हैं। इनका जन्म दसवे त्रेतायुग मे हुआ।[1] यह भी एक किंविक्त्ती है कि इनका जन्म चित्रकूट मे हुआ था। मार्कण्डेय ऋषि के पिता मृकण्डु एव माता मनस्विनी थी। मत्स्य पुराण एव पार्टिजर महोदय के अनुसार मार्कण्डेय के पिता का नाम मर्क था। मार्कण्डेय नाम पिता मर्क के आधार पर रखा गया था। "मृकण्डु का पुत्र होने से इन्हे मार्कण्डेय अथवा मार्कंड यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ।[2] मार्कण्डेय पुराण मे मार्कण्डेय ऋषि के जीवन एव परिवार से सम्बन्धित प्रमाण भी पर्याप्त मात्रा मे प्राप्त होते हैं। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार – ये भृगु ऋषि के वश मे उत्पन्न हुए थे। भृगु ऋषि का विवाह दक्ष प्रजापति की कन्या ख्याति से हुआ था। इनके दो पुत्र धाता और विधाता हुए। जो देव–देव भगवान नारायण हैं, उनकी पत्नी लक्ष्मी जी हुई, और जो महात्मा मेरु की आयति और नियति नामक दो कन्या थी। वह धाता तथा विधाता की भार्या हुयी। इन दोनो के एक–एक पुत्र उत्पन्न हुआ। आयति के जो पुत्र हुआ, उसका नाम धाता ने प्राण रखा और नियति के पुत्र का नाम विधाता ने मृकण्डु रखा। मृकण्डु के पुत्र मार्कण्डेय ऋषि हुये, जो इस मार्कण्डेय पुराण के वक्ता है मार्कण्डेय ऋषि के पुत्र वेदशिरा हुए –

"देवौ धाता विधातारौ भृगो ख्यातिरसूयत,
श्रिय च देव देवस्य पत्नी नारायणस्य या,
आयतिर्नियतिश्चैव मेरो कन्ये महात्मन,
भार्ये धाताविधा त्रोस्ते तयोर्जातौ सुता वुभौ,
प्राणश्चैव मृकण्डुश्च पिता मम महायशा,
मनस्विन्यामह तस्मातपुत्रो वेदशिरा मम।।[3]

1 महाभारत अनु0 146/4

2 मत्स्य पुराण 103 – 13 – 15

3 मार्कण्डेय पुराण–49/14–17

महाभारत के अनुसार मार्कण्डेय ऋषि की पत्नी का नाम धूमोर्णा था। [1]

अमरत्व .

अन्य प्रमाणो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मार्कण्डेय ऋषि की आयु बहुत कम थी। अनेक ग्रन्थो मे इस बात का सकेत मिलता है, किन्तु मार्कण्डेय पुराण मे ऐसा कही भी उल्लेख नही है पुराण सन्दर्भ कोश के अनुसार – "सोलह साल की ही मार्कण्डेय की आयु थी।" [2]

किन्तु अन्य स्थल पर कहा गया है कि इनकी आयु छ महीने की थी। श्री सिद्धेश्वर शास्त्री के अनुसार – "पहले इन्हे केवल छ महीने की आयु प्राप्त हुई थी, किन्तु पाच महीने 24 दिन बीतने के बाद सप्तर्षियो ने दर्शन देकर इन्हे दीर्घायु प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया।[3] महाभारत के वनपर्व मे हमे मार्कण्डेय ऋषि के अमरत्व प्राप्त करने का उल्लेख प्राप्त होता है।

इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर शकर जी ने इन्हे चौदह कल्पो तक की आयु प्रदान की थी।[4] शकर जी के आशीर्वाद से ये कल्पान्त जीवी हुए। अन्य स्थलो पर भी मार्कण्डेय ऋषि के सप्त कल्पान्त जीवित रहने का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

तपस्या :–

मार्कण्डेय ऋषि ने अपनी तपस्या से साक्षात मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी। पद्म पुराण के अनुसार –

"रुद्र पाशपति स्थाणु नीलकठमुमापतिम्।

नमामि शिरसा देव कि नो मृत्यु करिष्यति।।"[5]

1 महाभारत अनु0–146–4

2 पुराण सन्दर्भ कोश पृष्ठ–203

3 प्राचीन चरित्रकोश–सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव पृष्ठ–647

4 भागवत पुराण 4/1/45

5 पद्म पुराण उत्तर खण्ड 237/75–90

अर्थात् गरुड पुराण मे भी मार्कण्डेय ऋषि की तपस्या का उल्लेख मिलता है–

'इति तेन जितो मृत्युर्मार्कण्डेयेन धीमता।

प्रसन्ने पुण्डरीकाक्षे नृसिहे नास्ति दुर्लभम्।।' 1

मार्कण्डेय ऋषि की तपस्या का उल्लेख पद्मिनी मेनन के अनुसार इस प्रकार है–

'मार्कण्डेय हिमालय मे पुष्पभद्रा नदी के किनारे तपस्या करते थे। भगवान विष्णु सन्तुष्ट हो गये, और वर मागने को कहा, मुनि ने भगवान की माया देखने की इच्छा प्रकट की। छ मन्वन्तर बीत गये। एक दिन सन्ध्या समय मुनि नदी के तट पर बैठे थे तभी प्रलयकालीन ऑधी चलने लगी, समस्त लोक समुद्र मे डूब गये। मार्कण्डेय बहुत सालो तक उस प्रलय जल मे तैरते हुए कष्ट भोगते रहे। तब प्रलय जल की लहरो के बीच एक वट पत्र पर एक अति कोमल, उज्जवल कान्ति वाले, श्यामलाग बालक को पैर के अगूठे को मुँह मे दबाये लेटे हुए देखा। बालक के पास जाने पर उनके श्वास की शक्ति से मुनि ने उनके उदर मे प्रवेश किया, वहॉ त्रैलोक्य को देखा, कुछ क्षणो बाद श्वांस की गति से बाहर आये। पहले की तरह उस एकार्ण मे वर पत्रशायी बालक को देखा। भगवान की कृपा कटाक्ष से मुनि के कष्ट दूर हो गये। भगवान का आलिगन करने के लिए पास जाने पर शिशु अप्रत्यक्ष हुए और अपने को पूर्ववत पुष्पभद्रा तट पर देखा। भगवान की माया का अनुभव हो गया। और उनकी स्तुति करने लगे। श्री पार्वती और श्री परमेश्वर ने आशीर्वाद दिया कि वे त्रिकालदर्शी ज्ञानी बनेगे।''2

यहॉ हमे तीन बाते देखने को मिली। पहली बात तो मार्कण्डेय मुनि प्रलय के प्रत्यक्षकर्ता थे, दूसरी बात कल्पान्त जीवी एव तीसरी बात स्वय भगवान के प्रत्यक्ष दृष्टा।

इनको ब्रह्मा, विष्णु, महादेव एव सप्तर्षियो ने आशीर्वाद रूप अमरत्व का वरदान दिया, एव मार्कण्डेय पुराण रचने की बात कही। आशीर्वाद स्वरूप कल्पान्त जीवी होने से कहा जाता है कि इनकी मेधा शक्ति बहुत उच्च कोटि की हो गयी।

1 गरूड पुराण 1/225/1–8

2 पुराण सन्दर्भ कोश–पद्मिनी मेनन पृष्ठ 203

मार्कण्डेय विषयक अन्य प्रमाण :–

मार्कण्डेय ऋषि से सम्बन्धित प्रमाण अनेक स्थलो पर प्राप्त होते हैं। सर्वप्रथम मार्कण्डेय ऋषि द्वारा दिये गये उपाख्यानो का विवेचन हमे महाभारत, पुराण आदि मे मिलता है।

महाभारत काल मे अनेक स्थलो पर इनकी उपस्थिति के प्रमाण मिलते हैं। इन्होने महाभारत मे युधिष्ठिर को प्रयाग का माहात्म्य सावित्री का चरित्र, भगवान राम के आदर्शों से परिचित कराया था। त्रिपुरवध की कथा, राजाओ ऋषियो के महत्वपूर्ण कथानको का उपदेश भी इन्होने दिया।

अन्य स्थल पर मार्कण्डेय :– मार्कण्डेय का नाम मार्कण्डेय पुराण के अतिरिक्त अन्य स्थलो पर भी मिलता है।

मार्कण्डेय सहिता :– "मार्कण्डेय नाम की मार्कण्डेय सहिता प्राप्त होती है।"

मार्कण्डेय स्मृति :– इनके नाम से मार्कण्डेय स्मृति प्राप्त होती है।

मार्कण्डेय स्तोत्र – मार्कण्डेय स्तोत्र भी प्राप्त होता है जिसमे सम्भवत यह कहा जा सकता है कि इसी स्तोत्र द्वारा मार्कण्डेय ने मृत्यु पर विजय पायी थी। यह स्तोत्र शिव स्तुति से सम्बन्धित है। मार्कण्डेय सहिता, स्मृति, स्तोत्र आदि प्राप्त तो होते हैं, किन्तु इस बात का कोई प्रमाण नहीं कि यह सभी ग्रन्थ पुराण रचयिता मार्कण्डेय द्वारा ही रचित थे, अथवा अन्य मार्कण्डेय नामक व्यक्ति द्वारा।

मार्कण्डेय स्थल :– यह स्थान काशी से उत्तर दिशा मे स्थित है, जो कि मार्कण्डेय नामक पुण्य स्थल के नाम से प्रसिद्ध है।

मार्कण्डेय आश्रम –

मार्कण्डेय ऋषि के आश्रम के बारे मे मार्कण्डेय पुराण हमे कुछ भी उपलब्ध नही होता, किन्तु "सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव" की "प्राचीन चरित्र कोश" मे इस आश्रम का वर्णन इस प्रकार से दिया है –

"मार्कण्डेय ऋषि का आश्रम हिमालय के उत्तर भाग मे पुष्प भद्रा नदी के तट पर चित्रा नामक शिला के पास था। वहॉ इसने अत्यन्त उग्र तपस्या की, जिससे भयभीत होकर इन्द्र ने इसकी तपस्या मे बाधा डालने का प्रयत्न किया। किन्तु इनकी तपस्या अटूट रही। अन्त मे नर–नारायणो ने प्रसन्न होकर इन पर अनुग्रह किया।"

मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित दोष –

मार्कण्डेय पुराण मे 18 प्रकार की दोषो की सख्या मात्र का उल्लेख प्राप्त होता है। मार्कण्डेय ऋषि इन 18 दोषो से रहित थे। डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल जी ने निम्न 18 दोष बताये हैं – निद्रा, तन्द्रा, भय, क्रोध, मोह, मद, उन्माद, प्रमाद, विस्मय, सदेह, लोभ, असूया, मात्सर्य, कपटता, मिथ्या, नास्तिकता, अगमदर्शिता और अशिक्षा।

मार्कण्डेय पुराण का काल :–

सभी साक्ष्यो के आधार पर विद्वानो ने मार्कण्डेय पुराण का काल गुप्त युग माना है। वाराहमिहिर का काल पाचवी शती माना जाता है। कहा जाता है कि वाराह मिहिर ने मातृका निर्माण के लिए मार्कण्डेय पुराण की मान्यता आधार रूप मे स्वीकार की थी अर्थात् वाराहमिहिर के समय से पूर्व मार्कण्डेय पुराण अपनी प्रतिष्ठा बना चुका था। मार्कण्डेय पुराण के अष्टाशीतितमध्याय (88) के नवम् मत्र का उल्लेख जोधपुर मे प्राप्त दधिमती माता के शिलालेख मे प्राप्त होता है साथ ही उस शिला लेख पर 289 स0 भी लिखा है। स0 289 को भण्डारकर गुप्त सवत् मानते हैं। इसके अतिरिक्त डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल भी इसे गुप्त कालीन पुराण सिद्ध करते हैं। उनका कहना है कि –

' मध्य एशिया की सीता (यारकन्द) नदी से लेकर दक्षिण की गोदावरी तक एव मेरु या पामीर से लेकर दक्षिण–पूर्वी समुद्र तट के मन्दराचल तक का भौगोलिक क्षितिज मार्कण्डेय के इन वर्णनो की पृष्ठभूमि मे है। गुप्तकालीन सम्राटो ने जिस भू–भाग का पुन उद्धार किया था वह भी लगभग इतना ही था। चन्द्रगुप्त द्वितीय के महरौली स्तम्भलेख मे वाल्हीक तक के प्रदेश को युद्ध मे जीत कर उसका उद्धार करने का स्पष्ट उल्लेख आया है।

श्री वत्सधारी नारायण यहॉ भागवत धर्म की प्रतीक हैं। उनकी कुक्षि का भौगोलिक विस्तार उस प्रदेश को सूचित करता है जहॉ गुप्त राजाओ के प्रभाव से भागवत धर्म की पुन स्थापना हुयी। यही उस समय की राष्ट्र और नगरो से आकीर्ण पृथ्वी थी, जो मार्कण्डेय के दृष्टि पथ मे आयी। 1

1 वासुदेव शरण अग्रवाल ("मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन") पृष्ठ–16

"इसी सन्दर्भ मे हाजरा ने अपना अलग मत प्रस्तुत किया है। उन्होने मार्कण्डेय पुराण के कुछ अध्यायो की समीक्षा के आधार पर द्वितीय शती ई0 से 550 ई0 के मध्य इसका काल निर्धारित किया।" 1 कुछ विद्वान मार्कण्डेय पुराण मे स्थित प्रमुख अश दुर्गासप्तशती को क्षेपक माना है। उनके मतानुसार मार्कण्डेय पुराण मे यह अश बाद मे जोडा गया। काणे इस अश की तिथि छठी शताब्दी मानते हैं। 2

देवी माहात्म्य अश क्षेपक माना जाता है, अत मूल मार्कण्डेय पुराण की रचना छठीं शती ई0 से पूर्व निर्धारित की जा सकती है।3 मार्कण्डेय ऋषि ने शैव वैष्णव विचार धारा के सघर्ष मे समन्वय का कार्य किया। शिव–पुराण की एकता का श्रेय मार्कण्डेय जी को जाता है।

"शैव भागवताना च वादार्थ प्रतिषेधकम्,

अस्मिन् क्षेत्रवरे पुण्ये निर्मले पुरुषोत्तमे।

शिवस्याऽऽयतन देव करोमि परम महत्,

प्रतिष्ठेय तथा तत्र तव स्थाने च शकरम्।। 4

गरुड पुराण मे इन्हे विष्णु उपासक एव पद्म पुराण मे शिव उपासक दर्शाया गया है वस्तुत यह कहा जा सकता है कि शैव–वैष्णवो के धार्मिक मतभेदो को समाप्त करने के लिए ऐसा हुआ होगा। यद्यपि उत्तर मौर्य काल मे वैष्णवो ने शैवो को अपने धर्म मे मिला लिया था। फलत हरिहर सम्प्रदाय का जन्म हुआ। मार्कण्डेय ऋषि की भूमिका इसमे उल्लेखनीय थी।

डॉ0 विष्णुदत्त राकेश के अनुसार – "उत्तर–कालीन देवताओ के हरिहर की एकता के पीछे शैव वैष्णवो के विवाह का समाधान निहित है। पतजलि ने अपने ग्रन्थ मे इसे शैव भागवत नाम दिया। गुप्त युग मे प्राप्त शिव एव विष्णु की मिली जुली मूर्ति इसी बात को प्रमाणित करती है। शैव वैष्णवो का एक दूसरे मे विलय हो गया था। एव मार्कण्डेय पुराण गुप्त कालीन है। हरिहर की मूर्ति जिसमे शरीर का आधा भाग विष्णु (हरि) का आधा भाग शिव (हर) का था। दोनो के बीच का भेद अवयवो की अपेक्षा

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ – 58
2 काणे धर्मशास्त्र का इतिहास पृष्ठ 421
3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 58
4 ब्रह्म पुराण (57 / 64–65)

उनके जटा–जूट और मुकुट तथा हाथो मे धारण किये गये आयुधो मे ही प्रकट होता है। डॉ0 पी0 एल0 गुप्ता के अनुसार – "हरिहर की एक गुप्त कालीन मूर्ति दिल्ली के राष्ट्रीय सग्रहालय मे है, जो विदिशा से प्राप्त हुई थी। इसमे शिव उर्ध्वरेतस हैं। हरिहर की एक मूर्ति इलाहाबाद सग्रहालय मे भी है। इसमे शिव का त्रिशूल और विष्णु का चक्र आयुध पुरुष के रुप मे अकित किया गया है। मुण्डेश्वरी (शाहाबाद) प्राप्त हरिहर की एक गुप्त कालीन मूर्ति पटना सग्रहालय मे है। गरुण पुराण मे विष्णु को हरिहर कहा गया है।

"स्नानसन्ध्यादिक कृत्वा कुर्याद्धरिहरार्चनम्"[1]

डॉ0 राजबली पाण्डेय के अनुसार शिव विष्णु की यह सयुक्त मूर्ति "वृषाकपि" के भी नाम से जानी जाती है।[2] विष्णु और शिव दोनो के लिए वृषाकपि का प्रयोग हरिवश पुराण मे मिलता है।

"ततो विभु प्रवर वराह रूप धृक वृषाकपि प्रसभममैक दृष्टया।"[3]

वर्तमान समय मे पटना के पास सोनपुर मे गगा और बडी गडक को हरिहर क्षेत्र कहा जाता है।

मार्कण्डेय पुराण का नामकरण :–

किसी पुराण या ग्रन्थ का नामकरण उसमे स्थित विशेषता, प्रधानता, वक्ता या कर्त्ता के आधार पर रखा जाता है। मार्कण्डेय पुराण का नामकरण वक्ता के आधार पर हुआ क्योकि इसमे प्रमुख वक्ता मार्कण्डेय ऋषि है।

18 पुराणो में मार्कण्डेय पुराण का स्थानक्रम –

अष्टादश पुराणाना से 18 पुराणो के होने की प्रामाणिकता सिद्ध होती है यह वाक्य महाभारत तथा पुराणो मे अनेक स्थानो मे मिलता है। मार्कण्डेय पुराण मे लिखा हुआ है –

"अष्टादश पुराणानि यानि प्राह पितामह।"[4]

1 गरुड पुराण (15/10)
2 हिन्दू धर्म कोश पृष्ठ–70
3 हरिवश पुराण 2/6/47
4 मार्कण्डेय पुराण – अध्याय 134/7

अब यह प्रश्न उठता है कि मार्कण्डेय पुराण को इन 18 पुराणो मे किस क्रम मे रखा गया है। विष्णु पुराण के अनुसार 18 पुराणो का क्रम निम्न है –

1 ब्रह्म 2 पद्म 3 वैष्णव 4 शैव 5 भागवत 6 नारदीय 7 मार्कण्डेय 8 आग्नेय 9 भविष्य 10 ब्रह्मवैवर्त्त 11 लैन्ग 12 वाराह 13 स्कान्द 14 वामन 15 कौर्म 16 मात्स्य 17 गारुड 18 ब्रह्माण्ड।

इस तरह विष्णु पुराण मे मार्कण्डेय पुराण को 7वे स्थान पर रखा गया है। वायु पुराण मे पुराणो की सूची मे 16 पुराणो के ही नाम उपलब्ध होते हैं –

1 मत्स्य 2 भविष्य 3 मार्कण्डेय 4 ब्रह्मवैवर्त्त 5 ब्रह्माण्ड 6 भागवत् 7 ब्रह्म 8 वामन 9 आदिक 10 अनिल वायु 11 नारदीय 12 वैनतेय गरुड 13 पद्म 14 कूर्म 15 शौकर वाराह 16 स्कान्द।

इस प्रकार वायु पुराण मे मार्कण्डेय पुराण को तीसरे स्थान पर रखा गया है।

लिग पुराण के अनुसार 18 पुराणो का क्रम –

1 ब्रह्म 2 पद्म 3 वैष्णव 4 शैव 5 भागवत् 6 भविष्य 7 नारदीय 8 मार्कण्डेय 9 आग्नेय 10 ब्रह्मवैवर्त्त 11 लिग 12 वाराह 13 वामन 14 कौर्म 15 मात्स्य 16 गारुड 17 स्कान्द 18 ब्रह्माण्ड

लिग पुराण मे मार्कण्डेय पुराण को आठवे स्थान पर रखा गया है।

कूर्म पुराण के अनुसार 18 पुराणो का क्रम –

1 ब्रह्म 2 पद्म 3 वैष्णव 4 शैव 5 भागवत् 6 भविष्य 7 नारदीय 8 मार्कण्डेय 9 आग्नेय 10 ब्रह्मवैवर्त्त 11 लैन्ग 12 वाराह 13 स्कन्द 14 वामन 15 कौर्म 16 मात्स्य 17 गारुड 18 वायवीय (ब्रह्माण्ड)

कूर्म पुराण मे भी मार्कण्डेय पुराण को आठवे स्थान पर रखा गया है।

देवी भागवत मे पुराणो का क्रम एव नाम सूत्र रूप मे लिखा है।

"मद्वय भद्वय चैव ब्रत्रय वचतुष्टयम्।

नालिगाग्नि पुराणानि कूस्क गारूणमेव च।।

2म–मत्स्य, मार्कण्डेय। 2भ–भागवत्, भविष्य। 3ब्र–ब्रह्म, ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्माण्ड। 4व–वाराह, वामन, विष्णु, वायु। अ–अग्नि। ना–नारद। प–पद्म। लि–लिग। ग–गरुड। कू–कूर्म। स्क–स्कन्द पुराण।

इस तरह देवी भागवत मे मार्कण्डेय पुराण द्वितीय स्थान पर है।

मार्कण्डेय पुराण के वक्ता : –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार मार्कण्डेय पुराण के प्रमुख वक्ता स्वय मार्कण्डेय ऋषि है। पुराणो एव वेदो को स्वय ब्रह्मा ने ऋषियो एव मुनियो को प्रदान किया था।

वेदान्सप्तर्षयस्तस्माज्जगृहुस्तस्य मानसा ।

पुराण जगृहुश्चाद्या मुनयस्तस्य मानसा ।। 1

ब्रह्मा से मानस ऋषियो ने वेद एव मुनियो ने पुराण ग्रहण किया । इस प्रकार वेद के अधिकारी ऋषिगण एव पुराणो के अधिकारी मुनि हुए। यद्यपि इस पुराण पर ऋषि मार्कण्डेय सभी का अधिकार मानते है, किन्तु वेदो एव पुराण का अधिकारी तपस्वी एव शुद्ध चरित्र वाला हो। मार्कण्डेय ऋषि ने बताया है कि इस पुराण को भृगु से च्यवन ने ऋषियो को प्रदान किया, ऋषियो ने दक्ष को एव दक्ष ने मार्कण्डेय ऋषि को प्रदान किया।

"भृगो सकाशाच्च्यवनस्तेनोक्त च द्विजन्मनाम्।

ऋषिभिश्चापि दक्षाय प्रोक्तमेतन्महात्मभि ।

दक्षेण चापि कथितमिदमासीत्तदा मम्।। 2

मार्कण्डेय ऋषि ने क्रौष्टुकि को सुनाया, इस प्रकार क्रौष्टुकि को सुनाते समय शमीक ऋषि द्वारा पोषित चार धर्म पक्षियो ने भी यह कथा सुनी। यही चारो पक्षी मार्कण्डेय ऋषि के आज्ञानुसार कालान्तर मे जैमिनि को यह कथा सुनायी। जैमिनि व्यास के शिष्य है। मार्कण्डेय पुराण के प्रमुख वक्ता तो मार्कण्डेय जी है, किन्तु हम –

'मार्कण्डेयाय मुनये यत्तेऽस्माभिरुदाहृतम्।" 3

1 मार्कण्डेय पुराण 42/23

2 मार्कण्डेय पुराण 42/24–25

3 मार्कण्डेय पुराण – 134/3

मार्कण्डेय पुराण को वक्तृ–श्रोतृ आधार पर पाच वर्गों मे बाट सकते हैं –

1 अध्याय 1 से 9 तक के वक्ता मार्कण्डेय ऋषि एव पक्षी हैं, श्रोता जैमिनि है।

2 अध्याय 10 से 41 तक के नाम मात्र वक्ता पक्षी, श्रोता जैमिनि हैं। किन्तु वास्तविक वक्ता जड सुमति है, तथा श्रोता–भार्गववशी ब्राह्मण महामति है।

3 अध्याय 42 से 77 तक के नाम मात्र वक्ता पक्षी हैं, वास्तविक वक्ता मार्कण्डेय ऋषि, श्रोता–क्रौष्टुकि हैं।

4 अध्याय 78 से 90 तक के वक्ता मेधा ऋषि, श्रोता–सुरथ राजा, समाधिवैश्य है।

5 अध्याय 91 से 133 तक वक्ता मार्कण्डेय, श्रोता क्रौष्टुकि है।

अध्याय 134 मे पुराण विश्राम एव माहात्म्य है।

श्री पार्जिटर का विचार था कि – "मार्कण्डेय और क्रौष्टुकि के सवाद स्वरूप भाग 3 और 5 पुराण का मूल अश का जिसमे भाग 1, 2, और 4 के प्रकरण जिनके वक्ता श्रोता स्वतन्त्र है। पीछे से सगृहीत करके इस पुराण को उसका वर्तमान स्वरूप प्रदान किया गया है।" 1

चार धर्म वक्ता पक्षी प्रचारक के रूप मे :–

मार्कण्डेय पुराण की कथा के प्रचार के सम्बन्ध मे अनेक आख्यान भी प्राप्त होते है। सम्भवत पृथ्वी पर इसी चार पक्षियो से मार्कण्डेय पुराण का प्रचार हुआ होगा। मार्कण्डेय पुराण की कथा सुनाने वालो मे 4 धर्म पक्षियो की मुख्य भूमिका थी। यह चारो पक्षी मनुष्य के समान बोलते थे एव आचरण करते थे। इन चारो पक्षी का नाम – पिगाक्ष, विबोध, सुपुत्र, सुमुख था। यह पक्षी दुर्लभ शास्त्र ज्ञान से युक्त विन्ध्याचल की कन्दरा मे निवास करते थे। ये विपुलस्वान ऋषि के पौत्र एव सुकृष के पुत्र थे।

एक बार इन्द्र मुनि सुकृष की तपस्या की परीक्षा के लिए एक वृद्ध पक्षी का रूप धारण कर गये और मनुष्य का मास एव रक्त भक्षण की इच्छा प्रकट की। अतिथि सत्कार ही ब्राह्मणो का श्रेष्ठ धर्म है। इस प्रकार अपने पुत्र को इस पक्षी का आतिथ्य करने की आज्ञा दी। पुत्रगण मोह एव भयवश आज्ञा

1 वासुदेव शरण अग्रवाल "मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन" पृष्ठ 19

पालन मे असमर्थ हो गये। अत पिता ने शाप दिया कि तुम्हारा पक्षी योनि मे जन्म होगा। भयभीत पुत्रो ने पिता से अनुग्रह याचना की, और स्मृति लोप न होने का वरदान प्राप्त किया। यही चारो पक्षी शरीर मोह से दूर कर्म के प्रति सवेदनशील हुए।

मार्कण्डेय पुराण की रचना स्थली –

मार्कण्डेय पुराण की रचना स्थली रेवा नदी के तट पर स्थित विन्ध्य पर्वत है। क्योकि जैमिनि के शका का समाधान 4 धर्म पक्षियो ने मार्कण्डेय पुराण की कथा सुनाकर की थी।

"श्रूयता द्विजशार्दूला कारण येन कन्दरम्।

विन्ध्यस्येहागतो रम्य रेवावारिकणोक्षितम्।। [1]

उपर्युक्त समस्त आधारो पर कहा जा सकता है कि मार्कण्डेय पुराण के रचयिता मार्कण्डेय ऋषि एक काल्पनिक व्यक्ति न होकर एक पुराण के रचयिता विद्वान आचार्य एव सप्त कल्पान्त जीवी ऋषि थे।

मार्कण्डेय पुराण का वर्ण्य विषय :–

मार्कण्डेय पुराण शैव पुराण है, किन्तु ऐसीमान्यता है कि इस पुराण का कालान्तर मे शिव एव विष्णु मे एकत्व स्थापित करने के लिए वैष्णव सस्कार कर दिया गया। इसके अतिरिक्त वर्तमान रूप मे इसमे स्थित देवी सप्तशती का अश प्राप्त होने से शाक्त पुराण की श्रेणी मे रख सकते हैं, जो कि अधिक स्तब्ध निर्णय होगा। इसकी रचना स्थली रेवा नदी के तट पर स्थित विन्ध्य पर्वत है जिस पर रहने वाले चार पक्षियो ने मार्कण्डेय पुराण की कथा जैमिनि को सुनाया था। इसमे 134 अध्याय एव 9000 श्लोक प्राप्त होते है। मार्कण्डेय पुराण मे हमे पुराणो के पाचो लक्षण, सृष्टि, प्रलय, वश आदि प्राप्त होते है। मार्कण्डेय पुराण मे हमे राजा हरिश्चन्द्र की कथा, [2] मदालसा, [3] दत्तात्रेय, अविच्छिच्चरित्र, मरुत्, नारिष्यन्त एव दम के कथानको के साथ–साथ भौगोलिक रूप रेखा का वर्णन प्राप्त होता है। ओकार का स्वरूप, [4] अष्टागयोग एव मुख्य आकर्षण दुर्गा सप्तशती का पवित्र आख्यान प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण – 4/22
2 मार्कण्डेय पुराण/ अध्याय 8
3 मार्कण्डेय पुराण/ अध्याय 18
4 मार्कण्डेय पुराण/ अध्याय 39

मार्कण्डेय पुराण का अग्रेजी मे अनुवाद पार्टिजर ने 1888 – 1905ई0 मे विव्लीथिका इण्डिया सीरीज के अन्तर्गत कलकत्ता से प्रकाशित कराया। 1

पञ्चलक्षण के आधार पर मार्कण्डेय पुराण –

'पुराणस्य पञ्चलक्षलणम्'' सामान्यत सभी पुराणो मे थोडे बहुत अन्तर के साथ पुराण पॉचो लक्षणो से युक्त प्राप्त होते हैं। मार्कण्डेय पुराण मे भी पॉचो लक्षण प्राप्त होते है।

सर्ग अर्थात् सृष्टि –

इस पुराण मे सर्ग का वर्णन 8 अध्यायो मे पूर्ण होता है, जो कि निम्न है –

1 ब्रह्म की उत्पत्ति वर्णन – अध्याय 42
2 प्राकृत वैकृत वर्णन – अध्याय 44
3 सृष्टि प्रकरण का वर्णन – अध्याय 45
4 सृष्टि वर्णन – अध्याय 46
5 यक्ष्मानुशासन का वर्णन – अध्याय 47
6 दौ सहोत्पत्ति समापन का वर्णन – अध्याय 48
7 रुद्र सर्गाभिधान का वर्णन – अध्याय 49
8 दिवाकर स्तुति नामक वर्णन – अध्याय 101

ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ सूक्त के अनुसार सृष्टि के रचयिता ब्रह्मा जी हैं। सृष्टि से पहले कुछ नही था। विश्व के चारो ओर अन्धकार एव निर्जनता थी। प्रकृति के क्षोभ से ही सृष्टि की रचना होती है। इस सृष्टि की रचना मे सहायता करने वाले भगवान विष्णु हैं। पाद्म कल्प के प्रलय के बाद जब ब्रह्मा जी सोकर उठे तो सम्पूर्ण भुवन को शून्य देखा।2 सम्पूर्ण पृथ्वी जल मे डूबी हुई थी। विष्णु जी ने उस पृथ्वी को जल के ऊपर स्थिर किया तब ब्रह्मा जी रजोगुण का अवलम्बन करते हुए सृष्टि की रचना करते हैं। अग्नि पुराण के अनुसार – ''सर्वप्रथम हिरण्यवर्ण वाले अण्डे से ब्रह्मा जी ने जन्म लिया। उसके बाद सृष्टि की रचना हुई''

''तस्मिञ्जज्ञे स्वय ब्रह्मा'' 3

1 मार्कण्डेय पुराण/ भूमिका पृष्ठ 30
2 मार्कण्डेय पुराण 44/3
3 अग्नि पुराण 7/9(1)

पाद्म प्रलय के बाद सृष्टि की रचना ब्रह्मा ने की जिसे हम वर्तमान सृष्टि भी कहते है। ब्रह्मा द्वारा रचित नव (9) प्रकार की सृष्टि जगत का मूल कारण है।

ब्रह्मा द्वारा रचित 9 प्रकार की सृष्टि को हम तीन भागो मे बाट सकते हैं –

प्रथम – प्राकृत

द्वितीय – वैकृत

तृतीय – कौमार

प्राकृत सृष्टि तीन प्रकार की है,इनकी उत्पत्ति बुद्धि पूर्वक होती है।[1]

1 **महत् 2 ब्रह्माश 3 ऐन्द्रिय**

1 महत् – महत् सर्ग मे ब्रह्मा की उत्पत्ति होती है

2 ब्रह्माश – तन्मात्र (शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध) की उत्पत्ति द्वितीय सर्ग है।[2] इसे हम भूतसर्ग एव ब्रह्म सर्ग भी कहते है। ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण इसे ब्रह्माश कहते है।

3 ऐन्द्रिय – यह तीसरी प्रकार की प्राकृत सर्ग है इसे वैकारिक भी कहा जाता है।

वैकृत सृष्टि – वैकृत सृष्टि पॉच प्रकार की है –

1 मुख्य सर्ग 2 तिर्यक्स्त्रोत सर्ग 3 ऊर्ध्वस्त्रोत सर्ग 4 अर्वाक्स्त्रोत सर्ग 5 अनुग्रह सर्ग ।

ब्रह्मा ने सर्वप्रथम पर्वतो की रचना की अत मुख्य सर्ग को प्रथम स्थान दिया गया है।

1 मुख्य सर्ग – ब्रह्मा ने स्थावर वस्तु भूमि, पर्वत आदि की स्थापना सबसे पहले की। "यह सज्ञा या चेतना से नितान्त शून्य सृष्टि है। जिसमे आत्मतत्व ढका रहता है और न उसके भीतर प्रकाश होता है न बाहर। इसी को असज्ञ सृष्टि कहते हैं।[3]

2 तिर्यक्स्त्रोत सर्ग – यह सृष्टि तमोगुण प्रधान थी इसमे तिर्यक् योनि मे उत्पन्न पशु–पक्षी की उत्पत्ति हुयी।

3 उर्ध्वस्त्रोत सर्ग – यह सत्व प्रधान सृष्टि थी इसमे देवताओ की उत्पत्ति हुयी।

4 अर्वाक्स्त्रोत सर्ग – यह सृष्टि रज प्रधान थी इसमे ब्रह्मा ने मनुष्यो की उत्पत्ति की।

1 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 8
2 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 8
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ 125

5 अनुग्रह सर्ग – सत्व–तम् गुण मिश्रित सृष्टि थी इसे साधक सर्ग भी कहते हैं इसके चार भेद है, विपर्यय, सिद्धि, शान्ति और सृष्टि। 1 यह भावो की सृष्टि है। 2 कौमार नामक नवम सृष्टि है।

प्राकृतो वैकृतश्चैव कौमारो नवम स्मृत ।

इत्येते वै समाख्याता नव सर्गा प्रजापते ।। 3

प्राकृत और विकारी कौमार नामक सृष्टि नवम् है। इस भाति प्रजापति की नवसख्यक सृष्टि कही गयी है। कौमार सर्ग का दूसरा नाम रुद्र सर्ग है। 4 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार – यह नवी केवल प्राण सृष्टि है। इसमे स्वय रुद्र असत् प्राण रुप मे जन्म लेते हैं । इसलिये यह प्राकृत है, और पुन उनसे प्राण रूप सप्त महर्षि अथवा सनक, सनन्दन, सनातन, सनत्कुमार आदि चार चिरन्तन कुमार जन्म लेते हैं। जो विकार भूत या वैकृत कहलाते है। 5

इस प्रकार ब्रह्मा दोनो प्रकार की सृष्टि की रचना करते हैं जिसकी उत्पत्ति हुयी है तो अन्त भी निश्चित है यही सिद्धात प्रकृति का है ब्रह्मा ने धर्म के साथ अधर्म, सत्य के साथ असत्य, जीवन के साथ मृत्यु एव सृष्टि के साथ प्रलय की भी रचना की।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार त्रेतायुग मे ब्रह्मा जी के अगो से चार प्रकार की प्रजा की उत्पत्ति हुयी –

ब्रह्मा जी का अग	प्रजा	गुण	प्रकृति
जघा	असुर	तमोगुणात्मक	रात्रि
मुख	देवता	सत्वगुणात्मक	दिन
सत्वमय शरीर	पितर	सत्वगुणात्मक	सध्या
सत्वमय शरीर	मनुष्य	सत्वगुणात्मक	ज्योत्सना

1 मार्कण्डेय पुराण 44/28

2 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 125

3 मार्कण्डेय पुराण 44/36

4 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 8

5 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ 125–126

इसके अतिरिक्त अष्टविध देवयोनि, गन्धर्व, यक्ष, किन्नर, नाग एव पिशाच, अप्सरागण

मुख – छाग (बकरा)

हृदय – भेड

उदर–पार्श्व – गौ

दोनो पैर – अश्व, हस्ती, मृग आदि

रोम – फल, औषधि आदि

केश – सर्प ।

आदि की उत्पत्ति हुयी।

"गाश्चैवोदरतो ब्रह्मा पार्श्वाभ्या च विनिर्ममे।

पद्भ्याया चाश्वान्स मातगान्रासभाञ्छशकान्मृगान्।" 1

ब्रह्मा की मानसी प्रजा –

ब्रह्मा ने प्रजा की उन्नति एव वृद्धि को न देखकर उन्होने नौ मानस पुत्रो को उत्पन्न किया जो ब्रह्मा के ही अश थे। नौ मानस पुत्रो के नाम–"भृगु , पुलस्त्य पुलह क्रतुमगिरस तथा मरीचि दक्षमत्रि च वसिष्ठ चैव मानसम्।"2 भृगु, पुलस्त्यह, पुलह, क्रतु, अगिरा, मरीचि, दक्ष, अत्रि, वशिष्ठ। ब्रह्मा जी ने इन पुत्रो को पुराणो मे निश्चित कर दिया इसके पश्चात् रुद्र को उत्पन्न किया,बाद मे सकल्प एव धर्म को उत्पन्न किया किन्तु ये सब प्रजा सृष्टि मे निरपेक्ष हुये, इससे ब्रह्मा जी क्रोधित हो उठे उनके क्रोधपूर्ण तेज से एक पुरुष का जन्म हुआ जिसका आधा शरीर पुरुष आधा स्त्री था। ब्रह्मा जी इन्हे प्रजापालन सौपकर अन्तर्ध्यान हो गये। स्वायभुव मनु प्रथम पुरुष,शतरूपा उनकी पत्नी हुयी इन्हीं से दो पुत्रो प्रियव्रत एव उत्तानपाद हुये। ब्रह्मा द्वारा रची गयी मानसी प्रजा मे निरन्तर वृद्धि होती गयी ऋषि मुनि देवता के अतिरिक्त ब्रह्मा ने जनकष्ट को देने वाले दु सह जैसे दुष्ट को भी उत्पन्न किया। जन्म हुआ है तो मृत्यु भी निश्चित है इसी क्रम मे धर्म और अधर्म हुये। धर्म और अधर्म दोनो की प्रकृति एक–दूसरे से विपरीत थी। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार – "समाज मे जो धर्म और पापाचार के दो मार्ग है उन्ही के रूपक धर्म और अधर्म की पुत्र–पुत्रियो के नाम से कल्पित किये गये हैं। 3

1 मार्कण्डेय पुराण 45/26
2 मार्कण्डेय पुराण 47/5
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन / पृष्ठ 131

रुद्र सृष्टि – कौमार सर्ग ही ब्रह्मा की रुद्र सृष्टि है।

ब्रह्मा जी कल्प के अन्त मे आत्म तुल्य पुत्र की चिन्ता कर रहे थे कि रुद्र उनकी गोद मे प्रकट हुये रूदन करने लगे। रुद्र ने सात बार रूदन किया इसलिये इनको ब्रह्मा जी ने रुद्र सहित 8 नाम, 8 पत्नी, एंव 8 स्थान प्रदान किया।

पति	पत्नी	स्थान
रुद्र	सुर्वचला	सूर्य
भव	उमा	जल
शर्व	विकेशी	पृथ्वी
ईशान	स्वधा	अग्नि
पशुपति	स्वाहा	वायु
भीम	दिक्	आकाश
उग्र	दीक्षा	दीक्षित ब्राह्मण
महादेव	रोहिणी	सोम

वासुदेव शरण अग्रवाल ने प्राण तत्व को रुद्र तत्व माना है। ब्रह्मा से सृजित रुद्र एक ही हैं सात रूपो मे विभक्त करने पर भी रुद्र एक ही हैं केवल सृष्टि के लिये ब्रह्मा ने ऐसा किया। नाम शरीर आदि अवयव रूप मे प्रकट होना ही सृष्टि है। रुद्र का रुदन उनके अन्दर स्थित अग्नि को प्रकट करता है। "अग्नि जब रुद्र रूप मे प्रकट हुआ तब देवो ने कहा 'इसमे अन्न का सभरण करना चाहिये तब यह शान्त होगा।' तब उन्होने बुभुक्षित अग्नि मे अन्न रूप सोम का समरण किया और सोम पाकर अग्नि शिव बन गया। सोम के बिना अग्नि रुद्र है, सोम के साथ वही शिव है।" [1] यह प्रक्रिया हमे प्रत्येक सजीव वस्तु मे मिल जायेगी।

ब्रह्मा की तामसी सृष्टि .–

ब्रह्मा जी ने प्रजा को उत्पन्न किया तो प्रजा के सुख–दु ख की भी पूरी व्यवस्था की।धर्म को उत्पन्न किया जो धार्मिक प्रवृत्ति होने की प्रेरणा देता, अधर्म को उत्पन्न किया जो अधर्म, दुराचारी प्रवृत्ति होने की प्रेरणा देता है। किस कर्म से प्रजा को कष्ट होगा इसके क्या उपाय हैं कैसे शान्ति होगी इसकी भी शान्ति का उपाय, प्रजा को बताया।

1 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ – 132

ब्रह्मा जी मानसी सृष्टि मे स्वायभुव को उत्पन्न किया तामसी सृष्टि मे दु सह नामक एक अमानुष का उत्पन्न किया जिसकी प्रकृति ही तामसिक थी जिसका कार्य दूसरो को कष्ट देना। अधर्म एव अलक्ष्मी के 14 पुत्र हुए। 11 पुत्र मनुष्य के विनाश के समय उनकी इन्द्रियो मे रहते हैं, 12वा पुत्र अहकार मे रहता है । 13 वा पुत्र मनुष्य के बुद्धि मे रहता है और 14 वा पुत्र दु सह हुआ। ब्रह्मा ने दु सह के रहने का स्थान, बल, एव पुष्टि का स्थान निश्चित किया –

"तवाश्रयो गृह पुसा जनश्चाधार्मिको बलम्।

पुष्टिर्नित्य क्रियाहान्या भवान्वत्स गमिष्यति।। 1

सस्कारहीन अन्न, कच्चा अन्न, रजस्वला द्वारा छुआ अन्न, दक्षिण मुख की ओर किया जाने वाला भोजन, फूक मारकर ठडा किया हुआ पदार्थ, बिना जल के पवित्र की हुयी वस्तु, वृथा उपवास, जो स्त्री मे सदा आसक्त रहता है एव ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि द्वारा किये जाने वाले वृथा कार्य ब्रह्मा जी ने दु सह के अधीन कर दिये। इसके अतिरिक्त ब्रह्मा जी ने दु सह को अन्य पवित्र स्थलो पर न रहने का आदेश दिया जैसे सस्कृत भोजन करने वाले, गुरु, वृद्ध एव ब्राह्मण का आदर करने वाले, मर्म भेद उच्चारण न करने वाले व्यक्ति के पास सत्य भाषी, क्षमाशील, अहिसक व्यक्तियो से दूर रहने का आदेश दिया।

मार्कण्डेय पुराण मे दु सह वर्णन लगभग 54 श्लोको मे मिलता है। किन्तु हम दूसरे पक्ष पर नजर डालते है तो देखते है कि ब्रह्मा जी ने उचित–अनुचित का ज्ञान कराते हुये भोग और मोक्ष का मार्ग बताया। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र को कैसे कर्म करना चाहिये. घर कैसे होना चाहिये, कैसे सामान रखे। किस वस्तु को रखे किसका त्याग करे। भोजन का सम्मान करे। दान किससे ले, किसको दे। शिष्टाचार से रहे। हवन आदि कैसे करे। गृहस्थ के लिये क्या अच्छा है, क्या बुरा। श्रेष्ठ–अश्रेष्ठ का ज्ञान ब्रह्मा जी ने दु सह को माध्यम बनाकर मनुष्य को कराया।

1 मार्कण्डेय पुराण 47/43

तामसी सृष्टि से उत्पन्न नर–नारी –

दु सह सन्तति से होने वाले जनकष्ट एव उपाय – दु सह से हमे उचित–अनुचित का ज्ञान प्राप्त होता है किन्तु दु सह के पुत्र–पुत्री मनुष्य को किस प्रकार हानि पहुँचाते है इसका वर्णन हमे निम्न रूप मे प्राप्त होता है – **दु:सह पुत्र –** दु सह पुत्र दन्ताकृष्टि, तथोक्ति, परिवर्त्तक आदि है। **दन्ताकृष्टि –** दन्ताकृष्टि के साथ इनके पिता दु सह भी रहते हैं ये नवजात बच्चो के दातो को किडकिडाते है।

"दन्ताकृष्टि प्रसूताना बालाना दशनस्थित ।

करोति दन्तसघर्ष चिकीर्षुर्दु सहागमम् ।। 1

इसके शान्ति के उपाय के लिये ब्रह्मा जी ने कहा कि बच्चो को यत्र एव रेशमी वस्त्र आदि पहनाना चाहिये।
तथोक्ति – दु सह का द्वितीय पुत्र "तथोक्ति" था। इसी के कहने पर "यही हो" मनुष्य के शुभ–अशुभ विषयो मे नियुक्ति होती है। इसकी शान्ति के लिये भगवान एव कुलदेवता आदि का कीर्तन करना चाहिये।

परिवर्त्तक – दु सह का तृतीय पुत्र गर्भस्थापन का कार्य करते हैं, ये किसी बात को दूसरे (गलत) तरीके से कहलवाता है पेट मे रह रहे गर्भ को दूसरे गर्भ मे , दूसरे के गर्भ को तीसरे के गर्भ मे स्थापन का कार्य करते है। इसकी शान्ति के लिये सफेद सरसो बिखेरनी चाहिये।

इसी प्रकार अन्य दु सह कुमार अगध्रुक, शकुनी, गण्डान्तरति, गर्भहा, सस्यहा भी मनुष्य, पशु–पक्षी, स्त्री के गर्भ एव अन्य आदि की हानि पहुँचाते हैं किन्तु ब्रह्मा जी ने भी इसके उपायो का भी वर्णन किया है।

दु सह पुत्री – जैसे दु सह के पुत्र मनुष्यो को कष्ट देने वाले हुये उसी प्रकार दु सह की 8 पुत्री भी मनुष्य की प्रत्येक अपवित्र स्थिति मे कष्टदायक साबित हुयी। पति–पत्नी मे विवाद, द्रव्यादि का हरण, स्मृति का हरण, एव मनुष्यो को दारुण कष्ट देने वाली हुयी। स्वयहारिका कन्या की शान्ति के लिये ब्रह्मा जी ने कहा कि घर मे एक स्त्री,दो मोर का चित्र बनवाना चाहिये जो घिसे न हमेशा चमकता रहे।

1 मार्कण्डेय पुराण 48/8

"कुर्याच्छिखण्डिनोर्द्वन्द रक्षार्थं कृत्रिमा स्त्रियम्।

रक्षाश्चैव गृहे लेख्या वर्ज्या चोच्छिष्टता तथा।। 1

जैसे ब्रह्मा जी ने मुनष्य के होने वाले रोग उसका इलाज बताया स्मृति का नाश होने पर रमणीक स्थान का सेवन करे। ऐसा आजकल डॉक्टर लोग भी इसी तरह के परामर्श दिया करते है।

नियोजिका, विरोधिनी, स्वयहारकरी, भ्रामणी, ऋतुहारिका, स्मृतिहरा, बीजहरा, विद्वेषिणी ये तो दु सह की 8 पुत्रिया थी। इसके अतिरिक्त दु सह का पूरा वश ही मनुष्य के चारो ओर पूरे वातावरण को दूषित करने वाले थे। उनमे विरूप, विकृत, पिशुन, शकुनि, क्षुद्रक, ग्राहक, विक्रम, काकजघ, लीका आदि थे। जातहारिणी नामक कन्या बालक का हरण करने वाली है इसीलिये इसका नाम जातहारिणी है। "जातहारिणी का उल्लेख आयुर्वेद के ग्रन्थ काश्यप सहिता के रेवती कल्प मे भी विस्तार से आता है। इसे ही बौद्धो मे हारीता देवी के नाम से पूजा जाता था। वह राजगृह की एक नरभक्षिका देवी थी। पीछे बुद्ध ने उसका नैतिक उद्धार किया वह बच्चो की रक्षा करने वाली देवी बन गयी। 2

ब्रह्मा जी की इस तामसी सृष्टि का उद्देश्य उचित–अनुचित, श्रेष्ठ–अश्रेष्ठ का ज्ञान कराना नियम सयम से रहना मितव्ययी होना आदि था। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार "ये सब नैतिक सामाजिक और भौतिक दोषो और रोगो की सज्ञाये हैं।"

प्रतिसर्ग –

प्रतिसर्ग अर्थात् प्रलय। मार्कण्डेय पुराण मे प्रलय को "प्रतिसञ्चर" एव लय–प्रलय शब्द से सम्बोधित किया गया है। प्राचीन परिभाषा के अनुसार सृष्टि को सञ्चर और लय को प्रतिसञ्चर कहते थे। केन्द्र से परिधि की ओर गति करना या विकास सञ्चर है और परिधि से केन्द्र की ओर लौटना या सकोच को प्रतिसञ्चर कहा जाता है।3 मार्कण्डेय पुराण मे प्रतिसर्ग का वर्णन 43 वे अध्याय मे प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 48/37

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ / 131

3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ – 123

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार –

ब्रह्मा द्वारा रचित सम्पूर्ण सृष्टि शिवस्वरूप तमोगुण का अवलम्बन करते हुए प्रलय मे समाहित होता है। 1 प्रलय के समय सत्व एव तमोगुण ही विद्यमान रहते हैं रजोगुण का सत्व एव तमोगुण मे समावेश हो जाता है। प्रलय प्रत्येक कल्प के अन्त मे होता है। पाद्म कल्प का प्रलय बीत चुका है। दूसरा प्रलय वाराह कल्प मे होगा। ब्रह्मा का एक सौ वर्ष का पर और पचास वर्ष का एक परार्द्ध होता है। 2 ब्रह्मा रचित सृष्टि का प्रलय चार प्रकार से होता है –

1 नित्य 2 नैमित्तिक 3 प्राकृत 4 आत्यन्तिक।

1 **नित्य प्रलय** – नित्य प्रलय प्रतिदिन होता है। जगत मे उत्पन्न पदार्थों का जो सहजत क्षय अथवा नाश होता रहता है। उसे नित्य प्रलय कहते है। 3 जैसे – रात्रि मे सुषुप्ति अवस्था। वासुदेव शरण अग्रवाल कहते है कि ब्रह्मा के सौ वर्षों के अन्त मे जो प्रलय होता है उसे नित्य प्रलय कहते हैं।4

नैमित्तिक प्रलय – ब्रह्मा की जब रात्रि होती है तब भू, भूव, स्व इन तीनो लोको का नाश हो जाता है। इसे ही नैमित्तिक प्रलय कहते हैं। इसे आशिक प्रलय भी कहते है। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार – नैमित्तिक प्रलय भू, भूव, स्व इन्ही तीनो लोको का होता है। मर्हलोक, जनलोक, तपोलोक और सत्यलोक मे चार लोको का लय नही होता है। 5

नैमित्तिक प्रलय दो प्रकार के होते हैं – 1 आशिक प्रलय 2 पूर्ण प्रलय। 6

नैमित्तिक प्रलय की अवधि एक सहस्त्र चतुर्युगी होती है। एक सहस्त्र चतुर्युगी ब्रह्मा की एक रात्रि होती है।

1 मार्कण्डेय पुराण 43/ 14
2 मार्कण्डेय पुराण 43/ 42–44
3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 74
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ – 125 ।
5 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ 125
6 पुराण समीक्षा पृष्ठ 74

प्राकृत प्रलय –

जब सम्पूर्ण विश्व प्रकृति मे लीन होती है उसी को प्राकृत प्रलय कहते हैं। 1 प्राकृत प्रलय की अवधि भी ब्रह्मा की एक रात्रि के बराबर होती है। प्राकृत प्रलय के समय प्रकृति और पुरुष समान भाव से निष्क्रिय होकर विद्यमान रहते हैं। सत्व, रज एव तम से तीनो गुण समान रूप से एक दूसरे मे मिले रहते है। जिस प्रकार तिल मे तेल, दूध मे घृत समभाव से रहता है। 2

आत्यन्तिक प्रलय –

ब्रह्म ज्ञान प्राप्त होने पर जब योगीजन ब्रह्मलीन हो जाते हैं उसे आत्यन्तिक प्रलय कहते हैं।3 इस प्रकार प्रत्येक प्रलय जब ब्रह्मा की रात्रि होती है तब ही होता है। प्रलय की अवधि भी ब्रह्मा की एक रात्रि के बराबर होती है। प्रलय के पश्चात् पुन सृष्टि का क्रम प्रारम्भ होता है।

मन्वन्तर –

एक मनु के जन्म से लेकर मृत्यु तक की अवधि को मन्वन्तर कहते हैं। जो समस्त पृथ्वी अपने अधीन करके उस पर स्वतन्त्रपूर्वक राज्य करता है, उसे मनु कहते हैं। तथा उसके पुत्र–पौत्र से चलने वाले शासन की अवधि को मन्वन्तर कहा जाता है। प्रत्येक मन्वन्तर मे एक विशिष्ट राजा होता है उसी के नाम से वह मन्वन्तर प्रसिद्ध होता है। जैसे प्रथम मन्वन्तर के राजा स्वायभुव मनु हुये इन्हीं के नाम से स्वायभुव मन्वन्तर हुआ। मनुष्य के एक मन्वन्तर मे तीस करोड सडसठ लाख बीस हजार वर्ष होते है।4 मन्वन्तरो की सख्या 14 है। प्रत्येक मन्वन्तर के राजा,ऋषि, देवता आदि श्रवण के फल अलग–अलग हैं। भागवत् पुराण कहता है कि मन्वन्तर को निम्न छ विशेषताओ से युक्त होना चाहिए –

मन्वन्तर मनुर्देवा मनुपुत्रा सुरेश्वर।
ऋषयोऽशवताराश्च हरे षड्विधमुच्यते।। 5

1 मार्कण्डेय पुराण 43/3–4

2 मार्कण्डेय पुराण 43/6

3 पुराण समीक्षा पृष्ठ 74

4 मार्कण्डेय पुराण 50/4

5 भागवत पुराण 12/7/15

मनु , देवता , मनुपुत्र , इन्द्र, सप्तर्षि और भगवान के अशावतार इन छ विशिष्टताओ से युक्त समय को मन्वन्तर कहते हैं।[1] मार्कण्डेय पुराण मे उपस्थित 14 मन्वन्तरो को निम्न अध्यायो मे हम देख सकते है –

1 स्वायभुव मन्वन्तर अध्याय 43, 50
2 स्वरोचिष मन्वन्तर अध्याय 64
3 औत्तम मन्वन्तर अध्याय 68
4 तामस मन्वन्तर अध्याय 71
5 रैवत मन्वन्तर अध्याय 72
6 षष्ठ (चाक्षुष) मन्वन्तर अध्याय 73
7 वैवस्वत मन्वन्तर अध्याय 74, 76
8 सावर्णिक मन्वन्तर अध्याय 77
9 रौच्य मन्वन्तर अध्याय 91
10 भौत्य मन्वन्तर अध्याय 96
11 दक्ष सावर्णिक मन्वन्तर अध्याय 91
12 ब्रह्मसावर्णिक मन्वन्तर अध्याय 91
13 धर्म सावर्णिक मन्वन्तर अध्याय 91
14 रूद्र सावर्णिक मन्वन्तर अध्याय 91

वर्तमान समय मे सातवा वैवस्वत मन्वन्तर चल रहा है। अभी दक्ष सावर्णिक आदि सात मन्वन्तर बीतने बाकी हैं। मार्कण्डेय पुराण मे मन्वन्तर की कथाओ का वर्णन करने का मुख्य उद्देश्य सृष्टि की विशालता से हमे परिचित कराना और प्राचीन समय से चले आ रहे रीति–रिवाज, नीति–अनीति, धर्म–अधर्म आदि का ज्ञान कराना है। भविष्य मे होने वाले मन्वन्तर उनके अन्तर्गत आने वाले राजाओ, ऋषिओ का वर्णन मार्कण्डेय पुराण ने हमे पहले से ही अवगत कराया। यद्यपि भविष्य के सातो मन्वन्तर की कथाओ का वर्णन मार्कण्डेय जी नही करते।

1 पुराण विमर्श पृष्ठ 127

1 स्वायभुव मन्वन्तर –

सृष्टि मे ब्रह्मा ने एक पुरुष स्वयभुव एक स्त्री शतरूपा उत्पन्न किया इन दोनो के योग से प्रियव्रत और उत्तानपाद नाम के दो पुत्र हुये, उत्तानपाद के दो पुत्र ध्रुव और उत्तम हुये एव प्रियव्रत के 10 पुत्र हुये आग्नीध्र, मेधातिथि, वपुष्मान, ज्योतिष्मान, द्युतिमान, भव्य, सवन, मेधा, अग्निबाहु, और मित्र। आग्नीध्र के नव पुत्र –नाभि, किम्पुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्य, हिरण्य, कुरु, भद्राश्व, केतुमाल। नाभि अजनाभ कहलाया। नाभि के पुत्र ऋषभ, ऋषभ से भरत, भरत से ही भारतवर्ष नाम पडा। इस मन्वन्तर के सप्तर्षि – रज, गात्र, ऊर्ध्वबाहु, सबल, अनघ, सुतपा, शुक्र। यज्ञ की पत्नी दक्षिणा से बारह पुत्र पैदा हुये थे जो यामा नाम से प्रसिद्ध थे –

"यज्ञस्य दक्षिणायास्तु पुत्रा द्वादश जज्ञिरे।
यामा इति समाख्याता देवा स्वायभुवेऽन्तरे।।" [1]

2 स्वरोचिष मन्वन्तर –

स्वरोचिष मन्वन्तर के मनु द्युतिमान या स्वरोचिष को बताया है। इस मन्वन्तर के देवगण पारावत, तुषित एव विपश्चित है। सप्तर्षि ऊर्ज्जस्तम्ब, प्राण, दत्त, अलि, ऋषभ, निश्चर अर्ववीर है। चैत्र, किम्पुरुष इत्यादि सात पुत्रो के वश इस मन्वन्तर के राजवश हैं।

3 औत्तम मन्वन्तर –

राजा उत्तम के पुत्र औत्तम इस मन्वन्तर के राजा थे। इस मन्वन्तर के देवगण स्वधामा, सत्य, शिव, प्रतर्दन, वशवर्त्ती नामक है। इनके स्वामी सुशान्ति इन्द्र, सुशान्ति प्रदान करते है। इन मनु के अज, परशुचि और दिव्य ये तीन पुत्र हुये जो इस मन्वन्तर के राजवश हुये।

4 तामस मन्वन्तर –

स्वराष्ट्र राजा का पुत्र तामस हुआ। इस मन्वन्तर मे चार प्रकार के देवता सत्यगण, सुधीगण, सुरूपगण, हरिगण थे, इनके प्रत्येक गणो मे सत्ताइस देवता थे, महावीर्य शिखी सौ यज्ञ कर इन्द्र का पद प्राप्त कर इनके स्वामी हुये। ज्येतिर्धर्मा, पृथु, काव्य, चैत्र, अग्नि, बलक, पीवर यह सप्तर्षि थे। नर, क्षान्ति, शान्त, दान्त, जानु, जघा इत्यादि मनु पुत्र हुये।

1 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 15

5 रैवत –

रेवती का पुत्र होने से रैवत नाम पडा। यही रैवत मनु नाम से विख्यात हुआ। इस मन्वन्तर के देवता सुमेधा, भूपति, वैकुण्ठ, अमिताभ है। प्रत्येक गण मे 14 देवता है। राजा विभु ने सौ यज्ञ करके इन्द्र पद प्राप्त किया। हिरण्यरोमा, वेदश्री, ऊर्ध्वबाहु, वेदबाहु, सुधामा, महामुनि, पर्जन्य ये सप्तर्षि थे। बलबन्धु, महावीर्य, सुयष्टव्य और सत्यक इत्यादि रैवत के पुत्र हुये।

6 षष्ठ मन्वन्तर (चाक्षुष–मन्वन्तर) –

इस मन्वन्तर मे पाच आप्य, प्रसूत, भव्यारण्य, यूथग, अमृताशी देवगण है। मनोजव नामक इन्द्र इनके अधिपति हुये। सुमेधा, विरजा, हविष्यमान, उन्नत, मधु, अति और सहिष्णु ये सप्तर्षि हुये। ऊरु, पुरु, शतद्युम्न इत्यादि मनुगण राजा हुये।

7 वैवस्वत मन्वन्तर –

आदित्य, वसु, रुद्र, साध्य, विश्व, मरुत, भृगु, अगिरा ये आठ देवगण हैं। अत्रि, वशिष्ठ, कश्यप, गौतम, भरद्वाज, विश्वामित्र, जमदग्नि ये सात सप्तर्षि हुये। ऊर्जस्वी इन्द्र है। इक्ष्वाकु, नाभग, धृष्ट, शर्याति, नारिष्यन्त, नाभाग, दिष्ट, करूष, पृषध्र यह नौ मनु हुये।

8 सावर्णिक मन्वन्तर –

छाया सज्ञा के मर्भ से उत्पन्न वैवस्वत मनु के समान सावर्णि मनु होगे। राम, व्यास, गालव, दीप्तिमान, कृप, ऋष्यश्रृग, द्रौणि ये सप्तर्षि होगे। सुतपा, अमिताभ, मुख्य ये देवगण हैं। विरजा, अर्ववीर, निर्मोह, सत्यवाक, कृति और विष्णु इत्यादि पुत्र राजा होगे।

9 दक्ष सावर्णिक –

नवम् मनु दक्ष पुत्र सावर्ण होगे। पारा, मरीचि, भर्ग, सुधर्मा, ये तीन देवता होगे। अग्नि पुत्र षडानन कार्तिकेय अद्‌भुत नामक सहस्त्राक्ष इन्द्र होगे। मेधातिथि, वसु, सत्य, ज्योतिष्मान्, द्युतिमान्, सबल, हव्यवाहन यह सप्तर्षि होगे। धृष्टकेतु, बर्हकेतु, पञ्चहस्त, निरामय, पृथुश्रवा, अर्चिष्मान्, भूरिद्युम्न और वृहद्भय मनु राजा और राजवश होगे।

10 धीमान् ब्रह्म सावर्णि –

बुद्धिमान ब्रह्मा जी के पुत्र दसवे मनु होगे। सुख, आसीन निरुद्धादि तीन देवगण होगे। शान्ति ही इस समय के इन्द्र होगे। आपोमूर्ति, हविष्यमान, सुकृत, सत्य, नाभाग, अप्रतिम, वशिष्ठ ये सप्तर्षि होगे। दशम मनु के पुत्र सुक्षेत्र, उत्तमौजा, भूरिषेण, वीर्यवान, शतानीक, वृषभ, अनमित्र, जयद्रथ भूरिद्युम्न और सुपर्वा होगे।

11 धर्म सावर्णि –

धर्म के पुत्र सावर्णि ग्यारहवे मनु होगे। [1] इसके तीन देवतागण होगे विहगम, कामग, निर्माणपति। प्रत्येक गण मे 30 देवता होगे। "प्रसिद्ध पराक्रम वृषाख्य उनके इन्द्र होगे।" [2] इस मन्वन्तर के सप्तर्षि हविष्यमान, वरिष्ठ, अरुणतनय, निश्वर, अनघ, महामुनि, अग्निदेव होगे। इस मन्वन्तर के भावी पुत्र और राजवश सर्वत्रग, सुशर्मा, देवानीक, पुरुद्वह, हेमधन्वा, दृढायु।

12 रुद्र सावर्णि –

"रुद्र के पुत्र सावर्णि बारहवे मनु होगे। [3] सुधर्मा, सुमना, हरित, रोहित और सुवर्ण यह पाच देवतागण होगे। प्रत्येक गण मे दश देवता होगे। 4 ऋतधामा इन्द्र इस मन्वन्तर के मुख्य देवता होगे। द्युति, तपस्वी, सुतपा, तपोमूर्ति, तपोनिधि, तपोरति, तपोधृति यह सप्तर्षि होगे। देववान, उपदेव, देवश्रेष्ठ, विदूरथ, मित्रवान, मित्रविन्द यह मनु के पुत्र होगे और राजवश होगे।

13 रौच्य –

रौच्य नामक तेरहवे मनु के मन्वन्तर मे सुधर्मा, सुकर्मा, और सुशर्मा यह देवता हैं दिवस्पति इन्द्र इस मन्वन्तर के मुख्य देवता होगे। धृतिमान, अव्यय, तत्वदर्शी, निरुत्सुक, निर्मोह, सुतपा, निष्प्रकम्प यही सप्तर्षि होगे। "चित्रसेन, विचित्र, नियति, निर्भय, दृढ, सुनेत्र, क्षत्रबुद्धि और सुव्रत यही रौच्य मनु के पुत्र होगे। [5]

1 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 23
2 मार्कण्डेय पुराण 91/19
3 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ 23
4 मार्कण्डेय पुराण 91/23
5 मार्कण्डेय पुराण 91/श्लोक 30–31

14 भौत्य मन्वन्तर :–

भूति के पुत्र भौत्य इस मन्वन्तर के राजा होगे। इस मन्वन्तर मे पाच देवतागण होगे चाक्षुष, कनिष्ठ, पवित्र, भाजिर, धारावृक ये पाच देवता है। शुचि इन्द्र इस मन्वन्तर के मुख्य देवता होगे। आग्नीध्र, अग्निबाहु, शुचि, मुक्त, माधव, शुक्र, अजित यह सप्तर्षि होगे। भौत्य मनु के पुत्र गुह, गभीर, ब्रघ्न, भरत, अनुग्रह, श्रीमानी, प्रतीर, विष्णु, सक्रमण, तेजस्वी, सुबल होगे।

मन्वन्तर श्रवण से फल – मन्वन्तर श्रवण के फल का भी वर्णन इस पुराण मे प्राप्त होता है।

स्वायभुव मन्वन्तर – धर्म

स्वरोचिष मन्वन्तर – कामना

औत्तम मन्वन्तर – धन

तामस मन्वन्तर – ज्ञान

रैवत मन्वन्तर – बुद्धि, रूपवती स्त्री

चाक्षुष मन्वन्तर – पुरुष आरोग्य लाभ

वैवस्वत मन्वन्तर – बल

सूर्य सावर्णिक – गुणवान पुत्र–पौत्र

ब्रह्म सावर्णिक – माहात्म्य

धर्म सावर्णिक – मगल

रुद्र सावर्णिक – सुमति और जय

दीक्षा सावर्णिक – मनुष्य ज्ञान मे श्रेष्ठ गुणयुक्त

रौच्य मन्वन्तर – शत्रुबल ध्वस

भौत्य मन्वन्तर – गुणयुक्त पुत्र प्राप्ति

वंश एवं राजवशानुचरित :–

मार्कण्डेय पुराण मे वश एव राजवशानुचरित अध्याय 101 दिवाकर स्तुति एव अन्य अध्यायो मे प्राप्त होता है जिसका वर्णन राजनीति अध्याय मे विस्तार से वर्णन किया गया है। मार्कण्डेय पुराण मे वश एव वशानुचरित इन दो पुराण लक्षणो का समावेश मन्वन्तर मे ही हो जाता है।

Ω

तृतीय अध्याय
मार्कण्डेय पुराण में समाज

मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित समाज :–

ब्रह्मा द्वारा रचित सृष्टि मे उत्पन्न नर–नारी से ही समाज की रूप रेखा तैयार होती है। एक समूह मे रहने वाले व्यक्ति को समाज की सज्ञा दी जाती है। समाज मे रहने वाला व्यक्ति समाज के बने हुये नियम एव कानून को मानता है क्योकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। स्मृतिकार महर्षियो ने समाज को चार भागो मे विभाजित किया है क्योकि मानव जीवन और समाज के लिये चार प्रमुख कर्त्तव्य होते हैं – विद्या, रक्षा, व्यापार, और सेवा[1]।

कार्ल मार्क्स महोदय ने यह मत प्रकट किया कि – मानव समाज मे सब तरह की प्रथाओ और रीति–रिवाजो के उत्पन्न और प्रचलित होने का मूल आधार आर्थिक व्यवस्था ही थी। जिस काल मे जीवन निर्वाह के जैसे साधन प्राप्त थे वैसे ही सामाजिक व्यवस्था भी उस समय बन गयी। [2]

मार्कण्डेय पुराण कालीन समाज वर्ण व्यवस्थाओ एव आश्रमो मे विभाजित था इनका पालन करना समाज के प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य था। सामाजिक स्थिति अच्छी थी, यहॉ तक कि प्राकृतिक आपदाये भी नही होती थी। दुर्भिक्ष, व्याधि, अकाल मृत्यु नहीं होती थी। मनुष्य धन, बल व धर्म के मद मे उन्मत्त नही होता था। [3] धर्म–अधर्म का भय व्याप्त था। वचन का अक्षरश पालन करना एव दान विकार रहित प्रसन्नचित्त होकर देना ही मार्कण्डेय पुराण कालीन सामाजिक विशेषता थी।

वर्ण व्यवस्था :–

वर्ण व्यवस्था का प्रामाणिक उल्लेख सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुष सूक्त मे प्राप्त होता है। [4] किन्तु पुरुष सूक्त मे वर्ण शब्द का प्रयोग नही प्राप्त होता अपितु ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का वर्णन मिलता है।

1 भविष्य पुराण एक अनुशीलन पृष्ठ 271

2 मार्कण्डेय पुराण / श्री राम शर्मा/ भूमिका पृष्ठ 41

3 मार्कण्डेय पुराण 7/2

4 ऋग्वेद 10/90/12

उत्तरवैदिक काल मे त्वचा के रगो के आधार पर चारो वर्णों की गणना की गयी है यथा– ब्राह्मण–शुक्ल, क्षत्रिय–कम श्वेत, वैश्य–रक्त पर आधारित, शूद्र–काला या श्याम रग के थे। 1 पुराण कालीन वर्ण व्यवस्था पूर्णत कर्मों एव सस्कारो पर आधारित थी। पुराणो के आधार पर वर्ण की उत्पत्ति एव व्यवस्था निम्न प्रकार से थी –

विष्णु पुराण के अनुसार – गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्व्यप्रवर्तयिताभूत 2 गृत्समद के पुत्र शौनक से चारो वर्ण उत्पन्न हुये। भविष्य पुराण कर्म के आधार पर वर्णों की व्यवस्था करता है। भविष्य पुराण के अनुसार– ब्रह्म पूजक को ब्राह्मण, रक्षक को क्षत्रिय, व्यापार करने वाले को वैश्य और वेद बहिष्कृत को शूद्र कहा गया है। 3

भागवत पुराण के अनुसार सृष्टि के आरम्भ मे केवल हस नाम का एक वर्ण था और सभी लोग धर्मात्मा थे। 4 मार्कण्डेय पुराण मे वर्ण व्यवस्था मनुष्य के गुण एव कर्मो पर आधारित थी अच्छे कर्मो को करने वाला ब्राह्मण, मनुष्य की रक्षा करने वाला क्षत्रिय, व्यवसाय करने वाले वैश्य एव निम्न कर्मों मे लिप्त, तीनो वर्णों की सेवा करने वाला शूद्र होता था। जन्म से कोई भी व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि नही होता था। यदि ब्राह्मण दुराचारी है तो वह शूद्र की श्रेणी मे रखा जाता था यदि शूद्र ज्ञानी एव विद्वान है तो वह ब्राह्मण की श्रेणी मे रखा जाता था। 5 क्योकि वशिष्ठ, पाराशर, शुकदेव आदि विद्वान जन्म से उत्कृष्ट नही थे किन्तु अपने कर्म से ये विद्वान ब्राह्मणो की श्रेणी मे रखे गये। गीता मे भी कर्मानुसार वर्ण व्यवस्था का वर्णन है। 6

मार्कण्डेय पुराण मे वर्ण व्यवस्था की वैदिक मान्यता के अनुसार ही 4 भागो मे मिलता है –

1 ब्राह्मण 2 क्षत्रिय 3 वैश्य 4 शूद्र

1 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ 109
2 विष्णु पुराण 4/8/6
3 भविष्य पुराण 1/44/10–11
4 भविष्य पुराण एक अनुशीलन पृष्ठ 272
5 भविष्य पुराण एक अनुशीलन पृष्ठ 274
6 गीता 4/13

ब्राह्मण :— ऋग्वेद में ब्रह्म शब्द का प्रयोग प्रार्थना या स्तुति रूप में प्रयुक्त हुआ है। [1] सम्भवतः कालान्तर में प्रार्थना या स्तुति करने वाले को ब्राह्मण कहा गया होगा। उत्तरवैदिक काल में चातुर्वर्ण्य में ब्राह्मण को प्रथम स्थान प्राप्त था। भविष्य पुराण में ब्राह्मण की परिभाषा इस प्रकार दी गयी है — जिसके माता—पिता ब्राह्मण हों जिसके गर्भाधान आदि 48 संस्कार हुये हों वही श्रेष्ठ ब्राह्मण है। मार्कण्डेय पुराण चारों वर्णों में ब्राह्मण वर्ग को प्रथम स्थान पर रखा गया है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ब्राह्मण के मुख्य तीन धर्म है दान, अध्ययन एवं यज्ञ ;पवित्र भाव से दान लेना, अध्ययन अध्यापन करना एवं शुद्धतापूर्वक नियमतः यज्ञ करना एवं कराना। यही तीनों कर्म ब्राह्मण की जीविका के भी साधन थे। [2] ब्राह्मण के छः स्वाभाविक कर्म थे। ये षड् कर्म निम्न हैं — दान देना, दान लेना, पढ़ना, पढ़ाना, यज्ञ करना, एवं यज्ञ कराना। [3] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ब्राह्मण को अश्विनी कुमारों की तुलना में अधिक गुणवान और रूपवान होना चाहिये। ब्राह्मण वेद—वेदांग में निपुण, चरित्रवान, अतिथि का स्वागत करने वाले, मृदुभाषी, पर स्त्री की इच्छा न करने वाले होने चाहिये। शास्त्र के अनुसार ब्राह्मणों को भोग की इच्छा नहीं करनी चाहिये। अन्यथा इस लोक में क्लेश एवं परलोक में विपरीत फल मिलता है। [4] ब्राह्मण को अक्रोधी, संयमी, क्षमाशील एवं तपस्वी होना चाहिये। क्षमाहीन ब्राह्मण की तपस्या वृथा होती है। क्योंकि ब्राह्मण क्षमा का आधार होता है एवं क्रोध संयम ही उसकी तपस्या है। ब्राह्मण को शान्त स्वभाव का होना चाहिये क्योंकि शान्ति से ही लोक एवं परलोक मंगलकारी होता है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ब्राह्मण का रूप देव, दैत्य, गन्धर्व, सिद्ध और पन्नग से भी उत्कृष्ट एवं अतुलनीय है ब्राह्मण में दृष्टि की गम्भीरता होनी चाहिये। [5] ब्राह्मण को नित्य नैमित्तिककर्म करना आवश्यक है अन्यथा अनिष्ट होने की आशंका होती है। नित्य नैमित्तिक कर्म दूसरे देश में ब्राह्मण को नहीं करना चाहिये। दूसरे देश में ब्राह्मण को रात्रि में न रुककर अपने घर आकर नित्य नैमित्तिक कर्म करना चाहिये।

---

1. भविष्य पुराण 2/1/5/6
2. मार्कण्डेय पुराण 25/3–4
3. वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ 110
4. मार्कण्डेय पुराण 58/70
5. मार्कण्डेय पुराण 58/39

इन विवरणो के अतिरिक्त मार्कण्डेय पुराण मे महत्वपूर्ण वर्णन अध्याय तृतीय मे मिलता है कि ब्राह्मण जब तक सत्य का प्रतिपालन करता है तब तक ही उसको ब्राह्मण कहा जाता है। मनु ने भी ब्राह्मणो की महिमा का वर्णन मनुस्मृति के पहले, दूसरे, दसवे तथा ग्यारहवे अध्याय मे प्रतिपादित किया है।[1]

2 क्षत्रिय – वर्ण व्यवस्था के क्रम मे ब्राह्मण के बाद क्षत्रिय का स्थान आता है। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त मे क्षत्रिय के लिये "क्षत्र राजन्य" यह शब्द प्राप्त होता है।[2] ब्रह्मसूत्र मे क्षत्रिय की व्युत्पत्ति पर विस्तार से प्रकाश डाला गया है।[3] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार क्षत्रियो के तीन कर्म क्षत्रियो के कर्तव्य के रूप मे थे। दान देना, यज्ञ करना, अध्ययन करना, क्षत्रियो की जीविका के दो कर्म थे – 1 पृथ्वी पालन 2 शस्त्र चलाना।[4] क्षत्रिय प्रधान रूप से राजा का पद ग्रहण करते थे। प्रजा पालन एव रक्षा करना इनका मुख्य धर्म था। शत्रुओ का नाश एव मित्र का उपकार करना ही इनकी विशेषता थी। पर्व एव श्राद्ध के दिन ब्राह्मणो को भोजन कराना एव धर्म सचय करना ही मुख्य धर्म था। मार्कण्डेय पुराण मे ऐसा निर्देश प्राप्त होता है कि क्षत्रिय काम, क्रोध आदि छ शत्रुओ से विमुख रहे। यश की प्राप्ति मे सलग्न रहे। माता–पिता एव गुरु की आज्ञा का पालन करे। परहित की इच्छा रखे। पितरो को कव्य द्वारा तृप्त करे। भविष्य पुराण ने सर्पों मे भी क्षत्रिय जाति मानी गयी है। लाल वर्ण के सर्पों को क्षत्रिय सर्प कहा जाता है।[5] किन्तु मार्कण्डेय पुराण मे क्षत्रिय सर्पों के विषय मे कोई वर्णन नहीं प्राप्त होता।

3 वैश्य – ऋग्वेद के पुरुष सूक्त मे विश शब्द प्रयुक्त हुआ है किन्तु जन या आर्यजन अर्थ मे विश शब्द का प्रयोग किया गया है, वैश्य अर्थ मे नहीं। भविष्य पुराण मे वैश्य के लिये "वैश्या वार्ताप्रवेशनात्" कहा गया है।[6] तैत्तरीय[7] शतपथ[8] ब्राह्मण मे वैश्य की व्युत्पत्ति विश शब्द से निष्पन्न बतायी गयी है।

1. भविष्य पुराण एक अनुशीलन पृष्ठ 287
2. ऋग्वेद 4/2/3
3. ब्रह्मसूत्र 1/3/35
4. मार्कण्डेय पुराण 25/5
5. भविष्य पुराण 1/36/39
6. भविष्य पुराण 1/44/10
7. तैत्तरीय ब्राह्मण 1/6/5
8. शतपथ ब्राह्मण 4/3/10

मार्कण्डेय पुराण मे वैश्य को समाज मे तृतीय स्थान प्राप्त था वैश्य की स्थिति क्षत्रिय से कुछ ही नीचे थी। इस समय वैश्यो का मुख्य तीन धर्म था। दान, अध्ययन एव यज्ञ। इनकी जीविका का मुख्य साधन पशुपालन, वाणिज्य एव खेती थी। ये लोग व्यापार के लिये देश–विदेश भ्रमण करते थे। मनुस्मृति मे भी कहा गया है कि – "उपनयन आदि सस्कार किया हुआ वैश्य विवाह करके व्यापार तथा पशुपालन मे सदा युक्त रहे। 1 वैश्यो को 'वणिज' भी सम्बोधित किया जाता था। रामायण मे इन्हे महाधना कहा गया है। 2 कहा जाता है कि गौतम बुद्ध के भक्तो मे वैश्यो की सख्या अच्छी थी।

4 **शूद्र** – शूद्र समाज मे चतुर्थ वर्ण का बोधक था। ऋग्वेद के पुरुष सूक्त मे शूद्र की उत्पत्ति ब्रह्मा के पैर से मानी गयी है। इससे यह प्रतीत होता है कि शूद्रो की स्थिति निम्न थी तीनो वर्णों की सेवा करना इनका मुख्य धर्म था। मार्कण्डेय पुराण मे शूद्र को शूद्र शब्द से ही सम्बोधित किया गया हैं। इनके मुख्य तीन कर्म थे । दान, यज्ञ एव तीनो वर्णों की सेवा करना। इनकी जीविका का साधन ब्राह्मण सेवा, पशुपालन एव क्रय–विक्रय था। इससे यह प्रतीत होता है कि शूद्रो को अध्ययन करने का अधिकार नही प्राप्त था। ये लोग तपस्या भी नहीं कर सकते थे। मनुस्मृति मे कहा गया है कि " ब्राह्मणाद्याश्रयो नित्यमुत्कृष्टा जातिमश्नुते" शुद्ध चरित्र ब्राह्मणादि की सेवा करने वाला शूद्र उच्च गति को प्राप्त कर सकता है। 3 भगवद्गीता मे भी कहा गया है कि शूद्रो को सभी वर्णों की सेवा करनी चाहिये। 4 इस प्रकार शूद्रो को वर्ण व्यवस्था की निम्न कोटि मे रखा तो गया था किन्तु इनकी स्थिति घृणास्पद नही थी। कुछ समय पश्चात् शूद्र जाति अवान्तर जातियो मे विभक्त हो गयी जिसमे नाई, धोबी, हलवाई, बढई, लोहार आदि थे।

आश्रम –

अवस्था के अनुसार मानव जीवन को चार आश्रमो मे विभाजित किया गया था। 100 वर्ष की आयु के अनुसार 25 वर्ष की अवधि का एक आश्रम था। इन आश्रमो का पालन करना प्रत्येक मानव का मुख्य धर्म था। ये चार आश्रम थे –1 ब्रह्मचर्य 2 गृहस्थ 3 वानप्रस्थ 4 सन्यास

1 मनुस्मृति 9/212
2 वाल्मीकि रामायण 1/32/3
3 मनुस्मृति 9/220
4 भगवद्गीता 18/44

ब्राह्मणो के लिये चारो आश्रमो का पालन करना आवश्यक था। राघवा नन्द, गोविन्दराज एव भतृयज्ञ आदि विद्वानो के अनुसार " ब्राह्मणजौ प्रवज्याधिकार" ब्राह्मण ही चारो आश्रम के अधिकारी हैं। 1

वामन पुराण के अनुसार – चारो आश्रम ब्राह्मण के होते है।2 क्षत्रियो के लिये सन्यास को छोडकर तीन आश्रम वैश्यो के लिये ब्रह्मचर्य एव गृहस्थ तथा शूद्रो के लिये मात्र गृहस्थाश्रम ही है।3

मार्कण्डेय पुराण मे वर्ण के अनुसार आश्रमो का वर्गीकरण नही प्राप्त होता किन्तु चतुराश्रम का वर्णन कुछ श्लोको मे प्राप्त होता है। ये चार आश्रम निम्न हैं – 1 ब्रह्मचर्य 2 गृहस्थ 3 वानप्रस्थ 4 सन्यास

1– ब्रह्मचर्य आश्रम – (ब्रह्मवेद, ब्रह्म तपो ब्रह्म ज्ञान वा तच्चरत्यर्जयति अवश्यम्–व्रते–इति वा,–सुधि–इतिवा, आवश्यका इति वा णिनि। इति ब्रह्मचारी।। ब्रह्मण वेदस्य चर्यम् भावे यत्–वैदिक तस्सम्) ब्रह्मचर्य आश्रम का विशेष वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे नहीं प्राप्त होता छिट पुट वर्णन यत्र तत्र प्राप्त होता है। ब्रह्मचारी को मद्य, मास, हिसा, अञ्जन, तैलमर्दन,गीत, वाद्य, नृत्य, काम, क्रोध, लोभ, द्यूत, निन्दा, असत्य आदि दोषो से दूर रहने की बात कही गयी है। 4 गुरु से वेदो का ज्ञान प्राप्त करके स्वाध्याय करना ब्रह्मचारी का कर्तव्य है। गुरुकी आज्ञा का पालन करते हुए ब्रह्मचारी को गुरुकी आज्ञानुसार गुरुदक्षिणा देना ही ब्रह्मचर्य की पूर्णता है।

2– गृहस्थ आश्रम .– मार्कण्डेय पुराण मे गृहस्थ आश्रम को द्वितीय स्थान पर रखा है यह मानव जीवन की दूसरी अवस्था का द्योतक है। ब्रह्मचारी शिक्षा–दीक्षा लेकर विवाह करके गृहस्थ आश्रम मे प्रवेश करता था। वाल्मीकि ने इसे भोगकाल कहा था।5 ब्रह्मचारी उसी कन्या से विवाह करे जो समान गोत्री रोगी एव विकलाङ्ग न हो एव सासारिक सुखो का भोग करे।

गृहस्थ आश्रम मे नारी को पुरुष के बराबर स्थान दिया है 'कुवलयाश्व वर्णन" अध्याय 19 मे कुण्डला द्वारा कहा गया है कि "पति को भार्या की सदा रक्षा करनी चाहिये उनका पालन करना चाहिये भार्या भर्ता की सहायिनी होने पर सम्यक प्रकार धर्म, अर्थ, काम इन तीनो की सगति होती है।

1 मनुस्मृति 6/97
2 वामन पुराण 14/100–116
3 वामन पुराण 14/117–18
4 आपस्तम्ब धर्मसूत्र – 1/2/23–36/भविष्य पुराण 1/4/146–48
5 वाल्मीकि रामायण 2/76/10

धर्मादि त्रिवर्ग भार्या मे समाहित होने के कारण पुरुष जिस प्रकार भार्या के बिना कभी धर्म अर्थ व काम लाभ करने मे समर्थ नही होता उसी प्रकार भार्या भी स्वामी के बिना धर्मादिसाधन मे समर्थ नही होता क्योकि धर्म, अर्थ और काम दोनो को सम्यक् प्रकार से आश्रम करके स्थित है।

देवता, पितृ, भृत्य और अतिथियो का पूजन न होने से यह धर्माचरण करने मे समर्थ नही होता पुरुष के अनायास लब्ध अर्थ भी अपने घर लाने पर स्त्री के न होने अथवा कुभार्या के ससर्ग से वह सम्पूर्ण ही क्षय हो प्राप्त होता है।

इस प्रकार स्त्री और पुरुष का समान भाव से महत्व बताते है। यह भी कहा गया है कि त्रिवर्ग की प्राप्ति दोनो के ससर्ग से ही होती है एक का भी अभाव होने पर या विपरीत भाव होने पर त्रिवर्ग की प्राप्ति नही होती।[1] गृहस्थ पुरुष अपने कर्तव्य को न करने से बन्धन एव कर्तव्य के करने से मोक्ष को प्राप्त होता है। जो मनुष्य गृहस्थ धर्म का अवलम्बन करता है और सभी जीवो का पोषण करता है। अपने कर्तव्यो का पालन करता है उसको वाछित लोक मिलता है। गृहस्थाश्रम का अवलम्बन पितृगण, ऋषिगण, देवगण, भूतगण, नरगण, कृमि, कीट, पतगगण, पक्षिगण और असुरगण ये सभी करते हुये जीवन–यापन करते है इसी से उनकी तृप्ति होती है क्योकि वे सब अन्न के लिये गृहस्थ के मुख को देखते है।

गृहस्थ की उपमा एक गाय से दी गयी है इस गृहस्थ रूपी धेनु सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड का आधार है यह धेनु ही ब्रह्माण्ड का कारण है सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड इस धेनु मे प्रतिष्ठित है। ऋग्वेद इस धेनु की पीठ, यजुर्वेद मध्य, सामवेद मुख और ग्रीवा इष्टापूर्त उसका सीग, साधुयुक्त रोम शान्ति और पुष्टि कर्म उसका मलमूत्र एव वर्ण और आश्रम ही इस धेनु की प्रतिष्ठा है। इस धेनु का कभी क्षय नही होता। स्वाहा, स्वधाकार, वषट्कार और हन्तकार इस धेनु के थन हैं। इनमे से देवगण स्वाहाकार ,पितृगण स्वधाकार, ऋषिगण वषट्कार और मनुष्यगण हन्तकार स्तन का पान करते रहते हैं। जो गृहस्थ इस प्रकार देवता, पितृ, ऋषि आदि की तृप्ति नही करता वह पाप का भागी होता है। और अन्धतामिस्त्र तामिस्त्र नरको की प्राप्ति होती है। गृहस्थ का कर्त्तव्य है कि स्नान द्वारा पवित्र होकर सावधान चित्त से देवता आदि को

1 मार्कण्डेय पुराण अध्याय 19

उचित समय उचित स्थल पर तर्पण, बलि, जल आदि आदरपूर्वक उत्सर्ग कार्य को सम्पन्न करे। मुहूर्त के आठवे भाग तक अतिथि की प्रतीक्षा करे –

मुहूर्तस्याष्टम भागमुदीक्ष्यो ह्यतिथिर्भवेत्। 1

मित्र एक ग्राम मे रहने वाले को अतिथि न माने। अतिथि की परिभाषा देते हुए ऋषि कहते हैं जो व्यक्ति यथार्थ रूप से भूखा हो, थका हो जिसके पास कुछ भी न हो अतिथि होता है उसका गृहस्थ स्वागत करे एव उसको अन्न जल से तृप्त करे। गृहस्थ की विशेषता यही है कि अतिथि से वेद स्वाध्याय आदि की चर्चा न करे उसे साक्षात् प्रजापति समझे एक अथवा अनेक ब्राह्मणो को भोजन करावे अन्न का अग्रभाग ब्राह्मण को दे। परिव्राजक या भिखारी ब्रह्मचारी के याचक होने पर भीख दे। बन्धु, विकल, वृद्ध, बालक आदि को भोजन करावे। अन्यथा धनवान होते हुये भी जिसकी जाति दु खित हो तो उस जाति का मनुष्य विवश होकर जो पाप करता है उसका पापाश उस धनवान को प्राप्त होता है।

श्रीमन्त ज्ञातिमासाद्य यो ज्ञातिरवसीदति।

सीदता यत्कृत तेन तत्पाप स समश्नुते।।2

इसके अतिरिक्त गृहस्थ को सदैव सदाचारी होना चाहिये। इसके विपरीत होने पर सभी कर्म अमगलजनक होते है। गृहस्थ के लिये नित्य नैमित्तिक क्रिया का पालन करना आवश्यक है जिसके अनुष्ठान से मनुष्य इस लोक और परलोक दोनो मे सुखी रहता है। गृहस्थ को त्रिवर्ग धर्म, अर्थ, काम मे प्रवृत्त होना चाहिये। गृहस्थ को अपने धन का चतुर्थ भाग धर्म के लिये, आधे भाग मे नित्य नैमित्तिक कर्म एव अपना पोषण करना चाहिये। इस पुराण मे धर्म को दो प्रकार का बताया है। गृहस्थ को ब्राह्म मुहूर्त मे उठना चाहिये। त्रिवर्ग के साथ–साथ वेद तत्वार्थ का चिन्तन करना चाहिये। गृहस्थ को सध्या करना चाहिये। उसे कटु वचन , असत्य वचन, असत् सेवा आदि का त्याग करना चाहिये। प्रात साय हवन करना , सूर्य के उदय अस्त को न देखना, ग्राम, निवास, तीर्थ, मार्ग जुता–खेत, गाय के स्थान मे मल–मूत्र का त्याग न करना,ऋतुमती स्त्री को न देखना, न वार्तालाप करना, आदि निषेध बताया है।

1 मार्कण्डेय पुराण 26/26

2 मार्कण्डेय पुराण 26/41

किसी व्यक्ति के दोषो को न कहना, अधिक नमक अधिक गरम खाना नही करना चाहिए। गौ, ब्राह्मण का अग्नि का और मस्तक का स्पर्श न करने का भी निर्देश गृहस्थ को दिया गया है। मदालसा ने गृहस्थ को सदा ममता परायण कहा है।

3– वानप्रस्थ – (वाने वनसमूहे प्रतिष्ठते–स्था + क)

वानप्रस्थ शब्द वनप्रस्थ से बना है अर्थात् वन मे जाकर दूर निवास करने वाला। इसे वैखानस आश्रम भी कहते हैं। शकराचार्य ने तीसरे आश्रम को वैखानस कहा है। [1] भविष्य पुराण कलियुग मे वानप्रस्थ के अस्तित्व को नकारता है। इसका कहना है कि कलियुग मे वानप्रस्थ आश्रम का कोई अस्तित्व नही होगा।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार मानव जीवन की तृतीय अवस्था वानप्रस्थ है। मानव को ब्रह्मचर्य एव गृहस्थ आश्रम के बाद आत्मशुद्धि के लिये वानप्रस्थ आश्रम का अवलम्बन करना चाहिये। वानप्रस्थो के कर्त्तव्यो का कथन करते हुए कहा गया है कि वानप्रस्थी को फल–मूल आदि का आहार करना चाहिये। पृथ्वी पर शयन, पितर, देवता एव अतिथि की सेवा करनी चाहिये। जरा वल्कल को धारण करना चाहिये। मौन योगाभ्यास का अवलम्बन करना चाहिये। श्रीमद्भागवत वानप्रस्थी को स्त्री रखने की आज्ञा देता है। [2] ब्रह्माण्ड पुराण मे उपस्थित कथानक मे राजा ययाति ने सपत्नीक वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण किया था। [3]

मनुस्मृति के अनुसार वानप्रस्थी को गर्मी मे पञ्चाग्नि, वर्षा मे स्थाण्डिलशायी और हेमन्त मे जल मे खडे रहने का निर्देश देते हैं। [4]

इस प्रकार वानप्रस्थ गृहीत मानव अग्नि परिग्रह का त्याग, निर्द्वन्द होकर, निष्परिग्रह, आत्मा मे आत्मा का सयोग कर एकान्तशील होकर वन मे निवास करते थे।

1 वेदान्त सूत्र भाष्य 3/4/20
2 भागवत पुराण चतुर्थस्कन्द/12–23 अध्याय
3 ब्रह्माण्ड पुराण 3/68/104
4 मनुस्मृति 6/24

4—सन्यास आश्रम — मार्कण्डेय पुराण सन्यास आश्रम को अन्तिम आश्रम मानता है। इसे चतुर्थाश्रम भी कहते है। वामन पुराण सन्यास आश्रम को ब्राह्मणो के द्वारा ही आलम्बन करने की अनुमति देते है।[1] वाल्मीकि रामायण मे सन्यास को प्रव्राज शब्द से सम्बोधित किया गया है। रघुवश[2] एव अभिज्ञान शाकुन्तलम् [3] आदि मे प्रथम तीन आश्रमो का उल्लेख प्राप्त होता है किन्तु चतुर्थाश्रम का नामोल्लेख तक नही प्राप्त होता है। महाभाष्य मे चार आश्रमो का उल्लेख होते हुए भी विवरण तीन ही आश्रमो का मिलता है। [4] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सन्यास आश्रम का मूल उद्देश्य सभी सासारिक मोह से दूर रहकर आत्मा का साक्षात्कार करना एव मोक्ष की प्राप्ति मे सलग्न होना है। सन्यास आश्रम को अवलम्बन करने वाले मानव को क्रोधरहित होते हुए इन्द्रिय सयम एव ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए भ्रमणशील रहने का उपदेश देता है।कर्म का विसर्जन, भिक्षा से प्राप्त अन्न का एक बार भोजन, आत्मज्ञान की कामना और आत्मदर्शन यह सभी इस चतुर्थाश्रम का कर्त्तव्य है। सत्य, शौच, अहिसा, असूया, क्षमा, आनृशस्य, अकृपणता और सन्तोष यह आठ गुण सभी वर्ण तथा आश्रम मे पालन करना आवश्यक है। मार्कण्डेय ऋषि के अनुसार धर्म का पालन करना चाहिये तभी व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है। दूसरी जाति के धर्म पर चलने से स्वधर्म की हानि होती है।

सस्कार —

सस्कार शब्द की व्युत्पत्ति सम् उपसर्ग कृ धातु से घञ प्रत्यय से हुआ है। "वीरमित्रोदय–मित्रोदय सस्कृत प्रकाश" मे सस्कार की प्राच्य कालीन मान्यता के सम्बन्ध मे लिखा है,"आत्म शरीरान्यतरनिष्ठो विहित–क्रिया जन्योऽतिशय विशेष सस्कार" अर्थात् शारीरिक एव आध्यात्मिक प्रकृति के आधायक सविधि अनुष्ठानो का नाम सस्कार है। [5]

1 वामन पुराण 14/14
2 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ 129
3 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ 129
4 महाभाष्य 5/1/124 पृष्ठ 364
5 भारतीय कला और सस्कृति पृष्ठ 441

यद्यपि आज के वैज्ञानिक युग मे सस्कारो का महत्व कम होता जा रहा है फिर भी प्रत्येक धर्मों मे कुछ न कुछ सस्कारो को महत्व आज भी दिया जाता है। सस्कार, विशेष अवसरो पर व्यक्ति एक दूसरे के प्रति हर्ष, शोक आदि को भी अभिव्यक्त करने के साधन है। सस्कार से शुद्धि प्राप्त होती है। यह सस्कार व्यक्ति की आयु , कर्म तथा आश्रम आदि से भी सम्बन्ध रखते है सस्कारित व्यक्ति के व्यक्तित्व का प्रभाव पूरे समाज पर पडता है। इस प्रकार उसके दैहिक, मानसिक एव बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। सस्कार का अपना एक अलग आध्यात्मिक महत्व भी है।

डॉ0 राजबली पाण्डेय के अनुसार – "सस्कार हिन्दू के लिये सजीव धार्मिक अनुभव थे, केवल बाहरी उपचार मात्र नही। सस्कार जीवन की आत्मवादी और भौतिक धारणाओ के बीच मध्य मार्ग का काम देते थे। सस्कार एक प्रकार से आध्यात्मिक शिक्षा की क्रमिक सीढियो का कार्य करते थे। यही वह मार्ग था, जिससे क्रियाशील सस्कार जीवन का समन्वय आध्यात्मिक तथ्यो के साथ स्थापित किया जाता था। हिन्दुओ का विश्वास था कि सविधि सस्कारो के अनुष्ठान से वे दैहिक बन्धन से मुक्त होकर मृत्यु सागर को पार कर लेते है। [1]

सस्कार मानव जीवन के सर्वाङ्गीण विकास के अभिन्न अग है। यद्यपि सस्कारो की सख्या मे स्मृतियो, गृह्य सूत्रो आदि मे मतभेद है किन्तु सोलह सस्कारो का ही विशेष महत्व है ये 16 सस्कार निम्न है –

1 गर्भाधान 2 पुसवन 3 सीमान्तोन्नयन 4 जातकर्म 5 नामकरण 6 निष्क्रमण 7 अन्नप्राशन 8 चूडाकर्म 9 कर्णवेध 10 विद्यारम्भ 11 उपनयन 12 वेदारम्भ 13 केशान्त 14 समावर्तन 15 विवाह 16 अन्त्येष्टि। मार्कण्डेय पुराण मे भी कुछ सस्कारो का उल्लेख प्राप्त होता है जैसे – गर्भाधान, जातकर्म, नामकरण, उपनयन, एव विवाह सस्कार आदि।

1 गर्भाधान सस्कार –

जिस कार्य के द्वारा स्त्री गर्भवती होती है उसे गर्भाधान सस्कार कहा जाता है।

"गर्भ सन्धार्यते येन कर्मणा तत् गर्भधानम्" [2]

1 डॉ0 राजबली पाण्डेय–हिन्दू सस्कार

2 भारतीय कला और सस्कृति पृष्ठ 444

गर्भाधान सस्कार का मुख्य उद्देश्य योग्य सन्तति उत्पन्न करना है। मार्कण्डेय पुराण मे कही–कही गर्भाधान का पौराणिक वर्णन भी मिलता है। जैसे – राजा दम नौ वर्ष तक अपनी माता के जठर मे थे।

"नववर्षाणि जठरे स्थित्वा मातुर्महायशा ।" [1]

2 जातकर्म सस्कार –

जातकर्म सस्कार सन्तान की उत्पत्ति के बाद एव नाभि बन्धन के पूर्व होता था। जातकर्म सस्कार मे बच्चे के जन्म लेते ही पिता अपने चौथी अगुली तथा स्वर्ण की सलाई से शिशु के जिह्वा पर घृत एव मधु से "ओ३म्" लिखता था तथा पिता शिशु के कान मे "वेदोऽसि" कहते थे।

अथर्ववेद मे सरल एव सुरक्षित प्रसव के लिये उपचार का उल्लेख पूरे एक सूक्त मे वर्णित है। [2] मार्कण्डेय पुराण मे भी जातकर्म सस्कार करने का निर्देश प्राप्त होता है। जैसे – मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क से कहा था कि "पुत्र जन्मनि यत्कार्य जातकर्म सम नरै ।"[3] पुत्र जन्म के समय जातकर्म करना चाहिये। राजा अविक्षित एव रानी भामिनी ने अपने पुत्र मरुत के जन्म लेने के पश्चात् जातकर्म सस्कार किया था।[4] मार्कण्डेय पुराण मे नवजात शिशु की सुरक्षा का भी उल्लेख प्राप्त होता है। नवजात शिशु के जन्म लेने पर उसकी शैय्या पर सफेद सरसो डाल देना चाहिये एव बालक के रेशमी वस्त्र, गले मे यत्र पहनाना चाहिये और औषधियो के जल से स्नान कराना चाहिये। नवजात बच्चे के गले मे गैंडे या ऊँट की हड्डी का बना हुआ यत्र पहनाना चाहिये। बच्चा दन्ताकृष्टि नामक दुष्ट से रक्षित होता है।[5]

3 नामकरण सस्कार –

नवजात शिशु के नामकरण के विषय मे सर्वप्रथम उल्लेख शतपथ ब्राह्मण मे इस प्रकार मिलता है – "तस्मात्पुत्रस्य जातस्य नाम कुर्यात् ।"[6] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पुत्र या पुत्री के जन्म होने के

1 मार्कण्डेय पुराण 130/2
2 अथर्ववेद 1/11
3 मार्कण्डेय पुराण 27/4
4 प्रणयेन स्मृतोऽभ्येत्य जातकर्माकरोन्मुनि ।मार्कण्डेय पुराण/124/26
5 मार्कण्डेय पुराण 48/10
6 शतपथ ब्राह्मण 6/1/3/9

पश्चात् शिशु का नामकरण सस्कार होता था। यह सस्कार शिशु के जन्म के ग्यारहवे दिन पश्चात् होता था। देह की कान्ति एव बालक के हाव–भाव को देखकर मुनियो ने राजा औत्तम का नाम "औत्तम" रखा था। [1] ऋतध्वज ने अपने प्रथम पुत्र का नाम "विक्रात" [2] उसके हाव–भाव को देखकर कल्पना से रखा था। राजा अविक्षित का नाम ज्योतिष के आधार पर शुभ नक्षत्रो मे जन्म होने के कारण रखा गया था। [3] प्रमुच मुनि ने रेवती जैसी कान्ति वाली कन्या का नाम रेवती रखा था। [4]

4 उपनयन सस्कार –

उपनयन सस्कार का विधान अत्यन्त प्राचीन है। उपनयन सस्कार का अर्थ है – गुरुके समीप ले जाना, किन्तु वर्तमान समय मे इसका अर्थ मात्र यज्ञोपवीत सस्कार करना ही रह गया है। प्राचीनकाल मे उपनयन सस्कार ब्रह्मचर्य आश्रम मे प्रवेश करने से पहले होता था। उपनयन के बाद ही मानव ब्रह्मचर्य रूपी प्रथम आश्रम का पालन करता था एव गुरुअध्ययन कराने के लिये शिष्य को अपने साथ ले जाते थे। इसी को यज्ञोपवीत सस्कार भी कहा जाता था। उपनयन सस्कार की आयु सभी वर्णों के लिये अलग–अलग थी। आश्वलायन गृह्य सूत्र के अनुसार – ब्राह्मण पुत्र के लिये आठवे, क्षत्रिय के लिये ग्यारहवे एव वैश्य पुत्र के लिये बारहवे वर्ष का विधान है। [5] उपनयन सस्कार का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे विस्तार से प्राप्त नही होता है। अपितु छिटपुट रूप मे ही यत्र– तत्र प्राप्त होता है। जैसे – मदालसा ने अलर्क से उपनयन सस्कार के बारे मे यह उपदेश दिया था कि "जब तक द्विजातिगण का उपनयन सस्कार (जनेऊ) सम्पन्न न हो तब तक वह अपनी इच्छानुसार व्यवहार, आलाप और आहारादि कर सकते है। उपनयन सस्कार होने पर ब्रह्मचारी रूप से गुरुके घर वास कर धर्माचरण करना चाहिये।[6]

1 मार्कण्डेय पुराण 69/37

2 मार्कण्डेय पुराण 23/9

3 मार्कण्डेय पुराण 119/11–12

4 मार्कण्डेय पुराण 72/25

5 आश्वलायन गृह सूत्र 1/19/1–6

6 मार्कण्डेय पुराण 25/10–11

5 विवाह सस्कार –

विवाह सस्कार का विधान अत्यन्त प्राचीन एव समस्त सस्कारो मे महत्वपूर्ण स्थान रखता है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद मे विवाह विधि का उल्लेख काव्यात्मक रूप से हुआ है। यह गृहस्थाश्रम का सबसे महत्वपूर्ण अग है।

विवाह –

मार्कण्डेय पुराण मे विवाह के लिये "विवाह" एव "पाणिग्रहण" दोनो ही शब्दो का प्रयोग मिलता है। दारपरिग्रह (विवाह) पवित्र कार्य समझा जाता था। समाज मे विवाह करना आवश्यक माना जाता था, क्योकि ऐसी मान्यता थी कि विवाहित व्यक्ति की मुक्ति हो जाती है एव उसे स्वर्ग की प्राप्ति होती है। इसके विपरीत अविवाहित व्यक्ति अपने पूर्व जन्म एव वर्तमान जन्म के ऋणो से मुक्त नही होता क्योकि विवाह के पश्चात् देवऋण एव पितृऋण को चुकाना आवश्यक माना जाता था। विवाह पश्चात् पुत्र उत्पन्न करना, पितरो को तर्पण देना भी आवश्यक था अन्यथा मनुष्य की गति नहीं होती और वह अनेक प्रकार के क्लेशो से दुखी रहता है किन्तु राजा रुचि के अनुसार – इन्द्रिय दमन हेतु जो आत्म सयम किया जाता है वही मुक्ति का कारण है, विवाह करना मुक्ति का कारण नही हो सकता। [1]

विवाह से पूर्व कन्या मे क्या–क्या गुण होने चाहिये, वर पक्ष के व्यक्तियो को इसका विचार कर लेना चाहिये। उसके बाद ही वर को उस कन्या से विवाह करना चाहिये। मार्कण्डेय पुराण मे मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क को यह उपदेश दिया कि "जो कन्या सत्कुलोत्पन्न होकर भी रोगिणी, विकलाङ्गी, विकृत, पिङ्गल वर्ण, वाचाल वा समस्त दोषो से दूषित हो, ऐसी कन्या को ग्रहण करना उचित नही है। जो पुरुष कल्याण की कामना करे वह सर्वाङ्गपूर्ण सौम्य नाम, सर्वलक्षण विभूषित कन्या से विवाह करे। पिता व माता की सात व पॉच पीढी छोडकर अन्य कन्या से विवाह करना चाहिये।"[2] इस प्रकार कन्या सर्वगुण सम्पन्न तो होना ही चाहिये किन्तु माता पिता की पॉच व सात पीढी के यदि वह अन्दर होती थी तो उस कन्या से रिश्ता वा सम्बन्ध नही किया जाता था।

1 मार्कण्डेय पुराण 92/10

2 मार्कण्डेय पुराण 31/77–79

विवाह सम्बन्धी विचार –

पुत्री के युवा होने पर पिता को विवाह की चिन्ता होती थी, किन्तु पिता के न होने पर कन्या स्वय पति का वरण करती थी।

"पितर्यसति नारीभिर्व्रियते हि पति स्वयम्। 1

कन्या वर का वरण उसके रूप एव सौन्दर्य को देखकर नही अपितु पुरुष के शौर्य एव पराक्रम को देखकर ही तत्पश्चात् विवाह करती थी। विवाह के पश्चात् पति का कर्त्तव्य था कि वह अपनी पत्नी की रक्षा करे। "राजा दम ने अपनी नवविवाहिता पत्नी की अपने प्राणो की बाजी लगाकर रक्षा की थी।2 मार्कण्डेय पुराण मे इच्छित विवाह न होने पर आजीवन विवाह न करने की प्रतिज्ञा करने का भी उल्लेख प्राप्त होता है। विशालराज की पुत्री वैशालिनी राजा अविच्छित के साथ विवाह न होने पर किसी अन्य से विवाह न करने की प्रतिज्ञा की थी एव बाद मे वह वन मे तपस्या करने चली गयी थी। 3

विवाह सम्बन्धी नियम :–

मार्कण्डेय पुराण मे वैवाहिक नियम का उल्लेख बहुत ही उचितपूर्ण रूप मे प्राप्त होता है। प्रथम सवर्णा कन्या से विवाह करना आवश्यक था। अन्यथा यदि ब्राह्मण वैश्य कन्या से विवाह करता था तो वह ब्राह्मण वैश्य जाति का हो जाता था। जैसे – राजकुमार नाभाग वैश्य कन्या से विवाह करने पर वैश्य जाति के हो गये थे।

"सोऽय वैश्यत्वमापन्नस्तव पुत्र समुन्दधी" ।4

राजकुमार नाभाग द्वारा वैश्य कन्या से विवाह कर लेने पर उसके पिता राजा दिष्ट रुष्ट हो गये और उन्होने अपने पुत्र के विरुद्ध युद्ध प्रारम्भ कर दिया। उसी समय नारद जी आकाशवाणी द्वारा दूसरे वर्ण की कन्या से विवाह सम्बन्धी निम्न नियम को बताते हैं – "यदि ब्राह्मण अपना प्रथम विवाह किसी ब्राह्मण कन्या से करने के पश्चात् दूसरे वर्ण की कन्या से विवाह करे तो उसके ब्राह्मणत्व की हानि नही

1 मार्कण्डेय पुराण 71/34
2 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन /बदरी नाथ शुक्ल पृष्ठ 144
3 मार्कण्डेय पुराण 121/46
4 मार्कण्डेय पुराण 110/36

होगी।[1] यही नियम क्षत्रिय, वैश्य आदि अन्य वर्णों के लिये भी नारद जी ने राजा दिष्ट को बताया। किसी दूसरे वर्ण की कन्या से विवाह करने से पहले उस कन्या का मूर्द्धाभिषिक्त होना आवश्यक था। अभिषेक के पश्चात् उस कन्या के साथ विवाह करना उचित था। ऐसा करने पर किसी भी दोष की सम्भावना नही रह जाती थी। जैसे – वैश्य कन्या से विवाह करने के लिये राजकुमार नाभाग को ऋषिगण ने कन्या का अभिषेक करने का परामर्श दिया था।[2]

इससे स्पष्ट है कि समाज मे अनुलोम विवाह ही श्रेयस्कर माना जाता था। किन्तु, विशेष परिस्थितियो मे अन्तर्जातीय विवाह भी होते थे। हॉ, ऐसे विवाह के लिये समाज मे निर्दिष्ट नियम का पालन करना आवश्यक समझा जाता था।

वैवाहिक लग्न –

विवाह से पूर्व वर–वधु की कुण्डली मिलायी जाती थी। विवाह के समय शुभ ग्रहो का मेल होना आवश्यक था। अन्यथा ग्रहो के वक्री होने पर उसके वैवाहिक जीवन पर उनका विपरीत प्रभाव पडता था। मार्कण्डेय पुराण के निम्न प्रसङ्ग मे विवाह के अवसर पर ग्रहो की स्थिति की स्पष्ट झलक मिलती है – राजा उत्तम की पत्नी अपने पति के प्रति बुरा व्यवहार रखती थी। राजा उत्तम चिन्तित होकर इसका कारण त्रिकालज्ञ धर्मात्मा मुनि से अपनी पत्नी के बुरे व्यवहार का कारण पूछा। निम्न वाक्यो द्वारा महामुनि ने राजा उत्तम से कहा – "विवाह के समय मे आपके ऊपर रवि, मगल और शनि की दृष्टि थी और आपकी भार्या को शुक्र एव बृहस्पति देख रहे थे और उसी मुहूर्त मे आपकी पत्नी के चन्द्र और आपके बुध यह परस्पर अत्यन्त विपक्ष थे।[3] मार्कण्डेय पुराण मे यह भी कहा गया है कि विवाह के समय रेवती नक्षत्र चन्द्रयोगी होकर स्थित होने पर वैवाहिक जीवन सफल होता है।[4]

1 मार्कण्डेय पुराण 110/31
2 मार्कण्डेय पुराण 110/20
3 मार्कण्डेय पुराण 68/26–28
4 मार्कण्डेय पुराण 72/55

स्वयवर –

समाज मे स्वयवर प्रथा प्रचलित थी। राजा अपनी पुत्री के विवाह के लिये स्वयवर का आयोजन करते थे। जिसमे कन्या स्वयवर सभा मे उपस्थित राजाओ मे से किसी एक को अपने पति रूप मे स्वीकारती थी। शुभ्रव्रता एव राजा करन्धम का विवाह स्वयवर प्रथा द्वारा हुआ था।[1] राजा दम एव सुमना का विवाह पहले गान्धर्व विवाह [2] हुआ उसके बाद स्वयवर विवाह हुआ था।[3]

विवाह के प्रकार :–

अति प्राचीन काल मे आर्य एव अनार्यजातियो के प्रसङ्ग मे अनेक विवाह पद्धतियो का वर्णन प्राप्त होता है। विवाह आठ प्रकार के माने गये है। जैसे – ब्राह्म, देव, आर्ष, प्रजापत्य, गधर्व, असुर, राक्षस तथा पैशाच विवाह।

मार्कण्डेय पुराण मे विवाह स्वयवर प्रथा, राक्षस–विवाह, गन्धर्व विवाह, अनार्य एव अन्य अन्तर्जातीय विवाह आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।

राक्षस विवाह –

मार्कण्डेय पुराण मे राक्षस विवाह का भी वर्णन मिलता है। सोती हुयी कन्या का अपहरण कर लेना ही राक्षस विवाह कहलाता है। राक्षस विवाह मे उचित–अनुचित का ध्यान नही रखा जाता था। जैसे – राजकुमार नाभाग ने वैश्य कन्या से राक्षस विवाह किया था।[4]

गान्धर्व विवाह –

परस्पर वर–वधु के अनुराग से गान्धर्व विवाह होता था। इस विवाह मे गुरुजनो की अनुमित (इच्छा) की आवश्यकता नही होती थी और न ही वैवाहिक मन्त्र या आयोजन की । मार्कण्डेय पुराण मे गान्धर्व विवाह का उल्लेख प्राप्त होता है। जैसे – राजा दम एव चारुकर्मा की पुत्री सुमना का गन्धर्व विवाह हुआ था।[5]

1 मार्कण्डेय पुराण 119/1
2 मार्कण्डेय पुराण 130/24
3 मार्कण्डेय पुराण 130/8–9
4 मार्कण्डेय पुराण 110/23
5 मार्कण्डेय पुराण 130/8–9

कन्या–धन –

विवाह पश्चात् विदाई के साथ बहुत अधिक धन, रत्न, बहुमूल्य सामग्री के साथ–साथ हाथी, घोडे, रथ, गौ, खर, ऊँट, दास–दासी, वस्त्र, अलकार आदि दिये जाते थे। इस प्रकार उस समय भी समाज मे दहेज देने की प्रथा थी। राजा दम को उनके श्वसुर ने प्रभूत मात्रा मे कन्या–धन दिया था।

"दशार्णाधिपतिश्चासौ दत्त्वा नागास्तुरङ्गमान्।

रथगोऽश्वखरोष्ट्राश्च दासी–दासास्तथा बहून्।।"[1]

विवाह शुल्क :–

मार्कण्डेय पुराण मे पत्नी द्वारा अपने पति को विवाह शुल्क के रूप मे पद्मिनी विद्या आदि के देने का उल्लेख भी प्राप्त होता है। विभावरी एव कलावती ने कुष्ठ एव क्षय रोग से मुक्त होने पर राजा स्वरोचिष को उनके उपकार के बदले, विवाह शुल्क के रूप मे, विभावरी ने सब प्राणियो की बोली समझने वाली "विद्या"[2] एव कलावती ने पद्मिनी नामक[3] "निधि विद्या" प्रदान किया था।

स्त्री धर्म :–

मार्कण्डेय पुराण मे स्त्रियो के धर्म का निर्देश करते हुए कहा गया है कि उसे प्रातकाल उठकर देहली का चरण स्पर्श करना चाहिये बिना पूजन किये देहली नही लाघना चाहिये। प्रातकाल उठकर पूरे घर को गोबर से लीपना, गोबर से लीपने के बाद सथिया (स्वस्तिक) बनाना, सध्या होने से पहले झाडू लगाना, ओखली–मूसल का व्यर्थ मे घर्षण न करना तथा झाडू, सिलबट्टा, चूल्हा को पैर से नही छूना चाहिये आदि का निर्देश किया गया है।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार विवाह के पश्चात् पुत्री का पिता के घर रहना अनुचित था। विश्वकर्मा की पुत्री सज्ञा अपने पति सूर्य के घर को छोडकर अपने पिता के घर आ गयी थी, जिस पर विश्वकर्मा ने अपनी पुत्री सज्ञा से कहा – "हे पुत्रिके त्रैलोक्यनाथ सूर्य तुम्हारे भर्त्ता हैं, तुम उनके सग विवाह सूत्र मे बध जाओ।

1 मार्कण्डेय पुराण 130/62
2 मार्कण्डेय पुराण 61/3
3 मार्कण्डेय पुराण 61/15

पिता के घर सदा वास करना तुम्हारे लिए उचित नही है।[1] विवाह के पश्चात् पति गृह से वापस लौटने पर पिता अपनी विवाहिता पुत्री का मान करके पूजन करते थे। जैसे – राजा विश्वकर्मा ने अपनी विवाहिता पुत्री सज्ञा के ससुराल से वापस आने पर उनका मान एव पूजन किया था।

"बहुमानाच्च तेनापि पूजिता विश्वकर्मणा।
तस्थौ पितृगृहे सा तु कञ्चित्कालमनिन्दिता।।[2]

एक पत्नीव्रती का उपदेश अनेक पत्नीधारी की निन्दा :–

मार्कण्डेय पुराण मे पशु–पक्षी द्वारा एक पत्नीव्रती का उपदेश दिया गया है। पुरुष को एक ही पत्नी से समागम करना चाहिये, बहुपत्नी वाला पुरुष पुण्य और पाप का कारण होता है। विवाहिता स्त्री के साथ ही नित्य नैमित्तिक क्रिया करनी चाहिये। अन्यथा मनुष्य पाप का भागी होता है। मार्कण्डेय पुराण मे कलहसी के माध्यम से अनेक पत्नी धारी पुरुषो की निन्दा की है। अध्याय द्विषष्टितमोध्याय मे कलहसी अपने ही राजा स्वरोचि की उपमा देते हुए उनके अनेक स्त्रीगामी होने की निन्दा करते हुए जिस प्रकार कहती है एक स्त्री अनेक पुरुषो के साथ रहने पर हास्यास्पद होती है उसी प्रकार पुरुष भी अनेक स्त्रियो के साथ समागम करने पर हास्यास्पद होता है। उसको स्वर्ग का सुख नहीं मिलता एव उसके नित्य नैमित्तिक क्रिया की भी हानि होती है।

मार्कण्डेय पुराण मे कलहसी अपने निम्न वचनो द्वारा एक पति–पत्नी गामी जीवो का वर्णन करते हुए कहती है – "हे सखी कलहसी। मेरे पति धन्य और मैं धन्य हूँ, क्योकि मैं उनकी एकमात्र पत्नी हूँ, मेरे प्रति ही उनके चित्त का अनुराग और मैं भी उन एक मात्र पति मे ही अनुरागिणी हूँ। ससार मे बहुत स्त्रियो वाला पति ही पुण्य और पाप का कारण है।[3]

1 मार्कण्डेय पुराण 74/20

2 मार्कण्डेय पुराण 74/16

3 मार्कण्डेय पुराण 62/18–19

सती प्रथा –

समाज मे कही–कही सती प्रथा की भी झलक मिलती है। पति की मृत्यु के पश्चात् पत्नी पति के शव के साथ अग्नि मे प्रवेश करती थी। रानी इन्द्रसेना, अपने पति नारिष्यन्त के साथ सती हो गयी थी।

'पतिदेहमुपाश्लिष्य विवेशाग्नि मनस्विनी। 1

वैवाहिक उत्सव :–

विवाह के समय उत्सव जैसा वातावरण रहता था। कन्या एव वर पक्ष के लोग आपस मे मिलकर उत्सव मनाया करते थे। देवतूर्य बजते थे एव अप्सराये नृत्य करती थी।

"नदत्सु देवतूर्येषु नृत्यन्तीस्वप्सर सु च।" 2

विवाह के समय पितर कर्म :–

समाज मे विवाह के समय नान्दी मुख नामक प्रसिद्ध पितर की पूजा करने की प्रथा थी। मदालसा ने पितर कर्म को नित्य नैमित्तिक कर्म मानती है जिसे प्रत्येक गृहस्थ को करना आवश्यक कर्म था। जैसे – मदालसा के अनुसार "विवाहादि कार्य मे नान्दीमुख नामक प्रसिद्ध पितरो की सम्यक् प्रकार से पूजा करे।3 ऐसा उल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है।

पुरुष :–

मार्कण्डेय पुराण मे स्त्री के गुण, धर्म एव कर्तव्यो आदि अन्य प्रसङ्गो का तो वर्णन प्राप्त होता ही है। साथ ही साथ पुरुषो का भी वर्णन प्राप्त होता है। पुरुषो को गुणो के आधार पर उनको तीन श्रेणियो मे विभाजित किया गया । राजा शत्रुजित के पुत्र ऋतध्वज के द्वारा वीरतापूर्ण किये गये कार्यो से प्रसन्न होकर शत्रुजित तीन प्रकार के पुरुषो की श्रेणी का वर्णन करते है – पुरुष तीन प्रकार के होते है, मध्यम, उत्तम एव अधम।

1 मार्कण्डेय पुराण 131/37
2 मार्कण्डेय पुराण 61/19
3 मार्कण्डेय पुराण 27/3

मध्यम पुरुष –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार मध्यम पुरुष वह है जो पिता द्वारा सचित निधि, यश, एव बल आदि की रक्षा करता है।

"तन्न हापयते यस्तु से नरो मध्यम स्मृत ।" 1

उत्तम पुरुष .–

राजा शत्रुजित ने कहा कि जो पुरुष अपने पिता द्वारा दिये धन, यश को बढाता है उसे उत्तम पुरुष कहते है।

"तद्वीर्यादधिक यस्तु पुनरन्यत्स्वशक्तित ।

निष्पादयति त प्राज्ञा वदन्ति नरमुत्तमम्।।" 2

अधम पुरुष –

जो व्यक्ति अपने पूर्वजो द्वारा उपार्जित धन–यश आदि को नष्ट करता है उसे अधम पुरुष कहते हैं।

"न्यूनता नयति प्राज्ञास्तमाहु पुरुषाधमम्"। 3

राजा शत्रुजित के इन वक्तव्यो के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मार्कण्डेय पुराण कालीन पुरुषो की इन तीन श्रेणियो मे विभाजन के पश्चात् गुणवान एव निर्गुण पुरुष के क्या लक्षण होते हैं इसका वर्णन हमे मार्कण्डेय पुराण मे नागराज अश्वतर के प्रसङ्ग मे प्राप्त होता है।

नागराज अश्वतर राजकुमार ऋतध्वज की प्रशसा मे निर्गुण एव गुणवान पुरुष का वर्णन करते हुए कहते हैं कि –

गुणवान पुरुष –

गुणवान पुरुष माता–पिता को शान्ति देते हैं, शत्रु का विनाश करते हैं।4 मगल साधन करते है। अर्थी एव विभवादि से सम्पन्न होते हैं। दयावान दु खी पुरुष को आश्रय देने वाले होते हैं।

1 मार्कण्डेय पुराण 19/95

2 मार्कण्डेय पुराण 19/95–96

3 मार्कण्डेय पुराण 19/97

4 मार्कण्डेय पुराण 21/110

निर्गुण पुरुष :—

गुणवान पुरुष से विपरीत प्रकृति वाले निर्गुण पुरुष कहलाते है। वह जीवित अवस्था मे मृतक के समान होते है।

"जीवित गुणिन श्लाघ्य जीवन्नपि मृतोऽगुणि।" 1

नागराज ने प्रसन्न होकर राजकुमार ऋतध्वज से अपनी इच्छानुकूल वर मागने को कहा। राजकुमार ऋतध्वज ने अपने आपको सर्वसुखसाधन सम्पन्न होने का वर्णन करते हुये पितृहीन पुरुष एव पितृसहित पुरुष का उल्लेख करते हुए इस प्रकार कहा – पितृहीन पुरुष बाल्यकाल से ही परिवार के भरण–पोषण मे लगे रहते हैं एव ससार के सभी सुख स्वाद से वचित रहते हैं। 2 जिन पुरुषो के पिता जीवित हैं वही पुरुष धन्य हैं यथार्थ सुख उन्ही को प्राप्त रहता है।

"पितृ बाहुतरुच्छाया सश्रिता सुखिनो हि ते" 3

जो पिता रूपी वृक्ष की भुजलता की छाया मे रहते हैं वही पुरुष यथार्थ मे सुखी है।

स्त्रियों की दशा –

मार्कण्डेय पुराण मे स्त्रियो की स्थिति प्राय वही है जो परम्परा से चली आ रही थी। बाल्यावस्था मे वह माता–पिता के सरक्षण मे रहती थी। युवा होने पर स्त्री के विवाह की चिन्ता माता–पिता को होती थी। विवाहित स्त्री के अनेक स्वरूप का चित्रण इस पुराण मे मिलता है। सुन्दर स्त्री की उपमा कमल के गर्भ से दी गयी है।

"कात्व कमलगर्भाभे कस्य कि वानुतिष्ठसि।" 4

1 मार्कण्डेय पुराण 21/110

2 मार्कण्डेय पुराण 22/11

3 मार्कण्डेय पुराण 22/10

4 मार्कण्डेय पुराण 58/44

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार स्त्री कही पर तो पूज्या है तो कही पर अबला। एक तरफ अप्सरा है दूसरी तरफ ऋषि पत्नी। वपु अप्सरा दुर्वासा ऋषि द्वारा शापित होती है तो द्विज पत्नी अपने पति को शाप मुक्त करने के लिये सूर्य का उदय ही नही होने देती "सूर्यो नैवोदयमुपेष्यति" सूर्य अब उदित ही नही होगे।

स्त्री के पतिव्रता धर्म की झलक हमे सोलहवे अध्याय मे कौशिक पत्नी के रूप मे मिलती है कौशिक पत्नी अपने पति की निष्ठुरता को सहन करते हुये भी अपने पतिपरायणा देवी स्वरूप का परिचय देती है –

"पति के कुष्ठ रोग से आक्रात होने पर भी कौशिक पत्नी अपने पति की देवता समान मानते हुए उसकी पूजा करती थी। चरणो मे तेल मलती, अग दबाती, स्नान कराती, आच्छादन करती, भोजन कराती और कफ, मूत्र, मल तथा रक्त का प्रवाह धोती, निर्जन के उपकार और प्रिय समाषणादि द्वारा विनीत भाव से सदा उसकी पूजा करती थी किन्तु ब्राह्मण पति अत्यन्त कोपस्वभाव और निष्ठुर होने के कारण विनीत पत्नी से निरन्तर पूजित होकर भी उस पर सदा क्रोध करता है तथापि प्रणत भार्या उसको देवता मानती थी।[1] इतना होने पर भी द्विजपत्नी अपने पति का त्याग नही करती। पति के कहने पर उसको उस वेश्या के पास भी ले जाती है जिस पर उसका पति मोहित था वह भी अपने कन्धे पर ढोकर।

स्वय ब्रह्मा जी ने कहा है "पतिव्रताया माहात्म्यान्नोद्‌गच्छति दिवाकर" यही बात भय से व्याकुल देवताओ ने भी की थी। स्त्री का एक मात्र कर्तव्य पति की सेवा करना था। जैसा कि अनसुइया ने कहा है "स्त्रिया केवल पति की सेवा से ही मनुष्य के दु:खोपार्जित इस सब पुण्य मे से अर्द्धांश भाग को प्राप्त होती है। ब्रह्म स्त्रियो के पक्ष मे यज्ञ, श्राद्ध अथवा उपवास का कोई पृथक विधान नहीं है। वह केवल मात्र स्वामी सुश्रुषा से ही समस्त अभिलषित लोको मे जाने मे समर्थ है। "[2] समाज मे स्त्री आदरणीया थी किन्तु विशेष परिस्थितियो मे स्त्री को बेचने का वर्णन भी प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 16/15–18

2 मार्कण्डेय पुराण 16/61–62

जिसका एकमात्र दृश्य हरिश्चन्द्र कथा मे मिलती है–

"प्राह भद्रे करोम्येष विक्रय तव निर्घृण ।

नृशसैरपि यत्कर्त्तुं न शक्य तत्करोम्यहम्।।" [1]

पति द्वारा अपने वचन पालन हेतु बेचे जाने पर पतिव्रता स्त्री उसका विरोध नहीं करती थी। स्त्री के पर्दा प्रथा की भी झलक मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होती है। स्त्री अपने पति के अतिरिक्त किसी के सामने अपना मुख नही खोलती थी चाहे वो राजा हरिश्चन्द्र की पत्नी शैब्या ही क्यो न हो।

"या न वायुर्न चादित्यो नेन्दुर्न च पृथग्जन ।

दृष्टवन्त पुरा पत्नी सेय दासीत्वमागता।।"[2]

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पति का पत्नी त्याग एव पत्नी का पति त्याग करना धर्म त्याग के समान होता था। पति एव पत्नी निज कार्य के अनुष्ठान को अकेले नही कर सकते थे। ब्राह्मण आदि चारो वर्णो के लिये पति त्याग अथवा पत्नी त्याग निज कार्य के अनुष्ठान मे बाधक था।[3] पत्नी त्याग को उचित नही माना जाता था। यज्ञ, वैदिक यज्ञ, कर्म, अनुष्ठान आदि मे पत्नी को अनिवार्य रूप से उपस्थित होना आवश्यक था। इस कारण भी पति के द्वारा पत्नी त्याग करने से पहले उस पर अच्छी प्रकार से विचार करने पर बल दिया गया है।

पति–पत्नी का एक दूसरे के प्रति अप्रिय व्यवहार का कारण विवाह के समय ग्रहो का एक दूसरे के प्रति विपक्षी होना बताया गया है। इस तरह विवाह मे ज्योतिष का पूर्ण प्रभाव दिखायी पडता है।

समाज मे कन्या या पत्नी के अपहरण किये जाने का वर्णन भी प्राप्त होता है। अतिरात्र नामक ब्राह्मण की कन्या एव विशाल पुत्र सुशर्मा नामक ब्राह्मण की पत्नी का हरण करने के पश्चात् अपहरणकर्त्ता राक्षस द्वारा उनको सुरक्षित रखना नारी सम्मान को दर्शाता है। दूसरी ओर अनार्य जाति मे पति की मृत्यु होने पर पत्नी द्वारा दूसरा विवाह करने का भी वर्णन प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 8/48

2 मार्कण्डेय पुराण 8/68

3 मार्कण्डेय पुराण 68/10

मदनिका निशाचरी पति की मृत्यु होने पर वह अपनी इच्छा से कन्धर पक्षी की भार्या बन जाती है। मदालसा को इस पुराण मे अलग स्थान मिला हुआ है। वह एक विदुषी स्त्री थी। उसकी विद्वता प्रत्येक क्षेत्र मे प्रसिद्ध है। आत्मज्ञान हो या कर्म सभी क्षेत्रो मे वह निपुण है यद्यपि वह अपने पति के प्रति कर्तव्य, आदर, सम्मान को नही भूलती। उनकी आज्ञा का पालन सदैव करती है। अपने चारो पुत्रो को मदालसा ने स्वंय आत्मज्ञान, राजधर्म एव गृहस्थ की शिक्षा दी जिसमे से मदालसा पुत्र अलर्क एक प्रतापी राजा हुये। मदालसा अपने पुत्र को आत्मज्ञान का उपदेश देते हुए कहती है कि स्त्री भोग का साधन है आत्मज्ञान प्राप्ति मे उसे बाधा भी मानती है। जैसे "स्त्री हसती है तो हड्डी दिखायी पडती है और उसके नेत्रो मे वसा की कलुषता दिखायी पडती है उसके स्तनादि भी मासपिण्ड मात्र है उसका गुह्य स्थान भी वैसा ही है।

"हासोऽस्थिसदर्शनमक्षियुग्ममत्युज्जवल यत्कलुष वसाया।।" 1

स्त्रिया शिक्षित एव अनेक विद्याओ को जानने वाली थी। स्त्री द्वारा पुरुष को मोहित करने का भी वर्णन इस पुराण मे प्राप्त होता है। कही–कही सती प्रथा के भी उद्धरण इस पुराण मे प्राप्त होते हैं। पति की मृत्यु के बाद पत्नी भी अपने प्राण त्याग देती थी।

स्त्रियो का रजोधर्म प्रतिमास नही होता था, केवल एक बार अवस्था के अन्त मे सन्तानोत्पत्ति होती थी। स्त्रियो के लिये कुछ सामाजिक निर्देशो एव प्रतिबन्धो का भी वर्णन इस पुराण मे प्राप्त होता है। जैसे – गर्भवती स्त्री को वृक्षो पर, कोठे पर, खाई मे कभी नही जाना चाहिये। गर्भस्थापन के छ महीने तक मास नही खाना चाहिये। रात्रि के समय वृक्ष, चौराहे एव श्मशान पर नहीं जाना चाहिये। रात्रि के समय रुदन नही करना चाहिये। सोवर मे बच्चे का विशेष देखभाल, पराये घर मे सन्तानोत्पत्ति नही करना चाहिये।

रजस्वला स्त्री को भोजन नही छूना चाहिये। स्त्री को अपने स्वामी की सेवा करनी चाहिये। कुटुम्ब से बचे हुये अन्न द्वारा ही अपना पोषण करे। स्त्री को लज्जाशील एव घर के अन्दर रहना चाहिये। अपनी वैभव एव वैभवानुसार ही जीवन व्यतीत करना चाहिये।

1 मार्कण्डेय पुराण 23/17

स्त्री सम्बन्धित अनेक सम्बोधनो का प्रयोग इस पुराण मे प्राप्त होता है, जो उनकी पारिवारिक शारीरिक सौन्दर्य, धार्मिक आदि परिस्थितियो को दर्शाता है। शुचिस्मिते, कल्याणी, यशस्विनी, भद्रे, सकामा, रमणी, मदिरेक्षणा, गजगामिनी आदि।

खाद्य सामग्री –

मार्कण्डेय पुराण मे खाद्य सामग्री एव पाकशाला सम्बन्धी निम्न पात्रो का नामोल्लेख प्राप्त होता है। सम्भवत उस युग के लोग इन्ही सामग्रियो का प्रयोग करते रहे होगे। घी, गेहूँ, दुग्ध, शाक, मूल, फल, विदल, खटाई, सरसो, तिल, यवागू, मीठा, यावक, प्रियगु, कण, पिष्याक, सत्तू, श्रीफल आदि एव पाकशाला सम्बन्धी पात्रो मे मूसल, ओखली, कल्छुल, सिलबट्टा, झाडू, चूल्हा आदि थे।

पान –

मद्यपान – मार्कण्डेय पुराण मद्यपान का प्रचुर उल्लेख प्राप्त होता है। मद्य को मदिरा, ताडी आदि नामो द्वारा उल्लेख किया जाता है। मार्कण्डेय पुराण मे विद्युद्रूप राक्षस एव बलदेव जी द्वारा मद्यपान करने का उल्लेख मिलता है। बलदेव जी ने मदिरा पान कर लिया था। [1] मदिरा पीने से मदोन्मत्त हो जाने पर उनके द्वारा ब्रह्म हत्या हो गयी थी। जिससे उन्हे बाद मे ब्रह्म हत्या जैसे पाप का प्रायश्चित् करना पडा था। राजा एव राजपत्नी द्वारा सुरापान का उल्लेख भी यत्र–तत्र प्राप्त होता है।

सोमरस – यह देवताओ का प्रिय पेय पदार्थ था जिसके पीने से व्यक्ति मदोन्मत्त हो जाता था। इन्द्र द्वारा सोम रस पीने का उल्लेख प्राप्त होता है। [2]

वारुणी पान – यह भी एक पेय पदार्थ था किन्तु यह एक ह्येय पेय था। जिसे पीना अच्छा नही माना जाता था। इसे पीने के पश्चात् व्यक्ति दूषित हो जाता है– ऐसा समझा जाता था। "योगीश्वर दत्तात्रेय वारुणी पान करके भी चाण्डाल के घर मे स्थित वायु के समान दूषित नही हुये।" [3] इससे स्पष्ट है कि यह सामान्यतया एक निम्न पेय था।

1 मार्कण्डेय पुराण 6/8

2 मार्कण्डेय पुराण /126/15

3 मार्कण्डेय पुराण अध्याय 16 श्लोक 116

शिष्टाचार –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार गुरु, वृद्ध एव ब्राह्मण के आसन पर बैठने पर खडे रहना चाहिये। अतिथि की पूजा करनी चाहिये। अतिथि को बिना भोजन कराये भोजन नही करना चाहिये। शास्त्रो की पूजा करनी चाहिये। शास्त्र मे कही हुयी बातो को मानना चाहिये। ऐसा निर्देश प्राप्त होता है।

अर्घ्य –

अतिथियो के घर आने पर उन्हे अर्घ्य देकर स्वागत करने की सामाजिक प्रथा का वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे भी प्राप्त होता है। राक्षस लोग भी अपने राजा को अर्घ्य देकर अतिथि सत्कार करते थे। जैसे– आदिपुत्र बलाक नामक राक्षस ने राजा उत्तम का अर्घ्य देकर सम्मान किया था। [1] युद्ध मे पराजित राजा दूसरे जीते हुए राजा की अर्घ्य द्वारा पूजा करते थे। जैसे–मार्कण्डेय पुराण मे राजा विशालराज ने जीते हुये राजा करन्धम की अर्घ्य द्वारा पूजा की थी। [2]

मदालसा ने अलर्क को "सदाचार वर्णन" मे यह उपदेश देती है कि अर्घ्य मुख्य रूप से छ लोगो को देना चाहिये। एव इनकी पूजा करनी चाहिये। जैसे– सुहृद, दीक्षित, भूपति, स्नातक, श्वसुर, और ऋत्विक। [3]

चरणो की वन्दना –

पुत्र पिता के चरणो की वन्दना करते थे। "ववन्दे पितुरादरात्" [4] राजा अवीक्षित ने अपने पिता के चरणो की वन्दना इस प्रकार किया था।

प्रणाम –

पुत्रवधु लज्जित भाव से सिर झुकाकर प्रणाम करती थी। [5] मदालसा ने अपने सास एव श्वसुर के चरणो मे प्रणाम किया था। [6]

1 मार्कण्डेय पुराण 67/13
2 मार्कण्डेय पुराण 121/23
3 मार्कण्डेय पुराण 31/94
4 मार्कण्डेय पुराण 125/2
5 मार्कण्डेय पुराण 125/2
6 मार्कण्डेय पुराण 23/2

आलिङ्गन

अपने से छोटे जैसे–पुत्र को, पौत्र को, पुत्री आदि को आलिङ्गन द्वारा प्यार करने की प्रथा थी। राजा करन्धम ने अपने पौत्र को आलिङ्गन करके "सौभाग्यवान हुआ हूँ" इस प्रकार का वचन कहते हैं।[1]

स्वस्त्ययन –

मरूत के उत्पन्न होने पर तुम्बरू ने स्वस्त्ययन पूर्वक आशीर्वाद दिया था।[2]

सिरसूघना –

पिता अपने पुत्र का आलिङ्गन करते थे। उनके सिर को सूघते थे एव "चिरजीवी भव" का आशीर्वाद देते थे।

"समुत्थाप्य बलाद्गाढ स नाग परिषस्वजे।

मूर्ध्नि चैवमुपाघ्राय चिर जीवेत्युवाच ह।।[3]

चरण संवाहन –

राजागण ऋषि से आशीर्वाद एव वर कामना निमित्त अर्घ्य, पूजा, फल, सुगधि एव चरण सवाहन (पैर दबाना) आदि द्वारा सेवा करके प्रसन्न करते थे। जैसे– राजा कार्तवीर्य गर्ग ऋषि का चरण सवाहन इत्यादि करके अर्घ्य फूल–माला, सुगधि, जल, फल और चन्दनादि द्वारा सेवा करके प्रसन्न किया था।[4] मार्कण्डेय पुराण मे शिष्टाचार का उल्लेख तो अनेक स्थलो पर प्राप्त होता है, किन्तु अशिष्टता का भी उल्लेख यत्र–तत्र प्राप्त होता है। यम ने क्रोधित होकर अपनी मा पर पैर से प्रहार किया था जो शिष्टाचार का साक्षात् उलघन था।

"पदा सन्तर्जयामास छायासज्ञा यमोमुने।"[5]

1 मार्कण्डेय पुराण 125/6

2 मार्कण्डेय पुराण 124/30–34

3 मार्कण्डेय पुराण 21/107

4 मार्कण्डेय पुराण 17/2

5 मार्कण्डेय पुराण 103/19

इस अशिष्ट व्यवहार से मा ने अपने ही पुत्र को शाप दिया कि – "मैं तुम्हारे पूज्यनीय पिता की भार्या हूँ मुझ पर पद दिखाकर क्रोध किया अतएव तुम छिन्न पद होगे अर्थात् तुम्हारा यह चरण कटकर गिर जायेगा, इसमे सदेह नही।"[1]

आवास –

मनुष्य को आवास की आवश्यकता का अनुभव कैसे हुआ इसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे किया गया है। पहले तो लोग इधर–उधर घूमकर जीवन यापन करते थे क्योकि वे स्वाभाविक रूप से तृप्त रहते थे। किसी भी वस्तु की इच्छा होने पर रस और उल्लास वाली अन्य सिद्धि उनकी इच्छा पूरी कर देती थी, लेकिन धीरे–धीरे उनमे राग उत्पन्न हुआ सर्दी–गर्मी से बचने के लिये निवास स्थान का उपाय करने लगे। सर्वप्रथम लोगो ने पुरो का निर्माण किया,पर्वतो, कन्दराओ एव वृक्षो के अन्दर निवास करना छोड कर अपने बनाये हुये घरो मे रहने लगे।

"पर्वतो दधिसेविन्यो ह्यनिकेतास्तु सर्वश ।"[2]

" मरुधन्वसु दुर्गेषु पर्वतेषु दरीषु च।
सश्रयन्ति च दुर्गाणि वाक्षै पार्वतमौदकम्।।"[3]

पहले जो वृक्ष घरो के रूप मे प्रयोग किये जाते थे उसी से प्रेरणा लेकर व्यक्ति ने अपने घरो का निर्माण किया। वृक्षो की शाखाये जिस प्रकार ऊँची–नीची होती थी, उसी प्रकार ढालू और ऊँचे शिखर वाले घर बनाये गये। मार्कण्डेय पुराण मे पुर से प्रारम्भ कर आवास–निर्माण तक के क्रम का क्रमश चित्रण मिलता है।

पुर–

मार्कण्डेय पुराण मे पुर को उच्च श्रेणी मे रखा जाता था। यह दो कोस लम्बा और उसका आठवा भाग चौडा होता था। इसके चारो ओर चहार–दीवारी एव खाइया होती थी। इसका पूर्व एव उत्तर का भाग जल द्वारा प्लावित होता था। जल द्वारा प्लावित होना उत्तम माना गया हैं। बाहर निकलने के लिये बास का बना हुआ सेतु बनाया जाता था।

1 मार्कण्डेय पुराण 103/20
2 मार्कण्डेय पुराण 46/15
3 मार्कण्डेय पुराण 46/35

खेटक –

इसकी लम्बाई–चौडाई पुर से आधी होती थी। इसे खेडा या गाव भी कहा जा सकता है।

खर्वटक –

खेटक के लम्बाई–चौडाई से आधी होती थी, अर्थात् पुर के चौथे भाग के बराबर होती थी।

द्रोणीमुख –

इसकी लम्बाई–चौडाई पुर के आठवे भाग के बराबर होती थी, अर्थात् खर्वटक के आधी होती थी। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार वह गाव जो चार सौ मे प्रधान हो।

खर्वट –

इस पुर मे दीवार तो होता था किन्तु खाई नहीं होती थी। पर्वत पर बसे हुये गाव को खर्वट कहते थे।

शाखानगर –

जहॉ मत्री एव सामन्त रहते हो एव भोग्य वस्तुओ की बहुलता हो।

ग्राम –

जहॉ अधिकाश शूद्र रहते थे। समृद्ध कामगर मजदूर रहते थे। जहॉ खेती के योग्य भूमि होती थी। बाग–बगीचे होते थे, उसे ग्राम कहा जाता था।

वसति –

विशेष कार्य के लिये जहॉ अन्य स्थानो से नगर आदि से लोग आकर रहते थे उसे वसति या बस्ती कहा जाता था।

द्रमी –

जहॉ अधिकाश दुष्ट लोग रहते थे, जिनके पास अपनी निजी खेती नहीं थी। बलपूर्वक लूटपाट से जीविकोपार्जन करते थे। उन्हे द्रमी कहा जाता था। ये लोग राजा के प्रिय होते थे।

घोष –

"गोपाल लोग जहॉ अपने बर्तन भाडा गाडी पर लादकर रखते हैं। जहॉ गाये अधिक वास करती है एव जहॉ बाजार–हाट न हो अपनी इच्छानुसार बिना धन–धरती मिलती हो उनको घोष कहते हैं।"

"शकटारूढ भाण्डैश्च गोपालैर्विपण विना।

गो समूहैस्तथा घोषो यत्रेच्छा भूमि केतन ।। 1

यहॉ दूध–दही बहुलता से प्राप्त होता था, लोग गाडियो मे लादकर जगह–जगह गो–रस बेचते थे।

माप –

मार्कण्डेय पुराण मे वस्तुओ की लम्बाई–चौडाई को मापने की एक निश्चित मात्रा तो बना ली गयी थी किन्तु वस्तुओ को तौलने की प्रणाली का उल्लेख नहीं प्राप्त होता। लम्बाई–चौडाई की माप के लिये पहले अगुलि से नापकर माप तैयार किया जाता था। मानदण्ड की सूक्ष्म ईकाई को परमाणु कहा गया। जाली के छिद्रो मे किरण पडने से सूक्ष्म रज दिखायी देते हैं उसके तृतीयाश को परमाणु कहते हैं। परमाणु से बडा त्रसरेणु,, त्रसरेणु से बडा केशाग्र, केशाग्र से बडा निष्क आदि रखा गया जो निम्न है–

30 परमाणु मे – 1 त्रसरेणु

30 त्रसरेणु मे – 1 केशाग्र

30 केशाग्र मे – 1 निष्क

30 निष्क मे – यूका या यव

8 यव मे – 1 अगुल

6 अगुल मे – 1 पद

2 पद मे – 1 बालिस्त

2 बालिस्त मे – 1 हाथ

4 हाथ मे – 1 धनुर्दण्ड

2000 धनुष म – 1 गव्यूति

4 गव्यूति मे – 1 योजन

धनुर्दण्ड को नाडिका युग भी कहा गया है। सख्या निरूपण मे पडित जनो ने इस प्रकार अपना माप तैयार किया।

1` मार्कण्डेय पुराण 46/50

चतुर्थ अध्याय
राजनीतिक वर्णन

राज्य के सप्ताङ्ग

मार्कण्डेय पुराण मे राजनीति सम्बन्धी सामग्री पर्याप्त रूप मे नही प्राप्त होती । सामाजिक एव दार्शनिक विचारो का ही मुख्य रूप से कथन होने के कारण इसका सामाजिक एव दार्शनिक महत्व ही प्रमुख है तथापि छिटपुट कथाओ के अन्तर्गत वर्णित राजनीति सम्बन्धी सामग्री के आधार पर ही इस अध्याय मे राजनीति का विवेचन किया जा रहा है –

राज्य के सप्ताङ्ग होते है ये सात अग निम्न हैं –

1 स्वामी, 2 आमात्य, 3 जनपद, 4 पुर (दुर्ग), 5 कोष ,6 दण्ड, 7 मित्र

कौटिल्य ने राज्य के इन सात अङ्गो का वर्णन करते हुये लिखा है कि राज्य की ये सात प्रकृतिया यदि गुण से युक्त हो तो वे राज्य के लिये सम्पत्ति होती है। ये सातो एक दूसरे के लिये अङ्गो के समान है।

राजा :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार राजा क्षत्रिय वश का होता था किन्तु कही अनार्य जाति के राजाओ का शासन भी प्राप्त होता है इस युग मे भी राजा कुलीन वश का होता था। मार्कण्डेय पुराण मे राजा की स्थिति राज्य मे सुदृढ थी राजा पृथ्वी का पालक एव धर्मात्मा प्रवृत्ति का होता था। राजा को शक्ति सम्पन्न होना चाहिये। ऐसा समझा जाता था कि "सूर्य जिस प्रकार दिगन्त व्याप्त अन्धकार के समूह का नाश करते है उसी प्रकार शूरवीर्य राजा सम्पूर्ण भुवन मे विराजमान होते हैं।"

धार्मिक प्रवृत्ति के राजा कभी–कभी युद्ध मे जब अधीर होते थे तो उन्हे एक अपर शक्ति की सहायता प्राप्त होती थी जैसे – राजा बलाश्व को प्राप्त हुआ था।

"पुररोधेन तेनाथ कुपित स महीपति,

स्वल्पकोशोऽल्पदण्डश्च वैकल्व्य परम गत ।

अपश्यमान शरण सबलो द्विजसत्तम,

करौ मुखाग्रत कृत्वा निशश्वासार्तमानस ।। 1

राजा जब शत्रुओ को जीत लेता था तो वह अन्य नामो से भी विख्यात हो जाता था जैसे राजा बलाश्व "करन्धम" नाम से विख्यात हुये। मार्कण्डेय पुराण मे सात हजार वर्ष तक राजा द्वारा प्रजापालन का उल्लेख प्राप्त होता है। अर्थात् राजा लम्बी अवधि तक राज्य पर शासन करते थे। राजा एक बार जब राज्य त्याग देते थे तो पुन उस राज्य को ग्रहण नही करते थे।

राज्याभिषेक –

राज्याभिषेक कृत्य द्वारा ही कोई क्षत्रिय राजा घोषित होता था बिना अभिषेक के राजा नही कहलाते थे। राजा के राज्याभिषेक मे नगर के सभी लोग सम्मिलित होते थे – गन्धर्व, अप्सरा, नगरवासी, प्रजागण के अतिरिक्त नदी, समुद्र, सुमेरु पर्वत आदि पशु–पक्षी भी अपने राजा के राज्याभिषेक मे अभिषेक सामग्री लेकर उपस्थित होते थे और राजा का राज्याभिषेक करते थे।

प्रथम अभिषेक :–

राजा का प्रथम अभिषेक उसके इष्टजन करते थे। विष्णु रूपी भगवान दत्तात्रेय ने कार्तवीर्य अर्जुन का सबसे पहले अभिषेक किया। बाद मे समुद्र, ऋषि, प्रजागण ने अपने राजा का राज्याभिषेक किया।

राजा बनने की घोषणा –

राज्याभिषेक होने के बाद पूरे नगर मे 'राजा बन जाने की" घोषणा की जाती थी।

"अघोषयामास तदा स्थितो राज्ये स हैहय 2

" हैहय राज्य मे स्थित हुये यह घोषणा सर्वत्र हो गयी " राज्य सिहासन पर आसीन होने के बाद राजा अपनी प्रजा के प्रति अपने कर्तव्यो का अनुभव करता था एव प्रजाहित मे अनेक तरह की घोषणा करता था जिससे प्रजा अपने आपको सुरक्षित अनुभव कर सके जैसे अर्जुन ने राजा बनने के बाद यह घोषणा की कि राज्य मे उसके अतिरिक्त अपने पास कोई अस्त्र नही रखेगा वह स्वय अधर्म का नाश एव धर्म की रक्षा करेगा।

1 मार्कण्डेय पुराण 118/15–16
2 मार्कण्डेय पुराण 17/26

शिक्षा –

क्षत्रिय बालको की शिक्षा योग्य गुरु के द्वारा ही ली जाती थी राजा अपने पुत्र को शिक्षा प्राप्त करने के लिये योग्य ऋषि के पास भेज देते थे। शिक्षा ग्रहण करने के लिये सर्वप्रथम वेद की शिक्षा लेना अनिवार्य था तत्पश्चात् सभी शास्त्रो की उसके बाद धनुर्वेद अन्त मे अस्त्रो (धनुष, खड्ग आदि) की शिक्षा लेनी पडती थी। मरुत् ने यथाकाल मे आचार्य से शिक्षा ग्रहण किया था एव भृगुवशी भार्गव से सम्पूर्ण अस्त्रो की शिक्षा ली थी।

ततोऽस्त्राणि स जग्राह भार्गवाद् भृगुसम्भवात्।

विनयावनतो विप्र गुरो प्रीतिपरायण ।। [1]

राजा दम ने दैत्य श्रेष्ठ दुन्दुभी से अस्त्र एव सहार की शिक्षा ग्रहण किया था। एव शक्ति मुनि से वेद–वेदाङ्ग आर्ष्टिषेण के निकट योग शिक्षा ग्रहण किया था। [2]

राजा के गुण –

मार्कण्डेय पुराण मे राजा के लिये "षाड्गुण्यविदितात्मना" [3] शब्द का प्रयोग प्राप्त होता है। अर्थात् राजा को सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव एव समाभाव इन छ गुणो से युक्त होना चाहिये। इन्ही गुणो से राजा का ऐश्वर्य बढता है क्योकि राष्ट्र की जन–धन से नित्य वृद्धि करना सुराजा के गुण होते है।

सत्यवादी –

सत्यवादी होना राजा का महान गुण है। राजा हरिश्चन्द्र की कथा हमे मार्कण्डेय पुराण मे विस्तार से मिलता है जो सत्यवादी राजा का बहुमूल्य उदाहरण है।

ज्ञाता –

राजा सभी वेदो का ज्ञाता होता था उसे सभी शास्त्रो का ज्ञान होता था। सहस्त्र यज्ञ सम्पादन करने वाला, ब्राह्मणो को दान देने वाला होता था। ये सभी कुशल राजा होने के गुण थे।

---

1 मार्कण्डेय पुराण 125/14

2 शक्ते सकाशाद्वेदाश्च वेदाङ्गन्यखिलानि च।
तथार्ष्टिषेणाद्राजर्षेर्जगृहे योगमात्मवान्।। मार्कण्डेय पुराण 130/7

3 मार्कण्डेय पुराण 24/10

दयावान –

राजा को दयावान होना चाहिये। वृद्ध, बालक एव आतुर पर दया करनी चाहिये अन्यथा वह मनुष्य नही राक्षस है।

योगी –

राजा को योगी होना चहिए। योग शक्ति शून्य राजा राजधर्म का निर्वाह नही कर सकता राजा कार्तवीर्य अर्जुन योगित्व धारण करने के पश्चात् ही राज्यभार धारण करने का परामर्श देते हैं।

नीतिज्ञ –

राजा को राजनीति का सम्यक् ज्ञान होना आवश्यक है। राजा को अपने मत्री प्रजा अमात्य आदि से परामर्श करके नीतिपूर्वक कार्य करना चाहिये।

प्रागात्ममन्त्रिणश्चैव ततो भृत्या महीभृता।
ज्ञेयाश्चानन्तर पौरा विरुध्येत ततोऽरिभि ।। [1]

राजा को पहले अपनी आत्मा को , फिर मत्री, भृत्य, कुटुम्ब का हृदय जीतना चाहिये। उसके बाद प्रजा को अनुरक्त करके शत्रुओ से विरोध करना चाहिये अन्यथा राजा पराजय का मुख देखता है।

राजा का कर्तव्य –

राजा का कर्तव्य था वह प्रजा के हित मे कार्य करे किसी भी व्यक्ति द्वारा त्रुटिपूर्ण काम करने पर उसे दण्डित करे चाहे वो उसका पुत्र ही क्यो न हो। आवश्यकता पडने पर दमन करने के लिये वह अपने

पुत्र से भी युद्ध करता था। युद्ध मे पराजित राजा दूसरे जीते हुये राजा की अर्घ्य द्वारा पूजा करते थे जैसे कि राजा विशालराज ने राजा करन्धम की पूजा की थी। राजा अपने सभी कर्तव्यो को पूरा न कर सकने पर वह राज्य मे पाप का भागी होता था। मार्कण्डेय पुराण मे मदालसा द्वारा अपने पुत्र को दिये गये राज्य सम्बन्धी उपदेश के द्वारा राजा के राज्याधिकार एव कर्तव्य की विस्तृत व्याख्या प्राप्त होती है। मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क को राजा का धर्म एव राजनीति का ज्ञान कराते हुये राजा के कर्तव्य एव धर्म की महत्ता से अवगत कराया।[2]

1 मार्कण्डेय पुराण 24/11
2 मार्कण्डेय पुराण 24/5–34

प्रजारञ्जन –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार प्रजा को सुखी रखना राजा का प्रथम कर्तव्य है। राजा शत्रु–मित्र एव प्रजा पुत्र मे समान दृष्टि रखता था। दुष्टो के प्रति यम के समान उग्र एव शिष्टो के प्रति चन्द्रमा के समान सौम्य दृष्टि रखना ही उसके लिये उचित माना जाता था। जिस प्रकार सूर्य एव चन्द्रमा आकाश से पृथ्वी को देखते है वैसे ही राजा को अपनी प्रजा के प्रत्येक सुख–दु ख का ध्यान रखना चाहिये। सूर्य एव चन्द्र के समान तीक्ष्ण एव मृदु बने।

सचयी–व्यापनशील –

राजा को पिपीलिका के समान सचयी होना चाहिये।[1] यथासमय समस्त आवश्यक वस्तुओ का सग्रह भी राजा को करना चाहिये। राजा को व्यापनशील भी होना चाहिये। मदालसा ने शाल्मली बीज से व्यापनशील होने की उपमा दी है।

व्यसनो का त्याग –

मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क से कहा कि राजा को सात व्यसनो का त्याग करना चाहिये। कटुभाषण, कठोरदण्ड, धन का अपव्यय, मदिरापान, कामासक्ति, आखेट मे व्यर्थ समय गवाना, एव द्यूतक्रीडा जैसे व्यसनी नही होना चाहिये।

चरित्र–शिक्षा –

राजा को पशु–पक्षियो आदि द्वारा चरित्र शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

काक कोकिल भृङ्गाणा बकव्याल शिखण्डिनाम्।
हस कुक्कुट लोहाना शिक्षेत चरित नृप ।।[2]

राजा को जिस प्रकार कौआ आलस्यरहित होता है, कोयल दूसरे से अपना काम निकलवाती है, भ्रमर जैसे सबसे रस लाभ लेता है वैसे रस ग्रहण करना चाहिये। मृग के समान चचल, हस के समान नीर–क्षीर का विवेक ज्ञान गुणग्राही, कुक्कुट के समान ब्रह्ममुहूर्त मे जागरण, मयूर के समान अपनी सम्पत्ति विस्तृत करना एव लोहे के समान अभेद्य एव मजबूती ग्रहण करना चाहिये।

1 मार्कण्डेय पुराण 24/19
2 मार्कण्डेय पुराण 24/18

आचरण –

मदालसा के अनुसार राजा को पृथ्वी पालन करने के लिये निम्न पॉच देवताओ के समान आचरण करने की प्रेरणा देती है।

शक्रार्कयमसोमाना तद्वद्वायोर्महीपति ।
रूपाणि पच कुर्वीत महीपालन कर्मणि।। 1

इन्द्र राजा को अर्थ आदि दान करने की प्रेरणा देते हैं, सूर्य सूक्ष्म प्रकार से राज्य से कर–ग्रहण करने की, यम समदर्शी होने की, चन्द्रमा राजा को सबके प्रति मधुर व्यवहार एव सुखी रखने की वायु गुप्त भाव से बधु–बाधव आदि के चरित्र के खोज की प्रेरणा देता है।

शिक्षा–ग्रहण :–

राजा को व्यभिचारिणी के समान प्रजा को प्रसन्न रखना चाहिये, शूल से भी शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये एक बार मे शत्रु हत हो जाय ऐसा अस्त्र चलाना चाहिये, गर्भिणी के स्तन के समान सचयशील होना ही लाभप्रद है, इसी प्रकार पद्म, शरभ एव गोपाङ्गना से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये। जिससे उसका राज्य उन्नति को प्राप्त हो सके।

दोषों का परित्याग :–

राजा को काम, क्रोध, लोभ, मद, मान एव हर्ष के वशीभूत नही होना चाहिये। इन सभी दोषो का परित्याग करना चाहिये। मदालसा कहती है जैसे काम मे राजा पाण्डु, क्रोध मे अनुह्लाद, लोभ मे ऐल, मद मे वेन, मान मे अनायुष पुत्र, हर्ष मे राजा पुरञ्जय थे। राजा को इन सभी राजाओ से प्रेरणा लेनी चाहिये, अन्यथा राजा का पतन हो जाता है।

बुद्धि–

राजा को बुद्धि का प्रयोग चाण्डाल स्त्री के समान करना चाहिये। इस सन्दर्भ मे एक उदाहरण प्रस्तुत करते हुये कहा गया है कि राजा "चाण्डाल स्त्री से बुद्धि सीखे कि, वह किसी व्यवहार से मुख नहीं मोडती"। 2

1 मार्कण्डेय पुराण 24/23
2 मार्कण्डेय पुराण 24/22

प्रतिज्ञा :—

राजा अपने कथन को सत्य करने का विश्वास दिलाने के लिये प्रतिज्ञा करते थे। यह प्रतिज्ञा प्राय उचित कर्म को करने के लिये ही होता था। राजा करन्धम के पुत्र ने अपने पिता से पुत्रोत्पत्ति के लिये प्रतिज्ञा की थी। 1

सम्यक पालन हेतु वर एव आशीर्वाद की अभ्यर्थना :—

राजा धर्मपूर्वक प्रजा पालन के लिये ऋषि–मुनि तथा अपने पूज्य आदि से वर एव आशीर्वाद ग्रहण करने के लिये उनकी सेवा करके प्रसन्न करते थे उनकी पूजा–अर्चना आदि अन्य कार्यों को किया करते थे। राजा कार्तवीर्य ने दत्तात्रेय जी से उत्तम राजा बनने के लिये वर एव आशीर्वाद की अभ्यर्थना की थी।2

स्व–स्वधर्मस्थापन –

राजा को चाहिये कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने–अपने धर्म का पालन करने की स्वतन्त्रता दे। एक दूसरे के धर्म का सम्मान करे एव बुद्धिमान पुरुषो से परामर्श करे।

एक क्षत्र राज्य :—

राजा का एक क्षत्र राज्य था। सभी विभागो को वह अकेला ही देखता था। राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने किसी को भी अस्त्र रखने की आज्ञा नहीं दी थी और ग्राम पालक, क्षेत्ररक्षक, तपस्वी ब्राह्मण, पशुपालक एव सभी राजाओ के रक्षण का कार्य उन्होंने स्वय किया था। 3

क्षय वृद्धि का ज्ञान :—

राजा के राज्य मे किसका नुकसान हो रहा है इसकी जानकारी राजा को होनी चाहिये। राज्य मे कृषि, शिक्षा, भूमि आदि के क्षय का ज्ञान होना चाहिये। इसी तरह वृद्धि का भी ज्ञान होना चाहिये। उसके राज्य की समृद्धि का लाभ कोई शत्रु राज्य को नहीं होनी चाहिये।

1 मार्कण्डेय पुराण 125/4

2 मार्कण्डेय पुराण 7/14–18

3 मार्कण्डेय पुराण 17/30

आर्त्त पुरुष की रक्षा :–

आर्त्त पुरुष की रक्षा करना राजा का कर्त्तव्य था अन्यथा उसके सभी लोक–परलोक के सुख, यज्ञ, दान, तपस्या सभी नष्ट हो जाते हैं।

शरणागत की रक्षा :–

शरण मे आये हुये लोगो की रक्षा करना राजा का परम् कर्त्तव्य था। राजा अवीक्षित ने शरण मे आये हुये नागो की रक्षा की थी।

"शरणागतास्तव वय प्रसाद क्रियता नृप"।1

शत्रु राजा भी अगर शरण मे आये तो राजा का कर्त्तव्य है कि वह उसकी रक्षा करे अन्यथा उसके जीवन को धिक्कार माना जाता था।2

शत्रु के प्रति व्यवहार :–

राजा को उलूक के समान शत्रुओ के प्रति व्यवहार करना चाहियें। जैसे उलूक कोई आडम्बर न करके शत्रुओं को नष्ट करता है।

कर ग्रहण :–

राजा अपनी प्रजा से आय के अनुसार कर लिया करते थे। प्राप्त कर से राज्य का कार्य एव राजा का वेतन निश्चित होता था। जैसे वैश्य लोग अपनी आय का 12वा भाग कर रूप मे देते थे। जिससे चोर, डाकू आदि से रक्षको द्वारा उनकी रक्षा हो सके। गोपालक घी, मट्ठा, दूध आदि बेचकर अपनी आय का छठा भाग कर रूप मे देते थे। अनाज बेचकर जो आय कृषक को होती थी उसका छठा भाग कर रूप मे राजा को देते थे।

"षड् भाग च कृषीवला"। 3

1 मार्कण्डेय पुराण 127/21

2 मार्कण्डेय पुराण 127/25

राजा गौ एव ब्राह्मण से कर नहीं लेते थे राजा अपनी प्रजा से प्राप्त कर का छठा अश यज्ञ सम्पादन मे लगात थ। आय का अधिकाश रुपया कर मे लेने पर राजा चोर कहलाता था। राजा कर लेने के बाद भी यदि अपने नागरिक की सुरक्षा न कर सके तो वह नरक मे जाता है।

वेतन –

राजा का वेतन पण्डितो ने निर्धारण किया था। प्रजा से उपलब्ध होने वाले आय का छठा भाग राजा को वेतन रूप में मिलता था। इसके अतिरिक्त प्राप्त धन को व्यक्तिगत रूप से राजा खर्च नहीं कर सकता था।

ढिंढोरा पिटवाना :–

किसी विशष सूचना को सूचित करने के लिये राजा पूरे नगर मे ढिढोरा पिटवाता था। ढिढोरा का "धाष" शब्द स नामोल्लेख किया गया है।

उचित न्याय व्यवस्था :–

मूढ़ बुद्धि मनुष्य पर भी राजा को दया करनी चाहिये बिना अपराध जाने बुद्धिमान पुरुष दण्ड देते हैं तो उससे श्रेष्ठ एक अज्ञानी पुरुष है। दण्डनीय को दण्ड देना, शिष्ट पुरुषों का सम्यक् पालन राजा का कर्त्तव्य है।

"मित्र, बान्धव, पिता अथवा गुरु आदि जो प्रजापालन मे विघ्नकारी होते थे वे अवश्य ही राजा के द्वारा वध होने के योग्य माने जाते थे।" [1] जब तक राजा यथार्थ रूप मे सभी बातो का पता न लगा ले मित्र, आप्त तथा बन्धु किसी की भी बातों पर उसे विश्वास नहीं करना चहिये। अन्यथा शत्रु भी अवसर की खोज मे रहते हैं क्योंकि एक छाटा शत्रु भी बहुत बडा नुकसान करा सकता है।

"विश्वासो न तु कर्त्तव्यो राजा मित्राप्त बन्धुषु" [2]

राजा को समय आने पर शत्रु की भी बातों पर विश्वास कर लेना चाहिये।

"कार्ययोगादमित्रेषु विश्वसीत नराधिप" [3]

....

1 मार्कण्डेय पुराण 128/27
2. मार्कण्डेय पुराण 24/9
3 मार्कण्डेय पुराण 24/9

उत्तराधिकार का नियम :–

उत्तराधिकार का पद आनुवंशिक था इसीलिये पुत्रोत्पत्ति आवश्यक थी। राजा के वृद्ध होने पर वह अपने पुत्र–पौत्र को राज्य सम्पत्ति सौंप कर वन में चले जाते थे। अनेक पुत्र होने पर ज्येष्ठ पुत्र को राज्य दिया जाता था। उसके छोटे भाई उनके पुत्र के समान होते थे। भृत्य के समान आचरण करते थे। कभी–कभी विशेष परिस्थितियों में पिता द्वारा राज्य ग्रहण न करने पर पौत्र राज्य का भार सम्भालते थे। जैसे राजा करन्धम के बाद उनके पौत्र मरुत ने राजा का पद ग्रहण किया था।

राजा का धर्म :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार राजा के तीन मुख्य धर्म थे –

"दातव्यं रक्षितव्यं च धर्मज्ञेन महीक्षिता।

चापं चाधम्य योद्धव्यं धर्मशास्त्रानुसारतः।। 1

दातव्यं विप्रमुख्येभ्यो :–

राजा को सद्कुलोत्पन्न उच्च ब्राह्मण को ही दान करना चाहिये जो कर्मणा ब्राह्मण हो एवं व्रत, अनुष्ठान एवं तपस्या में तत्पर रहता हो।

रक्ष्या भीताः सदा :–

डरे हुये पुरुष की रक्षा करनी चाहिये विशेष परिस्थितियों में चोर, अपराधी एवं अधर्मी की भी रक्षा करनी चाहिये।

युद्धं कर्त्तव्यं परिपन्थिभिः 2 :–

शत्रुओं के संग युद्ध करना चाहिये, अपने से दुर्बल पर अत्याचार नहीं करना चाहिये।

इसके अतिरिक्त निज कार्य के अनुष्ठान में राजा को अपनी पत्नी सहित यज्ञ करने के लिये बैठना पड़ता था। राजा को ऋषि, मुनि एवं अन्य सम्मानित पूज्य लोगों की अर्घ्य द्वारा सम्मान करना चाहिये। युद्ध में पराजित राजा दूसरे जीते हुये राजा की अर्घ्य द्वारा पूजा करते थे। जैसे कि राजा विशालराज ने राजा करन्धम की अर्घ्य द्वारा पूजा की थी।3

1. मार्कण्डेय पुराण 7/18
2. मार्कण्डेय पुराण 7/20
3. मार्कण्डेय पुराण 121/23

नरक भोग रहे पापियो के प्रति राजा को सहानुभूति रखना चाहिये। राजा सुमति ने नरक भोग रहे पापियो के सुख के लिये यम से कहा – "यदि मेरे खडे होने से इनकी समस्त यत्रणा नष्ट होती है तो हे भद्रे मुख! स्थाणु के समान अचल होकर मैं इस स्थान मे ही वास करूगा।" 1

इस प्रकार धर्मपालन पर जोर देते हुय मार्कण्डेय पुराण मे यहाँ तक कहा गया है कि नरक मे भी राजा को अपने धर्म का पालन करना चाहिय।

विवाह –

राजा के अनेक विवाह का वर्णन भी इस पुराण मे प्राप्त होता है। राजा स्वराष्ट्र की 100 पत्निया थी। राजा की अनेक स्त्रिया होने पर भी प्रजा मे किसी प्रकार का कोप व्याप्त नही होता था। किन्तु कभी कभी रानी द्वारा निरादर किये जाने पर राजा स्वय अपनी पत्नी को वन मे छोड देते थे।

मार्कण्डेय पुराण मे यत्र–तत्र राजा द्वारा अनेक स्त्रियो को बलात रखने का उल्लेख भी मिलता है। राजा अवीक्षित ने वरा, गौरी, सुभद्रा, लीलावती, निभा, कुमुद्वती, मान्यवती को तो स्वयवर द्वारा तथा अन्य स्त्रियो को राजा अवीक्षित ने बलात् ग्रहण किया था।

मत्री –

राजनीतिक दृष्टि से मत्री का पद अत्यन्त महत्वपूर्ण था। ये राजा के दरबार मे रहते थे राजा इनसे परामर्श लेता था। 2 मार्कण्डेय पुराण मे विश्ववेदी मत्री का उल्लेख मिलता है जो खनित्र के अनुज भ्राता शौरि का मत्री था। जो कि राजा को कर्त्ता एव अपने आपको (मत्री) कारण मानते थे। इस प्रकार राजा और मत्री मे कार्य कारण सम्बन्ध था।

"त्व कर्त्ता करण वयम्।"

मार्कण्डेय पुराण मे कहा गया है कि राज्य करने वाले अर्थात् राजा का कार्य कर देना ही मत्री का ईष्ट है।

"कार्यनिष्पादक राज्य करण कर्तुरिष्यत।" 3

1 मार्कण्डेय पुराण 15/58

2 तस्मिन्पुर गत्वा महीपति । मन्त्रयामासमन्त्रज्ञै पुरमध्ये तु मन्त्रिभि। मार्कण्डेय पुराण 113/28

3 मार्कण्डेय पुराण 114/36

मत्री के चरित्र का दूसरा पक्ष भी मार्कण्डेय पुराण मे इस प्रकार प्राप्त होता है कि मत्री लोग राजा के छोटे भ्राताओ मे फूट डालने का भी षडयत्र रचते थे। एवं राजा को दुष्ट मन्त्रणा भी देते थे । ज्येष्ठ भ्राता को अपने अधीन करके सम्पूर्ण पृथ्वी पर एकाधिकार करने का परामर्श देते थे। 1

सचिव –

सभवत राजा के सहायक होने के कारण इन्हे सचिव कहा गया है। ये नीतिशास्त्र विशारद होते थे। एतरेय ब्राह्मण मे 'सचिव' सहचर अथवा मत्री के लिये प्रयुक्त एक साधारण शब्द है। 2

आमात्य :–

मार्कण्डेय पुराण मे इनके कार्यों आदि का वर्णन नहीं प्राप्त होता अपितु नामोल्लेख मात्र प्राप्त होता है।

चर :–

चरो को नियुक्ति राजा लोग अपने राज्य मे दुष्ट–अदुष्ट वृत्तान्त की जानकारी के लिये करते थे। राजा मरुत ने अपने राज्य मे चरो की नियुक्ति नहीं की थी। इसीलिये उनके राज्य में बहुत अव्यवस्था उत्पन्न हो गयी थी।

सूत :–

यह लोग राज्य मे रहकर राजा की स्तुति करते थे। ये लोग राजवशावली एव राजकीय परम्परा के सरक्षक थे।

सारथि :–

रथ चलाने का कार्य करने के कारण इन्हें सारथि कहा जाता था। ये लोग राजा के रथ को चलाते थे।

द्वारपाल :–

द्वारपाल राजकीय आज्ञा का पालन करते थे यहाँ तक कि राजा की आज्ञा होने पर वह अपने राज्य की रानी को वन मे छोड़ आते थे।

....

1 मार्कण्डेय पुराण 114/43
2 एतरेय ब्राह्मण 3/10/1

राजकोष –

मार्कण्डेय पुराण मे राजकोष का वर्णन भी यत्र–तत्र प्राप्त होता है जिसमे प्रजा द्वारा एकत्रित धन का सचय था। राजा प्रजा के हित के लिये उसी राजकोष से यज्ञ आदि धार्मिक कृत्य भी सम्पादित करते थे। ऐसी मान्यता थी कि यज्ञ के बिना राजकोष विफल होता है।

"अशोभन च यत्कोशो विफलोयमयज्विन ।"1

राजकोष मे इतना धन एकत्र होता था कि जिससे आपातकाल मे राजकोष के धन से दीर्घकाल तक निर्वाह हो सके।

मित्र –

राजा के सन्मित्र का उल्लेख भी इस पुराण मे प्राप्त होता है। राज्य की सुदृढता एव समृद्धि के लिये अच्छे मित्रो की आवश्यकता होती है। मार्कण्डेय पुराण मे राजा सुदेव के मित्र नल का उल्लेख प्राप्त होता है। मित्रता वशानुगत भी चलती थी। मित्रता वैवाहिक सम्बन्धो मे भी परिवर्तित होने के प्रमाण प्राप्त होते हैं। भलन्दन पुत्र वत्सप्री ने अपने पिता के मित्र विदूरथ की कन्या मुदावती को कुजम्भ राक्षस से मुक्त कराया था। तत्पश्चात् राजा विदूरथ ने अपनी कन्या मुदावती से राजकुमार वत्सप्री से विवाह कर दिया था –

"ततस्तयो स राजेन्द्रश्चक्रे वैवाहिक क्रमम्।
मुदावत्याश्च दुहितुर्भलन्दन सुतस्य वै।।" 2

सेना .–

शत्रुओ को आच्छादित एव अपने राज्य को अन्य आक्रमणो से सुरक्षित रखने के लिये राजा अपने राज्य मे सेनाओ को सगठित करता था। मार्कण्डेय पुराण मे चतुरङ्गणी सेना का उल्लेख प्राप्त होता है इसके अतिरिक्त रथ, हाथी, घोडे एव पैदल आदि भी सेना के अङ्ग थे।

सेनापति :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार युद्ध के समय सेनापति सेना का नेतृत्व करता था।

....

1 मार्कण्डेय पुराण 129/26

2 मार्कण्डेय पुराण 113/72

रक्षक —

रक्षक लोग मार्ग मे आने जाने वाले व्यवसायी, नागरिक आदि की चोर, डाकुओ से रक्षा करते थे। राजा की ओर से इनका वेतन निर्धारित था।

युद्ध :—

मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त राजनीतिक युद्धो का कारण निम्न था। किसी राज्य पर हमला होने पर वहाँ का राजा अपने शत्रु से युद्ध करता था। राजा के शिथिल होने पर पडोसी राजा उसके राज्य पर अपना आधिपत्य स्थापित करता था। युद्ध अधिकतर बदला लेने के लिये होते थे। पक्षी एव राक्षस युद्ध का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। कन्धर पक्षी अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने के लिये विद्युद्रूप राक्षस के साथ युद्ध किया था। आडिबक युद्ध का वर्णन हमे मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। [1] इसके अतिरिक्त देत्य–देवता युद्ध का भी वर्णन मिलता है। अदिति एव दिति पुत्रो के मध्य सग्राम हुआ था। युद्धो मे मुशल द्वारा युद्ध, अस्त्र युद्ध, शस्त्र युद्ध, एव पैदल सैनिको द्वारा युद्धो आदि का वर्णन प्राप्त होता है। युद्ध मे माया का प्रयोग भी होता था। [2] राक्षस माया का प्रयोग करने मे निपुण थे।

इन युद्धो के अतिरिक्त मार्कण्डेय पुराण मे देवी एव महिषासुर आदि असुरो के युद्ध का वर्णन आगे के अध्याय मे वर्णित है।

अस्त्र :—

मार्कण्डेय पुराण मे अनेक प्रकार के अस्त्रो का वर्णन प्राप्त होता है। इनमे से कुछ युद्ध सम्बन्धी हैं कुछ दिव्य अस्त्र आदि हैं। सर्वप्रथम अस्त्रों की पूजा होती थी गध, माला, धूप, दीप आदि सामग्री द्वारा पृजा विधिपूर्वक हाती थी। अस्त्रो को अन्त पुर मे रखा जाता था।

प्रचण्डास्त्र :—

मार्कण्डेय पुराण मे एक विशेष प्रकार का अस्त्र प्राप्त होता है। इस प्रचण्डास्त्र को मनोरमा ने स्वरोचि को निवर्तन मत्र सहित दिया था। इस अस्त्र द्वारा दुष्टात्माओ का नाश होता था।

....

1 मार्कण्डेय पुराण /अध्याय 9

2 मार्कण्डेय पुराण 113/36

आग्नेय अस्त्र –

मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित इस कालाग्नि तुल्य इस अस्त्र से कृजृम्भ का वध हुआ था। [1]

संवर्त्तक अस्त्र –

राजा मरुत ने नागकुल के विनाश के लिये सवर्त्तक अस्त्र का प्रयोग नागो पर किया था।

कालास्त्र –

सवर्त्तक अस्त्र को काटने के लिये एव नागकुल की रक्षा के लिये मरुत के पिता अविक्षित ने मरुत के ऊपर चलाया था। कालास्त्र सम्भवत धनुष पर चढाया जाने वाला बाण था।

मुशल :–

यह बहुत बडा अस्त्र था जिसे विश्वकर्मा ने बनवाया था। लोग इस मुशल को सौनन्द कहते थे।[2] इस मुशल को जिस दिन कोई स्त्री छू लेती थी उस दिन यह मुशल वीर्यहीन हो जाता था। दूसरे दिन फिर उसमे वही बल आ जाता था। वेतसपत्र नाम का एक विशेष बाण प्राप्त होता है।

इसके अतिरिक्त मार्कण्डेय पुराण मे निस्त्रिश, शक्ति, शूल, फरशा, बाण, खड्ग, धनुष, गोधा, असि, गदा, ढाल, तलवार, दण्ड, माला, शर, मुद्गर एव ऋष्टि आदि अस्त्र–शस्त्रो का उल्लेख प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 113/57

2 मार्कण्डेय पुराण 113/23

पंचम अध्याय
धर्म और दर्शन

धर्म –

धर्म भारतीय जीवन का मूलाधार है। सामाजिक नियत्रण के क्षेत्र मे धर्म का महत्वपूर्ण स्थान है। धर्म का प्रमुख कार्य कुछ नैतिक मूल्यो को स्पष्ट करना तथा उसे भावनात्मक सरक्षण प्रदान करना होता है। ऐसी मान्यता है कि धार्मिक नियमो की अवहेलना मे ईश्वरीय प्रकोप का भय रहता है। इस प्रकार धर्म आध्यात्मिक ससार मे विचरण करने का निर्देश देता हैं।

अथर्ववेद मे 'धर्म' शब्द का प्रयोग धार्मिक क्रिया–सस्कार करने से अर्जित गुण के अर्थ मे हुआ है।[1] तैत्तिरीयोपनिषद 'सत्य वद्, धर्मं चर्' की प्रेरणा देता है।[2] मार्कण्डेय पुराण मे धर्म का वही स्वरूप प्राप्त होता है जो परम्परा से चले आ रहे थे और जिनका दिग्दर्शन रामायण, महाभारत मे स्थान–स्थान पर पाया जा चुका था।

मार्कण्डेय पुराण मे धर्म दो प्रकार का बताया गया है – काम्य , निष्काम्य।

काम्य – यह इस लोक मे फलदायक होता है।

निष्काम्य – परलोक मे फलदायक होता है।

सदाचारी पुरुष को ब्रह्ममुहूर्त मे शैया से उठकर सर्वप्रथम आचमन करना चाहिये। प्रात एव शाम को सध्या हवन करे। तामसिक वस्तुओ का त्याग करे, गुरु का आदर, प्रणाम करे, किसी की निन्दा न करे, किसी को दुखी न करे। अपने से अधिक विद्वान, लाचार, पतित, अनाथ आदि का आदर करे दूसरे का जनेऊ, कमण्डल आदि न ग्रहण करे। दातून करे, चित्रित वस्त्र न पहने, प्रत्यक्ष रूप से नमक न ग्रहण करे। पूर्वान्ह मे देवताओ का, मध्यान्ह मे मनुष्यो का एव अपरान्ह मे पितरो का पूजन करे।

पूर्वान्हे तात देवाना मनुष्याणा च मध्यमे।
भक्त्या तथा परान्हे च कुर्वीत पितृपूजनम्।। [3]

1 अथर्ववेद 9/9/17
2 तैत्तिरीयोपनिषद 1/11
3 मार्कण्डेय पुराण 31/75

मार्कण्डेय पुराण मे महाभारत को भारत कहा गया है सम्भवत इसी से अपने देश का नाम भारत पडा होगा। महाभारत को सभी शास्त्रो से युक्त बताया गया है इसे धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र और मोक्ष का साधन शास्त्र कहा गया है।

"अत्रार्थश्चैव धर्मश्च कामो मोक्षश्च वर्ण्यते।
परस्परानुबन्धाश्च सानुबन्धाश्च ते पृथक्।। 1

मार्कण्डेय पुराण का प्रारम्भ ही विष्णु वन्दना के बाद महाभारत सम्बन्धी चार प्रश्नो से होता है जिसे जैमिनि मुनि ने (जो कि स्वतन्त्र विचारो वाले मुनि थे) मार्कण्डेय ऋषि से किया था।

मार्कण्डेय पुराण मे महाभारत सम्बन्धी चार प्रश्न निम्न प्रकार हैं। ये प्रश्न आध्यात्मिक, सामाजिक मान्यताओ से सम्बन्ध रखते है –

1 जो सब कारणो के कारण और समस्त ब्रह्माण्ड के आधार है, वह जनार्दन वासुदेव निर्गुण होकर भी किस निमित्त मनुष्य हुये थे ?

2 द्रौपदी किस प्रकार पॉच पाण्डवो की पत्नी हुयी थी ?

3 बलराम जी किस प्रकार तीर्थयात्रा प्रसङ्ग मे ब्रह्म हत्या के पातक से छूटे थे ?

4 द्रौपंदी के पुत्र अविवाहित अवस्था मे अनाथ के समान किस प्रकार प्राण त्यागे थे ?

मार्कण्डेय पुराण मे महाभारत सम्बन्धी जो चार प्रश्न पूछे गये उससे वेदान्त एव लोकदर्शन की अभिव्यक्ति हुयी है।

निर्गुण एवं सगुण ब्रह्म –

जैमिनि का प्रथम प्रश्न इस प्रकार है –

"कस्मान्मानुषता प्राप्तो निर्गुणोऽपि जनार्दन ।
वासुदेवो जगत्सूति स्थिति सयम कारणम्।। 2

जो जगत् की सृष्टि के कारण, ब्रह्माण्ड के आधार स्वरूप भगवान विष्णु हैं निर्गुण होकर भी किस कारण मनुष्य रूप को प्राप्त हुये हैं ? इस प्रश्न का उत्तर धर्म पक्षियो ने जैमिनि से बताया–जल ही एकमात्र जिसका घर है उसको नारायण कहते हैं वही भगवान विष्णु के निर्गुण एव सगुण रूप चार मूर्तियो मे स्थित है ।

1 मार्कण्डेय पुराण 1/9
2 मार्कण्डेय पुराण 1/16

आपो नारा इति प्रोक्ता मुनिभिस्तत्वदर्शिभि ।

अयन तस्य ता पूर्व तेन नारायण स्मृत ।।1

जैमिनि के प्रश्न का उत्तर देने के लिये धर्मपक्षियो ने भगवान विष्णु के चतुर्व्यूहात्मक मूर्ति का सहारा लिया। भगवान विष्णु के दो रूप हैं निर्गुण एव सगुण । उनका प्रथम स्वरूप निर्गुण है जिसे विद्वान लोग बहुत कठिनता से अपने अह का त्याग करके ही देख सकते हैं निर्गुण रूप मे भगवान शुक्ल वासुदेव हैं अद्वितीय, एकरूप एव सर्वव्यापी सनातन है। यह रूप तीनो गुणो का अतिक्रमण करने वाले "वासुदेव" नाम से प्रसिद्ध हैं।

"दूरस्था चान्तिकस्था च विज्ञेया सा गुणातिगा।

वासुदेवाभिधानो ऽसौ निर्ममत्वेन दृश्यते।। 2

सगुण अर्थात् त्रिगुण रूप मे प्रथम तमोगुण रूपी, द्वितीय सत्वगुण अवतार, तृतीय रजोगुण रूपी अवतार है। तमोगुण रूप मे भगवान अपने मस्तक पर पृथ्वी को धारण करते हैं शेष अर्थात् सकर्षण नाम से प्रसिद्ध है। सत्वगुण मे भगवान प्रद्युम्न नाम से प्रसिद्ध है ये पृथ्वी पर धर्म की व्यवस्था करने वाले, जगत् की रक्षा एव प्रजा पालन करने वाले हैं यही सत्वगुण रूपी भगवान पूर्व काल मे वराह, वामन, नृसिह आदि रूपो मे अवतरित हो चुके हैं। रजोगुण रूपी चतुर्थ मूर्ति भगवान अनिरुद्ध की है ये पन्नगशैया पर जल मे निवास करते हैं यही जगत् की सृष्टि करते हैं यही नारायण हैं। भागवत् पुराण मे भगवान अनिरुद्ध को चतुर्थतत्व मन कहा गया है –

" य सात्वता कामदुघोऽनिरुद्ध, मनोमय सत्वतुरीयतत्वम्।"3

भगवान जगत कल्याण के लिये ही निर्गुण होते हुये भी मनुष्य रूप मे अवतार लेते हैं।

"यदा–यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति जैमिने।

अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मान सृजत्यसौ।। 4

1 मार्कण्डेय पुराण 4/43
2 मार्कण्डेय पुराण 4/46
3 भागवत् पुराण 3/1/34
4 मार्कण्डेय पुराण 4/53

मार्कण्डेय पुराण के अतिरिक्त अन्य पुराण भी भगवान विष्णु के निर्गुण एव सगुण रूपो का वर्णन करते है। यही सृष्टि पालन एव सहारकर्त्ता है। जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है वह भगवान विष्णु का ही स्थूल रूप है। ब्रह्म पुराण मे भगवान विष्णु के निर्गुण एव सगुण रूपो का विवेचन हुआ है। विष्णु पुराण मे भी सर्वत्र दिखाई पडने वाले पदार्थ को विष्णु का स्थूल रूप माना है। चेतन–अचेतन वस्तु एव जितने भी प्राणी हैं सभी विष्णु के मूर्त्त-रूप हैं। "वस्तुत विष्णु चार वर्ण, चार आश्रम, पुरुषार्थ चतुष्टय तथा वेद चतुष्टय के रूप मे ही धर्म होकर समाज को धारण किये हुये हैं। इसीलिये चतुर्व्यूहात्मक तत्व रूप मे उसकी अभिव्यक्ति हो रही है। वैदिक शब्दावली का प्रयोग करे तो क्रमश सम्भूति असम्भूति, विद्या तथा अविद्या, ही उनकी चार भुजाये कही जा सकती है। सम्भूति अर्थात् उत्पत्ति का प्रतीक चक्र है, असम्भूति अर्थात् विनाश का प्रतीक गदा है। विद्या का प्रतीक शख है तथा असत् प्रतीति अविद्या का प्रतीक कमल है अविद्या मे असत् की प्रतीति मे भी प्रतीतिमात्र सत् का अश है अत पक मे होने वाला कमल इसी का प्रतीक है। 1

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल ने सृष्टि की चार श्रेणियो को विभिन्न दार्शनिको की शब्दावलियो को निम्न रूप मे उद्धृत किया है –2

ऋग्वेद	पर–अपर ब्रह्म	मनु	साख्य	वेदात	पचरात्र
गुणातीत सहस्त्र शीर्षा पुरुष	परात्पर	तमोभूत अप्रतर्क्य अविज्ञात	निर्गुण पुरुष	ब्रह्म	वासुदेव (शुक्लामूर्ति अनिर्देश्या)
सगुण पुरुष भूतभव्य	पर (= अव्यय)	स्वयम्भू (=नर) नरसूनव.	पुरुष	ईश्वर	बलराम = शेष (तामसी मूर्ति)
विराज	परावर (=अक्षर)	आप, नारा – उसी का गर्भित रूप	प्रकृति गुणो की साम्यावस्था	माया	प्रद्युम्न (सत्वमूर्ति प्रजापालन तत्परा)
पुरुष (=प्रजापति ब्रह्मा)	अवर (= क्षर, क्षर सर्वाणि भूतानि, गीता)	हिरण्याड उससे ब्रह्मा सर्वलोक की सृष्टि या गोचरविश्व	विकृति त्रैगुण्य विषमा सृष्टि विशेष	विश्व ससार	अनिरूद्ध (राजसीमूर्ति) जल मध्ये शेते पन्नग तल्पगा।

इस प्रकार जो कुछ भी दृष्टिगोचर होता है वह सब भगवान विष्णु का ही रूप है अमूर्त्त–मूर्त्त, निर्गुण–सगुण, पर–अपर, सब का समष्टि रूप भगवान नारायण विष्णु ही है।

1 मार्कण्डेय पुराणम् –अनुवादक धर्मेन्द्र शास्त्री भूमिका लेखक डॉ0 विष्णु दत्त राकेश एव रति राम शास्त्री, भूमिका पृष्ठ - 11

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ 40

पंचेन्द्र उपाख्यान –

जैमिनि के दूसरे प्रश्न–द्रौपदी किस प्रकार पॉच पाण्डवो की पत्नी हुयी थी?

कस्माच्च पाण्डु पुत्राणामेका सा द्रुपदात्मजा।

पञ्चाना महिषी कृष्णा ह्यत्र न सशयो महान्।। 1

इस शका का समाधान धर्मपक्षियो ने इस प्रकार किया वस्तुत द्रौपदी ही पूर्व जन्म मे शची ही थी। इन्द्र को अपने कुकृत्यो के कारण ही मृत्युलोक मे पॉच पाण्डवो के रूप मे जन्म लेना पडा इन्द्र ने त्वष्टा पुत्र त्रिशिरा की हत्या की थी जिससे इन पर ब्रह्म हत्या का पाप लगा, गौतम का रूप धारण कर अहिल्या के साथ रमण करने से परस्त्री गमन का कलक लगा। इस प्रकार वचन भग आदि दोषो से इन्द्र का पतन हो गया। इन्द्र तेज, बल, श्री आदि से हीन हो गये इन्द्र के बल को वायु ने, तेज को धर्म ने, श्री को अश्विनी कुमारो ने स्वीकार किया। इन्द्र के तेज से युधिष्ठिर, पवन से भीमसेन, इन्द्र के आधे बल से अर्जुन, अश्विनी कुमारो ने नकुल–सहदेव के रूप को धारण किया। इन्द्र के पॉच बल से उत्पन्न पॉच पाण्डव तथा अग्नि से उत्पन्न इन्द्र की पत्नी शची ही द्रौपदी थी जो कि पाण्डवो की पत्नी बनी।

"शक्रस्यैकस्य सा पत्नी कृष्णा नान्यस्य कस्यचित्।

योगीश्वरा शरीराणि कुर्वन्ति बहुलान्यपि।। 2

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ प0 श्रीराम शर्मा आचार्य जी के अनुसार – "आध्यात्मिक दृष्टि वाले विद्वानो ने इसका स्पष्टीकरण वैदिक साहित्य मे वर्णित पचेन्द्र कल्पना के आधार पर किया है। उनका कथन है कि मानव शरीर मे स्थित पॉचो इन्द्रियो का सचालन पॉच प्राणो द्वारा होता है। प्रत्येक 'प्राण' को 'इन्द्र' कहा जाता है और उसी के कारण इन्द्रिय नाम पड गया है। इन पॉचो के पीछे एक मध्य प्राण है जो इन पॉचो को प्रदीप्त रखता है। इसको महेन्द्र कहा गया है। इस प्रकार एक मुख्य प्राण शक्ति पॉच इन्द्रियो के साथ सहयोग करती है। 3

1 मार्कण्डेय पुराण 1/17

2 मार्कण्डेय पुराण 5/24–25

3 मार्कण्डेय पुराण/श्रीराम शर्मा आचार्य/भूमिका पृष्ठ 17

प्रश्नोपनिषद में –

'इन्द्र स्व प्राण 'प्राण को इन्द्र कहा गया है। [1]

पाण्डवो को इन्द्र का ही पॉच रूप महाभारत भी मानता है।

"पाण्डो पुत्रा पञ्च पञ्चेन्द्र कल्पा" [2]

इसी प्रकार शतपथ ब्राह्मण मे भी "स सोऽय मध्ये प्राण एष एवेन्द्र तान्येष प्राणान् इन्द्रियेणैन्द्ध यदैन्द्र तस्यामिन्द्ध । इन्धो ह्यै यमिन्द्र इत्याचक्षते परोक्षम्।" [3]

बलदेव की तीर्थयात्रा :–

जैमिनि का तीसरा प्रश्न यह था कि –महाबली हलायुध बलराम जी किस प्रकार तीर्थयात्रा प्रसङ्ग मे ब्रह्म हत्या के पातक से छूटे ?

"भेषज ब्रह्म हत्याया बलदेवो महाबल ।
तीर्थयात्रा प्रसङ्गेन कस्माच्चक्रे हलायुध ।। [4]

इसका उत्तर धर्मपक्षियो ने बलदेव जी की तीर्थयात्रा प्रसङ्ग को सुनाकर उनकी शका का समाधान किया। कौरव एव पाण्डवो के झगडे मे निपटारे के लिये बलराम जी ने देखा कि उनके अनुज अर्जुन का पक्ष ले रहे हैं उन्होंने विचार किया कि अर्जुन या दुर्योधन से विरोध लेना उचित नहीं है अत जब तक झगडे का निपटारा हो तब तक तीर्थयात्रा की जाय, इसी तीर्थयात्रा पर जाने के एक दिन पहले उन्होने अपनी ललक पूरी करने के लिये खूब मदिरा पान किया। इस प्रकार वे मदोन्मत्त हो विहार के लिये निकले। सूत जी वही बैठकर कथा वाचन कर रहे थे। और ऋषि–मुनियो ने बलराम का अभिवादन किया किन्तु सूत जी ने नही किया अत बलराम जी ने अपना हल सूत जी पर चला दिया सूत जी की तत्काल मृत्यु हो गयी। सज्ञा मे आने पर अपने आप को बलराम जी ने ब्रह्म हत्या मे लिप्त पाया, और इस घटना पर पश्चाताप् करने लगे। उन्होने कहा अपने पाप का मैं सकीर्तन करते हुये सभी तीर्थों मे घूमूँगा। मैं 12 वर्ष तक व्रत रखूँगा सरस्वती नदी के स्त्रोत की ओर जाकर उसकी प्रतिलोम यात्रा करूगा।

1 प्रश्नोपनिषद 2 2 9
2 महाभारत/उद्योग पर्व/33 103
3 शतपथ ब्राह्मण 6/1/1/2
4 मार्कण्डेय पुराण 4/33

"तत्क्षयार्थ चरिष्यामि व्रत द्वादशवार्षिकम्।

स्वकर्मख्यापन कुर्वन्प्रायश्चित्तमनुत्तमम्।। 1

इस प्रकार वे ब्रह्म हत्या के पातक से छूटे। आचार्य धर्मेन्द्र शास्त्री के अनुसार वस्तुत यह घटना ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर सघर्ष पर प्रकाश डालती है।

द्रौपदी के पॉच पुत्रो की मृत्यु :–

जैमिनि ने चतुर्थ प्रश्न इस प्रकार किया द्रौपदी के पाच पुत्रो ने अविवाहित अवस्था मे अनाथ के समान कैसे प्राण त्याग किया ?

, "कथ च द्रौपदेयास्तेऽकृतदारा महारथा।

पाण्डुनाथा महात्मानो वधमापुरनाथवत्।। 2

जैमिनि के इस चतुर्थ प्रश्न का उत्तर धर्म पक्षियो ने इस प्रकार दिया– विश्वामित्र ने राजा हरिश्चन्द्र का सम्पूर्ण राज्य पृथ्वी, बल, धन आदि दान रूप मे ले लिया। तत्पश्चात् राजसूय यज्ञ की दक्षिणा बाद मे देने का वचन देकर, राज्य से जाने लगे राजा हरिश्चन्द्र अपनी पत्नी शव्या का हाथ पकडकर खीच कर आगे मार्ग मे बढ रहे थे क्योकि उनकी पत्नी अत्यन्त थक गयी थी फिर भी विश्वामित्र अपने डण्डे से रानी शव्या की पीठ मे आघात करने लगे।

"कर्षतस्ता ततो भार्या सुकुमारी श्रमातुराम्।

सहसा दण्डकाष्ठेन ताडयामास कौशिक।। 3

यह देखकर पञ्चजन लोकपाल अत्यन्त दु खी हुये, और विश्वामित्र की निन्दा करने लगे। इस बात से रुष्ट होकर, विश्वामित्र ने पञ्चजन लोकपाल को शाप दिया कि तुम सब मनुष्य योनि मे जन्म ग्रहण करो –

"इति तेषा वच श्रुत्वा कौशिकोऽतिरुषान्वित।

शशाप तान्मनुष्यत्व सर्वे यूयमवाप्स्यथ।। 4

शाप से ग्रस्त हो विश्वेदेवो ने अनुग्रह याचना की तब विश्वामित्र ने कहा मेरा वचन अन्यथा नहीं होगा किन्तु तुम लोग स्त्री सम्पर्क और सन्तानोत्पत्ति से दूर रहोगे।

1 मार्कण्डेय पुराण 6/35
2 मार्कण्डेय पुराण 1/19
3 मार्कण्डेय पुराण 7/60
4 मार्कण्डेय पुराण 7/64

"मानुषत्वेऽपि भवता भवित्री नैव सन्तति"। 1

इस प्रकार विश्वामित्र के शाप से विश्वेदेवो की द्रौपदी के पुत्ररूप मे उत्पत्ति एव विश्वामित्र के अनुग्रह से अविवाहित अवस्था मे ही मृत्यु हुयी।

अग्नि –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ब्राह्मणो के लिये 3 प्रकार की अग्नि ही उनकी आराध्य है।

1 गार्हपत्य अग्नि 2 आहवनीय 3 दक्षिणाग्नि

यही तीन अग्नि अभीष्ट है। अग्निशाला ही मुख्य स्थान है। कुशासन से सुशोभित विष्टारिणी वेदी ही शोभित है।

"अभीष्टा गार्हपत्याद्या सतत ते त्रयोऽग्न्य।
रम्य ममाग्नि शरण वेदी विष्टरिणी प्रिया।। 2

गार्हपत्य अग्नि से ही आहवनीय और दक्षिणाग्नि उत्पन्न हुयी है गार्हपत्य अग्नि जब प्रसन्न होती है तभी देवता वृष्टि और सस्य प्रदान करते हैं। गार्हपत्य अग्नि सब कर्मों का बीज है कहा भी गया है –

"भगवान्गार्हपत्याग्ने योनिस्त्व सर्वकर्मणाम्।।" 3

यज्ञ –

यज्ञ करने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय मे भी यज्ञो का विशेष महत्व है। मार्कण्डेय पुराण मे भी यत्र–तत्र यज्ञ करने का उल्लेख प्राप्त होता है। यज्ञ ऋषि, मुनि एव राजागण आदि किया करते थे। अधिकाशत यज्ञ किसी न किसी उद्देश्य की सिद्धि के लिये किये जाते थे। मार्कण्डेय पुराण मे अश्वमेध यज्ञ, मित्रावरुण, मित्रविन्दा एव राजसूय यज्ञ आदि का वर्णन प्राप्त होता है –

अश्वमेध यज्ञ :–

राजा सुद्युम्न ने किसी कारणवश स्त्री बन जाने पर, पुन पुरुषत्व प्राप्त करने के लिये अश्वमेध यज्ञ किया था। 4

1 मार्कण्डेय पुराण 7/65
2 मार्कण्डेय पुराण 58/65
3 मार्कण्डेय पुराण 58/75
4 मार्कण्डेय पुराण 108/14–15

मित्रावरुण यज्ञ –

मित्रावरुण की स्तुति द्वारा मित्रावरुण यज्ञ किया जाता था। असाधारण विशिष्ट पुत्र प्राप्ति के लिये सप्तम् मनु ने यह यज्ञ किया था। 1

मित्रविन्दा यज्ञ :–

पति–पत्नी मे मित्रता की कामना के लिये यह यज्ञ किया जाता था। राजा उत्तम ने अपनी पत्नी के मन मे अपने प्रति प्रीति उत्पन्न करने के लिये मित्रविन्दा यज्ञ करवाया था।2

राजसूय यज्ञ –

राजसूय यज्ञ करने से राजा को यश की प्राप्ति होती थी। राजसूय यज्ञ करने के पश्चात् ब्राह्मण जिस वस्तु से सतुष्ट होता था वही उसकी यज्ञ दक्षिणा होती थी।3

पितृ यज्ञ .–

पुत्र कामना के लिये पितृ यज्ञ किया जाता था राजा खनीनेत्र ने पुत्र कामना निमित्त यज्ञ किया था। 4 इस यज्ञ मे मास की आहुति दी जाती थी।

सारस्वती इष्टि .–

नागराज की कन्या नन्दा का गूगापन दूर करने के लिये ब्राह्मणो ने "सारस्वत सूक्त" के जप द्वारा सारस्वती इष्टि किया था।5 मार्कण्डेय पुराण के अनुसार राजा सस्य की उपस्थिति काल एव बीतने के काल मे यज्ञ किया करते थे। राजा राज्य से प्राप्त कर का छठा अश यज्ञ सपादन मे व्यय करते थे राजा खनीनेत्र ने 10000 (दस हजार) यज्ञ किया था।6 एव राजा नारिष्यन्त ने एक ही समय मे चारो दिशाओ मे नवासी करोड (890000000) से भी अधिक यज्ञ किये थे।7 ऐसा उल्लेख प्राप्त होता है कि राजा नारिष्यन्त से पूर्व किसी भी राजा ने इतनी अधिक सख्या मे यज्ञ सपादित नहीं किये थे।

1 मार्कण्डेय पुराण 108/6–7
2 मार्कण्डेय पुराण 69/8
3 मार्कण्डेय पुराण 7/39
4 मार्कण्डेय पुराण 117/6
5 मार्कण्डेय पुराण 69/26–27
6 मार्कण्डेय पुराण 117/2
7 , मार्कण्डेय पुराण 129/31–33

होम –

ऋषि मुनि लोग अपनी शक्ति को बढाने के लिये होम करते थे। त्वष्टा ऋषि ने अपनी जटा को होम मे डालकर वृत्रासुर की उत्पत्ति की थी।[1] होम धेनु की हत्या अवैध माना जाता था राजा पृषध्र ने होम धेनु को गवय समझकर उसकी हत्या की थी[2] जिससे मुनिपुत्र के शाप से उन्हे शूद्र का जीवन व्यतीत करना पडा था। तीनो लोक होम द्वारा ही प्रतिष्ठित है। प्रातकाल एव सायकाल मे होम करने से नित्य सम्पूर्ण शाश्वत लोक प्राप्त होते हैं।

"साय प्रातर्हुत हव्य लोकान्यच्छति शाश्वतान्।

त्रैलोक्यमेतदखिल मूढे हव्ये प्रतिष्ठितम्।। [3]

हवन सम्बन्धी नियम .–

मनुष्य को बिना स्नान किये हवन नही करना चाहिये मूर्खों से हवन नहीं कराना चाहिये। बाज इत्यादि सिर पर बैठ जाये तो उसकी होम द्वारा शान्ति करवानी चाहिये अन्यथा अरिष्ट की आशका रहती थी।

दान :–

दान करना धार्मिक कार्य है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ज्ञानी पुरुषो द्वारा ही दान लेना चाहिये किन्तु दुष्ट क्रोधी एव आर्त्त पुरुषो से दान, परित्याग की हुयी वस्तु का दान नहीं लेना चाहिये। कामना रहित दान से अशुभ नष्ट होता है।[4] सुमति ब्राह्मण ने जन्म काल मे किये गये दान की महिमा मृत्यु पर्यन्त मनुष्य के सुख–दुख भोगने से की है। मार्कण्डेय पुराण मे राजा हरिश्चन्द्र द्वारा दिये गये दान का वर्णन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मार्कण्डेय पुराण मे सुवर्णश्रृग मढाकर[5] पयस्विनी गाय का दान करने का विधान मिलता है। "पुष्करे दानज पुण्य" पुष्कर मे दान का विशेष महत्व होता है।[6]

1 मार्कण्डेय पुराण 5/6
2 मार्कण्डेय पुराण 109/4
3 मार्कण्डेय पुराण 58/62
4 मार्कण्डेय पुराण 92/14
5 मार्कण्डेय पुराण 107/43
6 मार्कण्डेय पुराण 134/16

बलि –

बलि देने की प्रथा अत्यन्त प्राचीन है वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक मे भी बलि देने का प्रमाण प्राप्त होता है किन्तु बलि देना निम्न कार्य समझा जाता रहा है। मार्कण्डेय पुराण मे यत्र–तत्र बलि देने का वर्णन प्राप्त होता है। मदालसा ने अपने पुत्र अलर्क से कहा कि–सदाचारी पुरुष को निम्न बलि देना चाहिये –

गृह बलि, वैश्वदेव बलि पर्जन्य बलि अन्न बलि, धरित्री को बलि वायु को बलि प्रत्येक दिशाओ को बलि, प्रत्येक देवताओ का बलि [1] एव पितरो को बलि देना चाहिये।

मार्कण्डेय पुराण मे एक स्थान पर बलि देना – बदला लेने के उद्देश्य रूप मे वर्णित हुआ है। जैसे- "मुनिगण नागो को बलि देने लगे थे क्योकि नागो ने सात मुनि पुत्रो को डसा था। [2]

आचमन विधि –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सदाचारी पुरुष को उपर्युक्त बलि देने के पश्चात् निम्न तीर्थों द्वारा आचमन करना चाहिये ये सभी तीर्थ मनुष्य के हाथ मे ही भिन्न–भिन्न स्थानो मे होते हैं ये तीर्थ निम्न हैं–

ब्रह्म तीर्थ, पितृ तीर्थ, देव तीर्थ, कायतीर्थ।

ब्रह्म तीर्थ :–

मनुष्य के दाये हाथ के अगुष्ठ के उत्तर दिशा मे स्थित रेखा ही ब्रह्म तीर्थ है[3] इसी तीर्थ द्वारा ब्रह्म देव के नाम से आचमन करना चाहिए।

पितृ तीर्थ :–

मनुष्य के तर्जनी और अगुल, इन दोनो के मध्य स्थल को पितृतीर्थ कहते हैं मार्कण्डेय पुराण मे पितृतीर्थ द्वारा पितरो के निमित्त आचमन करने का विधान प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 31/100–101

2 मार्कण्डेय पुराण 126/24–25

3 मार्कण्डेय पुराण 31 / 107

देव तीर्थ :—

मनुष्य के अगुली के अग्रभाग को देवतीर्थ कहते हैं [1] इसके द्वारा देवता के नाम पर सदाचारी को आचमन करना चाहिये।

कायतीर्थ :—

व्यक्ति के कनिष्ठका के मूल देश मे कायतीर्थ है। [2] कायतीर्थ द्वारा प्रजापति के नाम से आचमन करना चाहिये।

तपस्या :—

तपस्या करना शुभ कार्य समझा जाता था। जैमिनि मुनि के अनुसार—शोक या हर्ष इत्यादि से अभिभूत न होना ही तपस्या का फल है। क्रोध करने से तपस्या नष्ट होती है।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार रुचि ने सौ वर्ष तक तपस्या की थी। सूर्य पत्नी सज्ञा द्वारा अनाहार तपस्या का वर्णन मिलता है। [3] राजा राज्यवर्धन ने अपनी प्रजा को दस हजार वर्ष तक जीवित रखने के लिये तपस्या की थी। [4] राजा खनित्र ने साढे तीन सौ वर्ष तक अपनी तीन पत्नियो के साथ वानप्रस्थ विधान से तपस्या की थी।[5] त्रिशिरा ने अधोमुख होकर तपस्या की थी। इच्छित विवाह न होने पर विशालराज की कन्या ने वन मे तपस्या की थी किन्तु दूसरे व्यक्ति से विवाह नहीं किया था।[6] राजा नारिष्यन्त ने तपस्या के समय मौन व्रत धारण किया था।[7]

इस प्रकार मार्कण्डेय पुराण मे तपस्या का उल्लेख अनेक स्थलो पर प्राप्त होता है।

1 मार्कण्डेय पुराण 31/109
2 मार्कण्डेय पुराण 31/109
3 मार्कण्डेय पुराण 103/12
4 मार्कण्डेय पुराण 107/23—24
5 मार्कण्डेय पुराण 115/17
6 मार्कण्डेय पुराण 121/49
7 मार्कण्डेय पुराण 131/7—8

दान एव सत्य की महिमा –

मार्कण्डेय पुराण मे हरिश्चन्द्र की कथा के माध्यम से दान एव सत्य की महिमा का बहुत ही विशिष्ट वर्णन मिलता है। हरिश्चन्द्र उपाख्यान मे, दान को सर्वोपरि रखा जाय या सत्य को या फिर वचन को, ये एक विचारणीय विषय है क्योकि यदि राजा वचन के प्रति उदासीन होता है तो सत्य एव दान की बात ही नही। यद्यपि लोक मे हरिश्चन्द्र को सत्यवादी हरिश्चन्द्र कहते हैं। किन्तु सत्य से ऊपर वचन पालन को सर्वोपरि रखना अधिक उचित होगा। यद्यपि वचन पालन उपकार ही नहीं महान कष्ट साध्य है अत कही–कही राजा हरिश्चन्द्र द्वारा पश्चाताप् किये जाने की झलक मिलती है–

प्रतिग्रह प्रदुष्टो मे नाह यायामध कथम्।।

किमु प्राणान्विमुञ्चामि का दिशयाम्यकिञ्चन ।

यदि नाश गमिष्यामि अप्रदाय प्रतिश्रुतम्।।

ब्रह्मस्वहृत्कृमि पापो भविष्याम्यधमाधम ।

अथवा प्रेष्यता यास्ये वरमेवात्मविक्रय ।।[1]

"हरिश्चन्द्र कहते हैं यदि अगीकार की हुयी दान की वस्तु को बिना दिये ही प्राण त्याग करुँगा तो ब्रह्म अश हरण करने के पाप मे लिप्त होकर अत्यन्त नीचाधम कृमि रूप मे जन्म ग्रहण करुँगा या आत्मा को बेचकर सन्यासी होऊँगा।।"

सत्य का स्वरूप कैसा है, इस पर राजा हरिश्चन्द्र कहते हैं अपने सत्य धर्म का पालन करने मे जैसा पुण्य होता है वैसा अन्य किसी मे नही। जिसका वचन असत्य होता है उसका यज्ञ से प्राप्त पुण्य, वेदपठन तथा दान आदि निष्फल हो जाता है इस तरह सत्य ही सर्वोपरि है। यदि मनुष्य मे सत्य का अश नही है तो उसके किये सभी कर्म निष्फल हो जाते हैं वह चाहे जितना बडा यज्ञ दान या फिर वेदो का ज्ञाता पण्डित ही क्यो न हो उसके आगे सभी पुण्य निष्फल हो जाते हैं। उस मनुष्य को कोई फल नहीं मिलता।

1 मार्कण्डेय पुराण 8/13–15

सत्य और असत्य की तुलना करते हुये पुन कहते है कि जिस प्रकार सत्य वचन मनुष्य को मुक्ति देने मे समर्थ होते हैं उसी प्रकार मिथ्या वचन नीचे गिराने का प्रधान कारण बनता है। राजा कृति के विषय मे उदाहरण देते हुये कहते हैं – " राजा कृति सात अश्वमेध यज्ञ, एक राजसूय यज्ञ आदि करके अपने स्वर्ग प्राप्ति का मार्ग खोला उसी के द्वारा एक बार असत्य भाषण करने के कारण वह स्वर्ग से भ्रष्ट हो गया।

"सप्तप्श्वमेधानाहृत्य राजसूय च पार्थिव।

कृतिर्नाम च्युत स्वर्गादसत्य वचनात्सकृत्।।1

राजा हरिश्चन्द्र ने "येन कोट्यग्रशो वित्त विप्राणामवर्जितम्" (अनन्त कोटि गोधन ब्राह्मणो) को सहर्ष दान किया।

सत्य को सूर्य, पृथ्वी, यज्ञ तथा स्वर्ग का फल बताया है। सूर्य का ताप सत्य की सहायता से होता है। पृथ्वी सत्य के ही आधार पर प्रतिष्ठित है सत्य को एक मात्र धर्म कहा गया है। स्वर्ग भी एक मात्र सत्य से ही प्रतिष्ठित है और यदि हजार अश्वमेध यज्ञ का फल और सत्य को तराजू मे तौला जाय तो सत्य ही इस यज्ञ, दान, तप आदि पर भारी पडेगा।

ऋषि–मुनि :–

मार्कण्डेय पुराण मे अनेक ऋषियो का वर्णन प्राप्त होता है। उनमे से कुछ तो वैदिक है कुछ एतिहासिक हैं। साथ ही उनकी शिष्य परम्परा का भी उल्लेख प्राप्त होता है। ये शिष्य अपने गुरु के साथ आश्रम मे निवास करते थे उनमे भी उनके गुरु के समान तेज एव बल होता था वह अपने गुरु के समान भूत एव भविष्य की बातो को ध्यान द्वारा जान जाते थे। शिष्य गुरुहित चिन्तक होते थे। मुनि अगिरा के शिष्य भूति कोप स्वभाव के मुनि थे।2 मुनि भूति के शिष्य शान्ति ने अपने गुरू की आज्ञा का उल्लघन होने पर अपने प्राणो की परवाह नही की एव अपने गुरु के लिये अग्नि देवता को प्रसन्न किया अग्नि देवता से गुरु की मनोकामना पूर्ति के लिये वर मागा ।

1 मार्कण्डेय पुराण 8/21

2 मार्कण्डेय पुराण 96/2

मार्कण्डेय पुराण मे मुनियो का उल्लेख प्राप्त होता है जो जप, तपस्या, व्रत एव उपासना करते थे जिन्हे ध्यान के द्वारा गुप्त या प्रत्यक्ष भूत–भविष्य की बाते ज्ञात हो जाती थी। मुनि लोग राजा का सम्मान अर्ध्य द्वारा करते थे। [1] किन्तु वह राजा यदि अयोग्य होता था तो केवल उसको सम्मानपूर्वक बैठाते थे अर्ध्य द्वारा सम्मान नही करते थे। मार्कण्डेय पुराण मे निम्न ऋषि–मुनियो का नामोल्लेख प्राप्त होता है – विश्वामित्र, गर्ग, वशिष्ठ, दुर्वासा, शुक्राचार्य, शमीक, विपुलस्वान, अगिरा, भूति, मौलि, चक्षु, प्रमुच, ऋतवाक, अग्निहोत्रि, प्रमति, ऋचीक, च्यवन, अगस्त्य, भार्गव, सवर्त आदि हैं।

श्राद्ध –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पितर की आत्मा की शान्ति के लिये श्राद्ध करना चाहिये। ब्रह्मपुराण के अनुसार "जो कुछ उचित काल, पात्र एव स्थान के अनुसार उचित विधि द्वारा पितरो को लक्ष्य करके श्रद्धापूर्वक ब्राह्मणो को दिया जाता है" वह श्राद्ध कहलाता है। [2] श्राद्ध करने का अर्थ है पितरो को पिण्ड एव सपिण्डीकरण द्वारा तृप्त करना।

श्राद्ध करने का समय :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार श्राद्ध करने का सबसे उचित समय अमावस्या का दिन होता है इसके अतिरिक्त पौष मास की कृष्णाष्टमी का दिन अच्छा होता है। यदि पुरुष को श्रेष्ठ एव योग्य ब्राह्मण प्राप्त हो जाय तो निम्न समय मे भी वह पितरो का श्राद्ध कर सकता है –

सूर्य–चन्द्र ग्रहण काल मे, अयन (सूर्य–चन्द्र गमन काल में) विषुव काल मे, रवि सक्रमण मे, व्यतीपात (भूकम्प आदि मे) दु स्वप्न, जन्म नक्षत्र एव ग्रह पीडा सघटित होने मे। [3]

श्राद्ध करवाने वाला व्यक्ति :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार श्राद्ध करवाने वाला व्यक्ति नचिकेता प्रणीत तीन उपनिषद के उपासक, त्रिमधु, त्रिसुपर्ण एव षडाङ्गवेत्ता आदि होना चाहिये।

1 मार्कण्डेय पुराण 66/49–51

2 ब्रह्मपुराण – श्राद्ध प्रकरण पृष्ठ 3 एव 6

3 मार्कण्डेय पुराण 28/21–23

श्राद्ध करने वाला व्यक्ति –

श्राद्ध कौन करे उसका वर्णन भी मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। श्राद्ध करने वाला व्यक्ति मृतक का दोहित्र, ऋत्विक, जामाता, भगिनीपुत्र, श्वसुर आदि उत्तम एव योग्य ब्राह्मण ही श्राद्ध करने का अधिकारी हे।

श्राद्ध पश्चात् पितर तृप्ति की अवधि –

श्राद्ध करने से पितर तृप्त होते हैं किन्तु व्यक्ति द्वारा किये जाने वाले हवि सामग्री द्वारा पितर तृप्त की अवधि निर्धारित थी जिसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे इस प्रकार प्राप्त होता है –

हविष्यान्न	–	1 मास तक पितर तृप्त रहते हैं ।[1]
मत्स्य मास	–	2 मास तक
हरिण मास	–	3 मास तक
खरगोश का मास	–	4 मास तक
पक्षी का मास	–	5 मास तक
सूकर का मास	–	6 मास तक
वार्ध्रीण का मास	–	7 मास तक
ऐणमृग का मास	–	8 मास तक
रुरु मृग का मास	–	9 मास तक
गवय का मास	–	10 मास तक
औरभ्र का मास	–	11

गवय दुग्ध खीर से – सवत्सर तक तृप्त रहते हैं। गौरी सुत एव गया श्राद्ध सर्वश्रेष्ठ होता है इनसे पितरो को अनन्त तृप्ति लाभ होता है। गैंडे के मास को परम हवि बताया गया है।

यजमान च भोक्तृश्च नौरिवाम्भसि तारयेत्।

पितृगाथास्तथेवात्र श्रूयन्ते ब्रह्मवादिभि ।।[2]

जल मे नौका जिस प्रकार आरोही को उद्धार करती है इसी प्रकार वह भी यजमान और भोक्ता सबको उद्धार करता है ब्रह्मवादिगण इस स्थल मे पितृगाथा कीर्तन कर गये हैं।

1 मार्कण्डेय पुराण 29/2

2 मार्कण्डेय पुराण 29/31

मनुष्य द्वारा किये श्राद्ध अर्थात् पिण्डदान से मात्र पितर ही तृप्त नही होते अपितु अन्य योनि के लोग भी तृप्त होते है। व्यक्ति द्वारा पिण्ड उठाते समय पृथ्वी तल मे बिखरे हुये अन्न से पिशाचयोनि पुरुष तृप्त होते है। 1 स्नान के वस्त्र से निचोडे गये जल से – वृक्षयोनि प्राप्त पुरुष गात्र से जो जल की बूदे पृथ्वी पर गिरती हैं उससे देवत्व तृप्त होते हैं। इसी प्रकार पुरुष द्वारा पवित्र–अपवित्र जल गिरने से अनेक प्रकार की योनि मे जन्म लेने वाले तृप्त होते हैं।

श्राद्ध का फल .–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार व्यक्ति को पितरो का श्राद्ध करना आवश्यक कर्म है। जो पुरुष पितरो का श्राद्ध नही करते हैं उनके सात जन्मो के सचित पुण्य नष्ट हो जाते हैं और जो पुरुष देवता को निराश करते है उनकी पूजा अर्चना आदि नही करते उनक पुरुषो का तीन जन्मो का पुण्य नष्ट हो जाता है। श्राद्ध करने का वैज्ञानिक महत्व भी है अनेक वैज्ञानिको ने इस पर अनुसधान भी किया है।

वैज्ञानिक क्लैमैरियन के अनुसार .–

" हममे से प्रत्येक व्यक्ति के भीतर एक सूक्ष्म अतीन्द्रिय शक्ति है, जिसे हम "ओज" कहते हैं। यह शक्ति हमारी मृत्यु के बाद भी वर्तमान रहती है मृत्यु के बाद भी हमारा इसके द्वारा इस लोक के जीवित व्यक्तियो के साथ सम्पर्क स्थापित हो सकता है।2 अत श्राद्ध कर्म व्यक्ति को करना चाहिये।

काम्यश्राद्ध (तिथि एवं नक्षत्र) :–

मदालसा अलर्क से काम्य श्राद्ध 3 की तिथि एव नक्षत्र का वर्णन करती है।

प्रतिपदा – धन लाभ

द्वितीया – सम्पत्ति लाभ

तृतीया – वर प्राप्ति

चतुर्थ – शत्रु का विनाश

पचमी – स्त्री लाभ

1 मार्कण्डेय पुराण 28 / 11

2 शक्ति परिक्रमा पृष्ठ – 40

3 मार्कण्डेय पुराण अध्याय – 30

षष्ठी — सर्वजनमानस मे पूजा

सप्तमी — गणाधिपत्य

अष्टमी — अनुत्तम बुद्धि लाभ

नवमी — रमणी का लाभ

दशमी — समस्त कामना पूर्ण

एकादशी — समस्त वेद मे अभिज्ञता

द्वादशी — जय, पशु, मेधा, स्वाधीनता और पुष्टि लाभ

त्रयोदशी — दीर्घ आयु, ऐश्वर्य

चतुर्दशी —

पितर पूजा :—

पितरो की पूजा पुष्प गन्ध आदि द्वारा की जाती थी पितरो की पूजा का समय वर्ष के अन्त एव उत्सव जैसे—विवाह, पुत्रोत्पत्ति आदि अवसर पर होता था। पितर इन्द्र के पूज्य थे। पितर चारो दिशा मे भिन्न—भिन्न थे —

पूर्व दिशा मे पितर — अग्निष्वात्ता

पश्चिम दिशा मे पितर — आज्यपा

उत्तर दिशा में पितर — सोमपा

दक्षिण दिशा मे पितर — वर्हिषद

कुल 31 पितर थे।

मार्कण्डेय पुराण मे पितरो की पूजा करने के महत्व का विस्तारपूर्वक वर्णन मिलता है साथ ही साथ निम्न नक्षत्रो मे पितरो की पूजा करने से निम्न लाभ होता है इसका भी उल्लेख प्राप्त होता है —

कृतिका — स्वर्ग

रोहिणी — पुत्र

मृगशिरा — ओजस्विता

आर्द्रा — शौर्य

पुनर्वसु — क्षेत्रादि

पुष्य — पुष्टि लाभ

आश्लेषा — श्रेष्ठपुत्र

मघा — स्वजनो मे प्राधान्य

पूर्वाफाल्गुनी — सौभाग्य लाभ

उत्तराफाल्गुनी	–	पुत्रवान
हस्त	–	श्रेष्ठता
चित्रा	–	रूप अपत्य लाभ
स्वाती	–	वाणिज्य
विशाखा	–	पुत्र कामना सिद्धि
अनुराधा	–	चक्रवर्त्तित्व
ज्येष्ठता	–	आधिपत्य
मूल	–	आरोग्य
पूर्वाषाढा	–	यश प्राप्ति
उत्तराषाढा	–	शोक राहित्य
श्रवण	–	शुभलोक
धनिष्ठा	–	वेदो मे अभिज्ञता
शतभिषा	–	वैद्यक शास्त्र मे सिद्धि
पूर्वाभाद्र	–	आबिक (भेड–बकरी) लाभ
उत्तराभाद्र	–	विद्या, गोलाभ
रेवती	–	सुवर्ण, चादी लाभ
अश्विनी	–	अश्व
भरणी	–	दीर्घायु

पितर स्तोत्र :–

पितरो को, प्रकट होने के पहले और बाद मे दोनो बार स्तोत्र द्वारा प्रसन्न किया जाता था उनकी स्तुति की जाती थी। मार्कण्डेय पुराण मे लगभग 36 श्लोको मे पितर स्तोत्र का उल्लेख मिलता है जो उनके प्रकट होने के पहले किया गया है। जिसमे पितरो को श्राद्ध, तर्पण, पिण्डदान, पूजन आदि द्वारा प्रसन्न करने की बात की गयी है।[1] इसके पश्चात् पितर जब उपस्थित होते हैं तब उनके सम्मान मे पुन स्तुति करने का विधान किया गया है। मार्कण्डेय पुराण मे ग्यारह श्लोको मे पुन पितर स्तोत्र हुआ है।[2] इस स्तोत्र द्वारा पितर 12 वर्ष तक, 24 वर्ष तक, 16 वर्ष तक एव अनन्त काल तक के लिये तृप्त हो जाते थे।

1 मार्कण्डेय पुराण 93/13–48

2 मार्कण्डेय पुराण 94/ 3–13

फल –

पितरो की स्तुति करने पर, स्तोत्र पढने पर अभिलाषित वस्तु की इच्छापूर्ति होती थी। अभीष्ट पत्नी एव पुत्र की प्राप्ति होती थी।

पितरो का भोजन –

पितर स्वधा उच्चारण द्वारा तृप्त होते थे। जल, काला तिल, कव्य, गैंडे के मास, शाक, गुल्म लता आदि द्वारा उन्हे तृप्त करते थे।

व्रत –

"व्रत इति शास्त्रतो नियम उच्यते" [1] शास्त्रपूर्वक नियम पालन का नाम ही व्रत है। मार्कण्डेय पुराण मे व्रत एव व्रत के नियम आदि का विशेष उल्लेख नही प्राप्त होता अपितु कुछ व्रतो का – जैसे कृच्छ्र, चान्द्रायण एव किमिच्छिक आदि का वर्णन प्राप्त होता है।

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार व्रत करने से पूर्व पत्नी को पति की आज्ञा लेना आवश्यक था। पादकृच्छ्र [2] एव चान्द्रायण व्रत [3] के अतिरिक्त किमिच्छिक व्रत अविक्षित की माता ने वीरप्रसु ने किया था। इस व्रत मे निधि समूह, निधिपालगण, एव लक्ष्मी जी की पूजा होती है। [4]

बलदेव जी ने ब्रह्म हत्या का प्रायश्चित करने के लिये 12 वर्ष तक व्रत करने का सकल्प लिया था।[5]

नरक –

मार्कण्डेय पुराण मे अनेक नरको का वर्णन मिलता है किन्तु इस वर्णन मे कोई नवीनता नही है।

1 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ 511

2 मार्कण्डेय पुराण 33/76

3 मार्कण्डेय पुराण 33/71

4 मार्कण्डेय पुराण 122/2

5 मार्कण्डेय पुराण 6/35

पापकर्म के पश्चात नरक गमन एव पापक्षय होने तक किसी न किसी नरको मे व्यक्ति को जाना पडता है इसका वर्णन विस्तार–पूर्वक मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। मार्कण्डेय पुराण मे सुमति नामक धर्मात्मा पुत्र ने अपने पिता भार्गव वश महामति नामक ब्राह्मण से नरको का वर्णन किया। जिसे पक्षियो ने भी सुना था और कालान्तर मे जैमिनि से कहा था। नरक का वर्णन इस पुराण मे 10 से 15 अध्याय तक मे प्राप्त होता है। प्राय सभी पुराणो मे नरको का वर्णन मिलता है कुछ नरको के नाम दूसरे पुराणो से मिलता जुलता है। प्राणी का आत्मा से वियोग होने पर उसके द्वारा किये गये पापो का कर्म उसे नरक मे एक निश्चित अवधि तक भोगना पडता है।

मार्कण्डेय पुराण मे रौरव, महारौरव, तम निकृन्तन, अप्रतिष्ठ, असिपत्र, तप्तकुम्भ, अन्धतामिस्त्र तथा तामिस्त्र नरको का वर्णन मिलता है।

डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार–काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, अहकार ये छह मानस विकार ही छह महाशत्रु या छह मुख्य नरक है।[1]

रौरव नरक :–

यह नरक दो हजार योजन विस्तृत है। गहरे गड्ढे मे मिट्टी के समान लाल अगारे भरे पडे है। यमदूत पापी मनुष्य को गड्ढे मे डाल देते है और वे मनुष्य उस अग्नि मे चलने के बाद उठने मे असमर्थ हो जाते हैं। इस प्रकार रौरव नरक को पार करके मनुष्य पाप की शुद्धि के लिये दूसरे नरक मे जाते हैं।[2]

महारौरव नरक –

इस नरक का विस्तार 12 योजन का है। इसकी पृथ्वी ताबे की है तथा नीचे अग्नि की खान है।[3] उसी मे यमदूत पापियो के हाथ–पैर बाधकर उसमे छोड देते है। जो पापी अत्यन्त दुष्ट बुद्धि से दुष्कर्म करते है। व सैकडो वर्षो तक इस नरक से छुटकारा नही पाते।

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ – 70

2 मार्कण्डेय पुराण 10/87

3 मार्कण्डेय पुराण 12/6

तम नरक :–

इस नरक मे अत्यन्त शीत पडने के कारण पापियो के दात टूटते हैं। भूख–प्यास अत्यन्त प्रबल हो जाती है बर्फीली वायु उनकी हड्डियो को भग कर देती है तथा उससे जो मज्जा और रुधिर गिरता है उसी को पापी मनुष्य भूख से व्याकुल होने के कारण खाकर अपनी भूख–प्यास मिटाते हैं[1] एव पाप क्षय होने तक भ्रमण करते रहते हैं।

निकृन्तन नरक –

यह नरक कुम्हार के चाक के समान घूमता रहता है[2] यमदूत पापियो को डालकर चक्र को तेजी से घुमाते हैं। जब तक पापक्षय नही हो जाता तब तक सहस्त्रो वर्ष तक पापी इसी नरक मे भ्रमण करते रहते है।

अप्रतिष्ठ नरक :–

निकृन्तन नरक के बाद पापी मनुष्य अप्रतिष्ठि नरक मे जाते हैं। यह नरक मोह का रूप है। यहॉ दो प्रकार के यन्त्र चक्र और घटी इसे भी कुम्हार के चाक की भाति यमदूत चलाते रहते हैं। जिससे मनुष्य लगातार घूमता हुआ असहनीय दुख भोगता है। पापी द्वारा बार–बार रक्त वमन[3] करने से रक्त की धारा बहती है। इसमे पापी, पापक्षय होने तक नरक भोगते हैं।

असिपत्र नरक :–

यह नरक पृथ्वी के सहस्त्र योजन मे स्थित है। इस नरक मे पृथ्वी अग्नि के समान जलती रहती है एव हवा बहने से तलवार के समान पत्ते गिरते है जो पापी के शरीर को छिन्न–भिन्न कर देते है।

तप्त कुम्भ नरक .–

इस नरक के चारो तरफ अग्नि जलती रहती है तथा तेल खौलता रहता है। इसमे यमदूत पापियो का उल्टा करके डाल देते हैं। तेल मे पापी मनुष्य को पकाये जाने के बाद दर्वी द्वारा उसे मथा जाता है।[4]

1 मार्कण्डेय पुराण 12/16
2 मार्कण्डेय पुराण 12/19
3 मार्कण्डेय पुराण 12/29
4 मार्कण्डेय पुराण 12/48

इसके अतिरिक्त मार्कण्डेय पुराण मे अन्धतामिस्त्र, तामिस्त्र पुन्नाम आदि नरको का नामोल्लेख प्राप्त होता वास्वविकता तो यह है कि प्रत्येक मनुष्य के मन मे ही स्वर्ग एव नरक है। मनुष्य अच्छे कर्म करता है या सोचता है स्वर्ग है इसके विपरीत नरक है।

विभिन्न योनियो में जन्म –

मनुष्य पृथ्वी लोक मे जो भी पुण्य–पाप कर्म करते है वे मनुष्य अपने कर्मानुसार मृत्युपश्चात पुन पृथ्वी पर विभिन्न योनियो मे जन्म लेते है। राजा विपश्चित से यमदूत ने मनुष्य के कर्मानुसार निम्न योनियो मे जन्म लेने का वर्णन किया –

कर्म		योनि
पतित पुरुष से अर्थ हरण करने वाले	–	गधा योनि मे जन्म लेते है[1]
छल कपट करने वाले पुरुष	–	कुत्ता योनि मे
माता–पिता का अपमान करने वाले पुरुष	–	गधा योनि मे
गाली देने वाले पुरुष	–	मैना योनि
भाई की पत्नी का अपमान करने वाले पुरुष	–	कबूतर योनि मे
स्वामी का पिण्ड खाने वाले पुरुष	–	वानर योनि मे
धरोहर हरण करने वाले पुरुष	–	कृमि योनि मे
असूया करने वाले पुरुष	–	राक्षस योनि मे
विश्वास धात करने वाले पुरुष	–	मछली योनि मे
राज पत्नी से रमण करने वाले पुरुष	–	सूकर योनि मे
भाई की पत्नी से रमण करने वाले पुरुष	–	कोयल " "
देवता, पितर को भोजन ने देने वाले पुरुष	–	कौवा " "
बड़ भाई का अपमान करन वाले पुरुष	–	क्रौञ्च " "
स्त्री का वध करन वाले पुरुष	–	कृमि " "
भोजन चुराने वाले पुरुष	–	मक्खी " "
अन्न हरण करने वाल पुरुष	–	बिल्ली " "
तिल–दाना हरण करने वाले पुरुष	–	चूहा " "
घृत हरण करने वाले पुरुष	–	नेवला " "

1 मार्कण्डेय पुराण 15/1

मृग–मास हरण करने वाले पुरुष	–	गिद्ध
दधि हरण करने वाले पुरुष	–	कृमि
दूध हरण करने वाले पुरुष	–	बगुला
तेल हरण करने वाले पुरुष	–	तेली
मधु हरण करने वाले पुरुष	–	डस
लोहा हरण करने वाले पुरुष	–	कौवा
कासा हरण करने वाले पुरुष	–	हारीत
चादी हरण करने वाले पुरुष	–	कबूतर
सुवर्ण हरण करने वाले पुरुष	–	कृमि
रेशम हरण करने वाले पुरुष	–	चकवा

इस प्रकार अनेक निषिद्ध कर्मो एवम् योनियो मे जन्म लेने वाले का वर्णन प्राप्त होता है।

मनुष्य देवता का सम्बन्ध :–

मार्कण्डेय पुराण मे देवता और मनुष्य एक दूसरे के पूरक बताये गये हैं। मनुष्य यज्ञ के द्वारा देवताओ को तृप्त करते हैं तो देवता भी अन्न उत्पादन के लिए वृष्टि की व्यवस्था करते हैं तो मनुष्य भी ऊपर की ओर होम द्वारा घृत की वर्षा करते हैं। जो मनुष्य नित्य –नैमित्तक क्रियाओ को देवताओ को अर्पण नही करते उन्हे अनेक प्रकार के भयकर रोग हाते हैं उनकी मृत्यु हो जाती है।

कौन किससे प्रधान–मार्कण्डेय पुराण के अनुसार विष्णु देवताओमे प्रधान है, इन्द्रियो मे मन प्रधान है, अस्त्रा म वज्र ,मनुष्योमे ब्राह्मण प्रधान है,आभूषणो मे चूणामणि प्रधान है।आठ प्रकार के आत्मगुणो मे दया प्रधान हे वेद्य मे अश्विनी कुमार प्रधान है, बुद्धि मे वाचस्पति प्रधान है, तेज मे सूर्य प्रधान है, धैर्य मे समुद्र कान्ति मे शशाक प्रधान है एव पृथ्वी से अधिक सहनशील कोई नही है।

स्वरूपेणातिभिषजो देवाना पार्थिवात्मज ।

बुद्धया वाचस्पति कान्त्या शशाक तेजसा रविम्।।[1]

देवगण –

सूर्य –" सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च[2]"सूर्य जगत की आत्मा है। तम और प्रकाश का देवता सूर्य है।

1 मार्कण्डेय पुराण 119/14
2 ऋग्वेद–1/115/1

ऋग्वेद मे सूर्य को कृष्ण रजस् एव शुक्ल रजस् के सम्बोधन द्वारा स्तुति की गयी है–

"आ कृष्णेन रजसा वर्तमानो निवेशयन्नामृतमर्त्य च ।

हिरण्मयेन सविता रथेन देवो याति भुवनानिपश्यन् ।।1

त्रिवेद का सम्मिलित रुप,त्रयी विद्या, सुवर्ण समान रग वाला सूर्य है। सृष्टि रचना के लिए ब्रह्मा जी ने सूर्य का आह्वा किया था क्योकि बिना सूर्य के प्रकाश से सृष्टि करना असम्भव था।कालान्तर मे सूर्य को विष्णु रुप मानकर देवताओ ने यज्ञ किया था।सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड सूर्य की गति से गतिमान है। सूर्य के स्वरुप को हम तीन दृष्टि से निरूपित कर सकते है। प्रथमत सूर्य, जो हमे खुली आखो से दिखायी पडने वाला सुवर्ण रग का गोलाकार पिण्ड है।

द्वितीय रूप मे –सूर्य, अपनी कामनाओ की सिद्धि के लिये पूजा अर्चना एव आराधना करते है। तृतीय रूप मे –सूर्य,जो वेद पुराण आदि समस्त शस्त्रो का प्रतिपाद्य, त्रिगुणात्मिका प्रकृति का अधीश्वर,समस्त विश्व प्रपंच का अधिष्ठान,परात्पर, शुद्ध, शाश्वत, सच्चिदानन्द ब्रह्म हैं।2 मूर्त रुप मे सूर्य की प्रतिमा का प्रथम प्रमाण बोधगया की कला मे है।3 सूर्य मे अदिति भाव है अत सूर्य को आदित्य भी कहा जाता है।

सूर्य देवता का परिवार– सूर्य की मा अदिति एव पत्नी सज्ञा थी । सूर्य देवता ने अपने भाई एव पुत्र –पुत्रीको उनके अनुसार अलग –अलग स्थान दिया। अश्विनी कुमार को वैद्य की सज्ञा, रेवन्त को गुह्यगणो का आधिपत्य,यम को लोकपाल एव पितरो का आधिपत्य, यमुना को कलिन्द देश वाहिनी नदी, सावर्ण को भावी सावर्णिक मनु, शनैश्चर को ग्रह प्रदान किया था।सूर्य के 6 पुत्र –पुत्रियां थी जिनमे 3 पुत्र –पुत्री वैवस्वत, यम,यमी –विश्वकर्मा पुत्री सज्ञा से उत्पन्न हुये थे एव तीन पुत्र – पुत्री– सावर्णिक, शनैश्चर एव तपती-छाया सज्ञा से उत्पन्न हुये थे ।

स्तुति – सूर्य देवता की स्तुति आद्य ऋक के द्वारा होती थी सभी देवता एक साथ होकर स्तुति करते थे। इन्हे नाभिस्वरुप कहा गया है । मार्कण्डेय पुराण मे सूर्य की स्तुति का उल्लेख पाच स्थलो मे प्राप्त होता है, अर्थात् सूर्य की पाच स्तुतियो का वर्णन प्राप्त होता है।

1 ऋग्वेद 1/35/2
2 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ – 41
3 पुराण विमर्श पृष्ठ – 500

मार्कण्डेय पुराण मे प्रथम स्तुति ब्रह्मा जी ने सृष्टि रचना के निमित्त की थी क्योकि सूर्य के तेज के बिना सृष्टि करना असम्भव था। इसी प्रकार देवताओ और राक्षसो के मध्य युद्ध प्रसग मे सूर्य स्तुति हुयी थी जिसमे देवता गण पराजित हुये थे अत देव माता ने नियम पूर्वक सूर्य की स्तुति अपने पुत्रो के विजय के निमित्त की थी ।भगवान विश्वकर्मा द्वारा सूर्य के तेज को कम करने के लिये स्तुति की गयी, पुन सूर्य के तेज को बढाने के लिये देवताओ ने सूर्य की स्तुति की थी । पॉचवी स्तुति प्रजा गण अपने राजा की लम्बी आयु के लिये सूर्य स्तुति करने का वर्णन प्राप्त होता है।

सूर्य के औपाधिकस्वरूप :-

मार्कण्डेय पुराण मे सूर्य को यज्ञरूप, ब्रह्मरूप,त्रयी ओङ्कार कहा गया है। सूर्य –हरि रूप, महादेव, इन्द्र ,धनेश्वर, कुबेर, पितृपति, अम्बुपति (वरुण), समीर, सोम, अग्नि, गगन, महिधर, समुद्र के अतिरिक्त सूर्य मूर्ति रूप मे विस्पष्टा, परमा, विद्या, ज्योति, शाश्वती, दीप्ति, कैवल्य[1] आदि है।

मार्कण्डेय पुराण मे सूर्य के सात सूक्ष्म रुपो[2] भू, भुव ,स्व ,जन,मह ,तप सत्य का वर्णन प्राप्त होता है।

सूर्य देव गोलाकार, अग्निपिण्ड के समान लोहितशरीरधारी, लाल, पीला, काला एव सफेद रग वाले है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सूर्य उदयाचल मे निवास करते हैं एव उनका रथ तोते के समान वर्ण वाले अश्व से बधा हुआ है। यह आठ मास तक इन्दुमय रस ग्रहण करते है।

ब्रह्मा :-

लगभग प्रत्येक पुराणो ने ब्रह्मा जी को सृष्टि के रचयिता के रुप मे स्वीकार किया है। ऋग्वेद मे ब्रह्मा को "प्रजापति"के नाम से सम्बोधन किया गया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार यह देवों के पिता है।[3] सृष्टि के आरम्भ मे ब्रह्मा जी का अस्तित्व था।[4] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार –सूर्य सब तत्वो की आयुऔर आधार है एव रजोगुण स्वरूप है।ब्रह्माजी के चारो मुख से वेद एव पुराणो का आविर्भाव हुआ है।[5]

1 मार्कण्डेय पुराण – 98/17–18
2 मार्कण्डेय पुराण –98/25
3 शतपथ ब्राह्मण –11/1/6/14
4 शतपथ ब्राह्मण – 2/2/4/1
5 मार्कण्डेय पुराण – 42/20

एव ब्रह्म जी के मन से सप्तर्षियो की उत्पत्ति हुयी। तत्पश्चात सम्पूर्ण सृष्टि की उत्पत्ति ब्रह्मा ने की। ब्रह्मा को क्षेत्रज्ञ कहा गया है।

"अव्यक्त क्षेत्रमुद्दिष्ट ब्रह्मा क्षेत्रज्ञ उच्यते "[1]

ब्रह्मा जी के चारो मुख से वेद,छन्दएव स्तोम आदि की उत्पत्ति हुयी। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार प्रथम मुख से ऋग्वेद, गायत्री छन्द, त्रिवृत स्तोम, रथन्तरसाम, अग्निष्टोम यज्ञ की उत्पत्ति हुयी। दक्षिण मुख से यजुर्वेद, त्रैष्टुभ छन्द, पचदश स्तोम, वृहत् साम और उक्थ यज्ञ, पश्चिम मुख से सामवेद, जगती छन्द, पचदश स्तोम, वैरूप, अतिरात्र यज्ञ एव उत्तर मुख से इक्कीस अथर्व, आप्तोर्याम यज्ञ, आनुष्टुभ, वैराज की उत्पत्ति हुयी । वेदो मे इन्ही छन्दो,स्तोम एव यज्ञो आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।

ब्रह्मा जी की आयु का परिमाण –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ब्रह्मा जी की आयु का परिमाण निम्न है–

15 निमेष मे –1काष्ठा

30काष्ठा मे –1कला

30कलामे – 1 मुहूर्त्त

30मुहूर्त्त मे – मनुष्य का 1 दिन रात

30 दिन रात मे – 1 मास

6 मास मे –1 आयन

2 अयन मे – 1 वर्ष

1वर्ष मे-- देवताओ का एक दिन रात होता हे

दिव्य परिमाण मे 12000 हजार वर्ष मे सत्युग आदि चारो युगो का विभाग किया गया है।

सत्युग–4000वर्ष +400 वर्ष सध्या +400वर्ष सध्याश =4800

त्रेता युग –3000वर्ष +300वर्ष सध्या +300 वर्ष सध्याश =3600

1 मार्कण्डेय पुराण – 42/72

द्वापर युग–2000वर्ष+200वर्ष सध्या +200 वर्ष सध्याश =2400

कलियुग– 1000वर्ष +100वर्ष सध्या + 100 वर्ष सध्याश =1200

इस तरह 4800+3600+2400+1200=12000वर्ष मे 100 से गुणा करने पर **1200000वर्ष का ब्रह्मा** का एक दिन होता है। ब्रह्मा के एक दिन मे चौदह मनु होते है। 71 चतुर्युग मे एक मनवन्तर होता है। 306720000(तीस करोड सडसठ लाख बीस हजार) वर्ष मानव वर्ष का एक मन्वन्तर होता है ।

दिव्यमान के वर्षानुसार –आठ लाख बावन हजार दिव्य वर्ष मे एक मन्वन्तर चौदह से गुणा करने पर 11928000 दिव्य वर्ष मे ब्रह्मा का एक दिन माना गया है ' एक सौ वर्ष का पर और पॉच सौ वर्ष का एक परार्द्ध होता है। ब्रह्मा का एक परार्द्ध बीत चुका है उसी के अन्त मे पाद्म नामक महाकल्प उपस्थित हुआ था, दूसरा परार्द्ध वाराह कल्प है यही प्रथम कल्प कहा गया है '

शत हि तस्य वर्षाणा परमित्यभिधीयते

वाराह इति कल्पोऽय प्रथम परिकल्पित ।1

विष्णु :–

ऋग्वेद के अनुसार विष्णु सौर देवता है अर्थात् सूर्य के ही अन्यतम् रूप है ।2 मार्कण्डेय पुराण कथा का प्रारम्भ विष्णु की आराधना से होता है एव विष्णु के निर्गुण एव सगुण रूप का उल्लेख प्राप्त होता है । विष्णु की चार मूर्तियो वासुदेव, सकर्षण, प्रद्युम्न एव अनिरुद्ध का उल्लेख करते हुए भगवान विष्णुका ' नारायण ' शब्द से सम्बोधन करते है ।

"आपा नारा इति प्रोक्तामुनिभिस्तत्वदर्शिभि । अयन तस्य ता पूर्वं तेन नारायण स्मृत ।।"3

मार्कण्डय पुराण के अनुसार –

"विष्णु सभी देवताओ मे प्रधान है–"त्रिदशाना यथा विष्णुर्द्विपदा ब्राह्मणो यथा"4

ये सत्वगुण प्रधान देवता है। भगवान विष्णु चराचर, शख, चक्र, गदाधारी हैं। मुक्ति के दाता, अधर्म विनाश

1 मार्कण्डेय पुराण –43/42–44
2 पुराण विमर्श – 459
3 मार्कण्डेय पुराण –4/43
4 मार्कण्डेय पुराण –1/7

के निमित्त स्थित, पालन आदि करते है। मार्कण्डेय पुराण मे विष्णु के अवतारो मे वराह, नृसिह, वामन, श्रीकृष्ण आदि का नामोल्लेख प्राप्त होता है।

शिव —

शिव तमोगुण प्रधान देवता हे। शिव ही रुद्ररूप है सृष्टि के सहार कर्त्ता है। ये सम्पूर्ण विश्व का सहार करते हुए शयन करते है। तमोगुण प्रधान रुद्र के अश से दुर्वासा का जन्म हुआ था। रुद्र सृष्टि का वर्णन पूर्व के अध्याय मे हो चुका है।

इन्द्र —

इन्द्र ऋग्वैदिक देवता हैं। मार्कण्डेय पुराण मे इन्द्र को पाकशासन कहा गया है। इन्द्र को शक्र[1] एव पुरन्दर[2] नामो से सम्बोधित किया गया हे।मार्कण्डेय पुराण के अनुसार राजा खनीनेत्र ने पुत्र कामना के लिये इन्द्र की स्तुति की थी[3] तत्पश्चात खनीनेत्र पुत्र रत्न से सुशोभित हुये थे। इन्द्र की स्तुति का विस्तृत वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे नही प्राप्त होता है।

अग्नि —

मार्कण्डेय पुराण मे अग्नि को देव रूप मे स्तुति की गयी है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसान अग्नि देव की ऑख पिगल वर्ण ,ग्रीवा लाल रग एव पूरा शरीर कृष्ण वर्ण का है।[4] अग्नि देवता की सात जिह्वायेंज्वाला रुप मे हैं। जिनके नाम निम्न है—काली, कराली, मनोजवा, सुलोहिता,सुधूर्मवर्णा, स्फुलिङ्गिनी एव विश्वा है जिनसे क्रमश काल की प्रवृत्ति, महाप्रलय की प्रवृति, लघुता की उत्पत्ति, कामना की पूर्ति, रोगो की निवृत्ति, शास्त्रो की उत्पत्ति एव सुख की उत्पत्ति होती है। अग्नि देव हुत, हवि, हव्य एव सोमरस आदि का भाजन करके प्रसन्न होते हैं।[5] मार्कण्डेय पुराण मे अग्नि की स्तुति भूति के शिष्य शान्ति द्वारा किया गया है। यह स्तुति लगभग 45 श्लोको मे प्राप्त होता है। स्तोत्र मे अग्नि देव को देवता, दानव, यक्ष, गन्धर्व, मनुष्य, पशु, पक्षी के पालन कर्त्ता, जल के उत्पन्न एव पानकर्तारूप मे स्तुति की गयी है।

1 मार्कण्डेय पुराण –118/6
2 मार्कण्डेय पुराण –118/1
3 मार्कण्डेय पुराण –118/2–3
4 मार्कण्डेय पुराण –96/59
5 मार्कण्डेय पुराण –96/65

अग्नि देव शुक्ररूपी, सुवर्चा देवता के प्राण स्वरूप, सूर्य, दिन,- रात्रि, सध्या, मुहूर्त्त, सज्ञा दी गयी है।[1] अग्नि देव को पिंगाक्ष, अनल, हुताशन, विश्वपावन, सप्तार्चि, हव्यवाहन, कृशानु, अग्नि, पावक, शुक्र[2] इत्यादि नामो से सम्बोधित किया गया है। मार्कण्डेय पुराण मे यम ,वरुण, बृहस्पति , कुबेर, वायु , धाता –विधाता आदि देवताओ का नामोल्लेख प्राप्त होता है।

पृथ्वी' .–

पृथ्वी को देवी के रूप मे माना गया है जिस पर सभी जीव निवास करते है। पृथ्वी को जीवित देवी के रूप मे दर्शाया गया है।मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पृथ्वी पर जब दैत्यो का भार बढ गया तब पृथ्वी बोझ से पीडित हो उठी तब सुमेरु पर्वत पर देवताओ की सभा मे अपने दु ख को बताया[3] तत्पश्चात पृथ्वी पर दैत्यो का भार कम करने के लिये पॉच पाण्डवो की उत्पत्ति हुयी।

त्रि–ऋण –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पुरुष को तीन प्रकार के ऋणो को पूरा करना आवश्यक है। जो निम्न है– देवऋण, पितृऋण, अतिथि ऋण।यज्ञ मे"स्वाहा[4]" उच्चारण द्वारा देवताओ के ऋण से मनुष्य को मुक्ति मिलती है एव स्वर्ग लाभ से वचित नही होना पडता। "स्वधा" से पितरो को शान्ति मिलती है। अन्नदान से अतिथि आदि तृप्त होते हैं।

मानसी सिद्धि :–

मार्कण्डेय पुराण मे भारत का भौगोलिक चित्रण करते हुए मार्कण्डेय ऋषि ने किपुरुषादि आठ वर्षो मे छ प्रकार की मानसी सिद्धि का उल्लेख किया है। यह सभी सिद्धि कामनाओ की पूर्ति करने वाले थे। मार्कण्डेय पुराण मे छ प्रकार की मानसी सिद्धि निम्न है –

वार्क्षी, स्वाभाविकी, देश्यो, तोयोत्था, मानसी, कर्मजा,अभिलाषा प्रदान करने वाले वृक्ष से "वार्क्षी" नाम की मानसी सिद्धि उत्पन्न होती है। जो सिद्धि स्वभावत उत्पन्न होती है वह "स्वाभाविकी" सिद्धि होती है।

1 मार्कण्डेय पुराण –96/49
2 मार्कण्डेय पुराण –96/60
3 मार्कण्डेय पुराण –5/18–19
4 मार्कण्डेय पुराण –92/5

दैशिकी तृप्ति देने वाली "देश्यासिद्धि" होती है। जल की सूक्ष्मतावश जो सिद्धि होती है "तोयोत्था" कही गयी है।[1] ध्यान के द्वारा "मानसीसिद्धि" उत्पन्न होती है उपासना आदि कार्यों से उत्पन्न होने वाली सिद्धि "कर्मजा सिद्धि" कही गयी है।

मत्र –

रक्षोघ्न मत्र – कुशलतापूर्वक यज्ञ सम्पन्न करने के लिये ब्राह्मण मुनि लोग रक्षोघ्न मत्र द्वारा असुरो के मस्तिष्क का उच्चाटन करते थे। यज्ञो द्वारा ब्राह्मण लोग, बालक राक्षस का उच्चाटन किया था।[2]

निवर्तन मत्र – भगवान भास्कर की आराधना कर निवर्तन मत्र द्वारा योद्धा को नाना प्रकार के दिव्य अस्त्र प्राप्त करने का उल्लेख मिलता है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार–शत्रुओ को पराजित करने के लिये राजा तामस ने भास्कर देव की आराधना कर "निवर्तन मत्र" के सहित नाना प्रकार के दिव्यास्त्र प्राप्त किये थे।[3]

वारुण मत्र – मार्कण्डेय पुराण मे वरुण देव की स्तुति वारुण मत्र द्वारा किये जाने का उल्लेख प्राप्त होता है। यह स्तुति जल मे खडे होकर करना होता था। मुनिवेशधारी मायावी तालकेतु द्वारा वारुण मत्र से वरुण स्तुति करने का विवरण मिलता है। प्रजा की पुष्टि के लिये यह वैदिक मत्र किया जाता था।

"वैदिकै र्वारुणैर्मन्त्रै. प्रजाना पुष्टि हेतुकै"[4]

भूमिसूक्त– मनुष्य के हृदय मे यदि उद्वेग उत्पन्न हो या पापकर्म के लिये मन परेशान हो तो भूमि सूक्त का जप करना चाहिये।

"चिन्तयेच्च नर पापा मामेषा दुष्टचेतना।

भ्रामयत्य सकृज्जप्य भुव सूक्त समाधिना ।।"[5]

1 मार्कण्डेय पुराण –53/25
2 मार्कण्डेय पुराण –67/21
3 मार्कण्डेय पुराण –71/52
4 मार्कण्डेय पुराण –20/11
5 मार्कण्डेय पुराण –48/41

रवि सूक्त – राजा की लम्बी आयु के लिये रवि सूक्त द्वारा सूर्य स्तुति का उल्लेख मिलता है।

अग्नि होत्र पराश्चान्ये रविसूक्तान्यहर्निशम्"[1]

विद्याये –

मार्कण्डेय पुराण मे स्थान–स्थान पर अद्भुत विद्याओ का उल्लेख प्राप्त होता है जो अपने आप मे एक अनूठी एव प्राचीन विद्या है। इस विषय मे आचार्य बलदेव उपाध्याय लिखते हैं –"पुराणो मे ऐसी विद्याये आख्यानको के प्रसग मे वर्णित है जिन पर आधुनिक मानव प्राय विश्वास नही करता परन्तु उस युग मे वे सच्ची थी तथा उनका प्रयोग जनसाधारण के बीच किया जाता था। पुराणो के गम्भीर अनुशीलन से यदि इन विद्याओ के स्वरुप का परिचय मिल सके ते इस वैज्ञानिक युग मे नवीन चमत्कार आज भी दिखलाये जा सकते है"[2]

इच्छाधारिणी विद्या :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार मदनिका निशाचरी अपनी इच्छा से कोई भी रूप धारण कर सकती थी[3]। यद्यपि इस विद्या का रहस्य इस पुराण मे नही मिलता कि ये विद्या किसी शाप या वर रूप मे उसे मिलती है। इसी प्रकार तार्क्षी पक्षिणी का विवाह एक ब्राह्मण से होता है सभवत वो भी इस विद्या को जानती रही होगी। इसी प्रकार एक मृगी, कामिनी का रूप धारण कर द्युतिमान (मनु) को उत्पन्न करना भी इच्छा धारिणी विद्या का एक उदाहरण है।[4]

मन्त्र विद्या (पादलेप औषधि) –

इस विद्या का प्रयोग वरुणा नदी के तट पर बसा अरुणास्पद नगर मे रहने वाले एक ब्राह्मण ने किया था। जिसकी इच्छा थी कि वह सम्पूर्ण पृथ्वी का भ्रमण करे। वन, उद्यान एव नगर आदि को देखे। इस ओषधि को मन्त्र विद्या मे पारदर्शी एक अतिथि ने ब्राह्मण को दिया था। इस पादलेप औषधि की शक्ति इतनी अधिक थी कि व्यक्ति एक दिन मे सहस्त्र योजन जाकर उसी गति मे वापस भी आ सकता था। किन्तु पदलेप के धुल जाने पर औषधि की शक्ति नष्ट हो जाती थी। औषधि के नष्ट होने पर मार्कण्डेय

1 मार्कण्डेय पुराण –106/53
2 पुराण विमर्श पृष्ठ – 314–316
3 मार्कण्डेय पुराण –2/30
4 मार्कण्डेय पुराण –63/22

पुराण में यह भी बताया गया कि गार्हपत्य अग्नि को प्रणाम पूर्वक उपांशु जप करने से पुनः उस शक्ति को प्राप्त कर सकता था। किन्तुयह पादलेप किन–किन औषधियों के मेल से बनता था इसका उल्लेख मार्कण्डेय पुराण में कहीं नहीं प्राप्त होता।

सारभूत अस्त्र विद्या :–

अध्याय 60 "ब्राह्मण वाक्य का वर्णन" में एक विशेष प्रकार की अस्त्र विद्या का वर्णन मिलता है। समस्त अस्त्रों का हृदय एवं सार रुप सभी प्रकार की विपत्ति में रक्षा करने वाला, शत्रुओं का नाश करने वाला, सभी अस्त्र रुप में काम देने वाला है। इस अस्त्र के रहते किसी अन्य अस्त्र की आवश्यकता नही होती, शत्रु आवश्यक रुप से पराजित होता है। इस विशेष प्रकार के अस्त्र को परम्परा क्रम में मनोरमा को अपने पिता इन्दीवर से प्राप्त हुआ था। मनोरमा के पिता को, मनोरमा के नाना चित्रायुध से प्राप्त हुआ था। चित्रायुध को वशिष्ठ मुनि से, वशिष्ठ मुनि को स्वायंभुव मनु से एवं स्वायंभुव मनु को रूद्र से यह विशेष सारभूत अस्त्र विद्या प्राप्त हुयी थी। मनोरमा ने इस विद्या को स्वरोचिष को आचमनपूर्वक रहस्य और निवर्तन मंत्र के सहित अस्त्र विद्या हृदय मंत्र दिया।

"तथेत्युक्ते ततस्तेन वार्युपस्यपृश्य तस्य तत्।

अस्त्राणां हृदयं प्रादात्सर हस्य निवर्तनम् ।।"[1]

रक्षोघ्न मंत्र :–

यह ब्राह्मणों का एक श्रेष्ठ मंत्र है। यज्ञ का सम्पादन सफलपूर्वक हो सके उसके लिये रक्षोघ्न मंत्र का प्रयोग किया जाता था। जिससे राक्षसों का उच्चाटन हो सके।[2]

सर्वभूत रुत् विद्या :–

मन्दार नामक विद्याधर की कन्या विभावरी को इस विद्या का ज्ञान प्राप्त था। इस विद्या में सभी प्रकार के प्राणियों की बोली को समझा जा सकता था। विभावरी ने यह विद्या स्वरोचि को प्रदान किया था।[3]

....

1. मार्कण्डेय पुराण –60/29
2. मार्कण्डेय पुराण –67/21
3. मार्कण्डेय पुराण –61/2–3

पद्मिनी विद्या –

पद्मिनी विद्या की देवी लक्ष्मी है,मुनिपुङ्गव की पुत्री कलावती ने इस विद्या को स्वरोचि को प्रदान की थी, कलावती को दक्ष की पुत्री सती ने दी थी। इस विद्या द्वारा धन की प्राप्ति होती है इस विद्या का ज्ञाता सम्पूर्ण निधि को अपने वश मे कर लेता है। मार्कण्डेय पुराण मे पद्मिनी विद्या के अन्तर्गत आठ प्रकार की निधियो[1] का उल्लेख प्राप्त होता है। ये आठ निधिया निम्न हैं–पद्म, महापद्म, मकर, कच्छप, मुकुन्द, नन्दक, नील और शख। यह आठो प्राकर की निधि सात्विक राजसिक या तामसिक गुणो से युक्त होती थी।

पद्म –

यह सात्विक निधि है इस निधि का भी अधिष्ठाता सात्विक चतुरता सम्पन्न एव सभी भोगो से सम्पन्न होता है। सोना, चादी,ताम्र आदि धातुओ के क्रय–विक्रय से सम्पत्ति की वृद्धि होती है। यदि निधि वशानुगामी होती है।

महापद्म :–

यह भी सात्विक निधि है इस निधि का भी अधिष्ठाता सात्विक होता है एव योग–योगियो का प्रेमी होता है इसमे पद्मराग आदि रत्नो मोती, मूगा का सचय, और उनके क्रय–विक्रय से सम्पत्ति की वृद्धि होती है।

मकर .–

यह तामस निधि है। इस निधि का अधिष्ठाता तामसिक और सुशील होता है।शस्त्रो का व्यवसायी होता है। राजा से प्रेम करने वाला मनुष्य को दान देने से तृप्त होने वाला होता है। इसे चोर, डाकू तथा युद्ध से हानि उठानी पडती है। इनकी सम्पत्ति वशानुगामी नही होती।

कच्छप –

यह भी तामस निधि है। इस निधि का पुरुष तमोगुणी होता है। इसका अधिष्ठाता कर्म के अधीन हो सम्पूर्ण भोग्य पदार्थों को भोगता है। यह किसी पर विश्वास नही करता। कृपण स्वभाव का होता है। सम्पत्ति को छिपाकर रखता है। यह वशानुगामी नही होती है।

1 मार्कण्डेय पुराण अध्याय –65

मुकुन्द –

यह राजस निधि है। इससे युक्त मनुष्य रजोगुणी होता है। वीणा, वेणु, मृदङ्ग इत्यादि चार प्रकार के वाद्यो का सग्रह करता है। गाने और नाचने वाले को धन देता है। एव उनका सम्मान करता है। स्त्रियो से उसकी प्रीति होती है यह निधि वशानुगामी नही होती है।

नन्दक .–

यह रज और तम दोनो गुणो से युक्त होती है इस निधि का मनुष्य जडता को प्राप्त होता है यह थोडा भी निरादर नही सह सकता, प्रशसा करने से अत्यन्त आनन्दित होता है। दूर देश से आये हुये मनुष्य का भरण–पोषण करता है। परलोक के प्रति यत्नवान नही होता, मृदुस्वभाव वाला होता है।

नील .–

यह निधि सत्व एव रजोगुण सम्पन्न होती है। इस निधि का मनुष्य फल–फूल, पुष्प, काष्ठ, वस्त्र, कपास, मूगा, मोती आदि को ग्रहण करता है यह वन–उपवन, पुल–तालाब–नदी आदि बनवाता है। भोगने योग्य वस्तु को ख्याति प्राप्त करता है। यह तीन पीढी तक चलता है।

शंख :–

यह रजोगुण एव तमोगुण सम्पन्न होता है इस निधि से सम्पन्न व्यक्ति धन को अपने ऊपर ही खर्च करता है। अपने कुटुम्ब के ऊपर खर्च नही करता है। यह निधि मनुष्य के अर्थदेवता नाम से प्रसिद्ध है।पद्मिनी विद्या के प्रभाव से स्वरोचि ने तीन पुर का निर्माण किया था। विजयपुर पूर्व मे, नन्दवती उत्तर मे, ताल पुर दक्षिण मे स्थापना की गयी। डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार – "गुप्तो के स्वर्णयुग मे धन कमाने के जो मुख्य पेशे थे उन्ही का नाम पद्मिनी विद्या थी।[1]

आकाशवाणी :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार–आकाश मे देवता लोग आकाशवाणी किया करते थे। आकाशवाणी द्वारा ही मरुत का नाम "मरुत" विख्यात हुआ था।[2]

1 मार्कण्डेय पुराणएक सास्कृतिक अध्ययन पृश्ठ –157

2 मार्कण्डेय पुराण –124 / 35–36

भविष्यवाणी –

मार्कण्डेय पुराण मे भविष्यवाणी का उल्लेख यत्र–तत्र प्राप्त होता है। मदालसा ने अपने चौथेपुत्र अलर्क का नामकरण करते हुये यह भविष्यवाणी की थी कि – यह धर्मज्ञ पुत्र "अलर्क" नाम से विख्यात होगा एव महाबुद्धिमान होगा।

"अलर्क इति धर्मज्ञ ख्याति लोके गमिष्यति ।।
कनीयानेष ते पुत्रो मतिमाश्च भविष्यति।। 1

शाप –

शाप प्रारब्ध का फल है। मार्कण्डेय पुराण मे शाप देने का उल्लेख यत्र–तत्र प्राप्त है। क्रोधवश शाप देने का वर्णन तत्पश्चात शाप मोचन का भी वर्णन प्राप्त होता है। मार्कण्डेय पुराण मे ऋषि द्वारा नक्षत्र को शाप, मा द्वारा पुत्र को, मुनिपत्र द्वारा राजा को, ऋषि द्वारा अप्सरा आदि को शाप देने का उल्लेख प्राप्त होता है। ऋतवाक ऋषि ने रेवती नक्षत्र को शाप दिया था। बाद मे उसी रेवती नक्षत्र को आकाश मे स्थित किया था।2 सूर्य पत्नी सज्ञा ने अपने पुत्र यम को अशिष्ट व्यवहार करने के कारण शाप दिया था।

"तस्मात्तवैव चरण पतिष्यति न सशय3 "

राजा पृषध्र ने मुनिपत्र को "शूद्र" कहने पर मुनिपुत्र ने शाप दिया था।4 मार्कण्डेय पुराण मे दुर्वासा ऋषि द्वारा वपु नामक अप्सरा को शाप देने का उल्लेख मिलता है क्योकि वपु अप्सरा ने दुर्वासा ऋषि की तपस्या भग की थी।5

शाप मोचन :–

मार्कण्डेय पुराण मे मा द्वारा दिये गये शाप को कोई उपाय नही प्राप्त होता। शाप का प्रभाव अवश्य पडता था किन्तु अपराध न होने पर शाप की अवधि निश्चित हो जाती थी एव शाप मुक्ति के पश्चात पुन वह उसी स्थिति मे हो जाता था।

1 मार्कण्डेय पुराण –23/33–34
2 मार्कण्डेय पुराण –72/52
3 मार्कण्डेय पुराण –103/20
4 मार्कण्डेय पुराण –109/9
5 मार्कण्डेय पुराण –1/54

दर्शन

मानव मन की समस्त जिज्ञासाओ का समाधान ही दर्शन है । भारतीय दर्शन अध्यात्मकपरक है , ऐहिक एव पारलौकिक सुख की प्राप्ति भारतीय दर्शन की प्रथम विशेषता है । परलोक एव पुनर्जन्म पर विश्वास करने वाला भारतीय दर्शन , ईश्वर को ही अपनी समीक्षा का विषय बनाता है ।

आत्मा का स्वरूप .–

मार्कण्डेय पुराण के वेदान्त दर्शन के अनुरूप ही आत्मा के सर्वव्यापी स्वरूप का वर्णन प्राप्त होता है। आत्मा मूर्तिहीन है । आत्मा एक है , वह ही समस्त शरीरो मे विराजमान है । आत्मा कभी नही मरती। आत्मा दोष रहित है । मदालसा अपने पुत्रो के नामकरण के अवसर पर नामो को अर्थहीन बताते हुए राजा (पति) से कहती है कि ' आत्मा सर्वगत सर्वव्यापी और देह का ईश्वर है इसलिए उसकी गति सम्भव नही है ।'[1]

आत्मज्ञान का उपदेश :–

इस पुराण मे मदालसा के उपदेश के माध्यम से आत्म ज्ञान एव आत्मा के स्वरूप की सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत किया गया है। मदालसा अपने प्रथम पुत्र को आत्मज्ञान का उपदेश देती है। यह शरीर पचभूत का बना हुआ है, नाना प्रकार के भौतिक गुण और अगुण सब इन्द्रियो मे है, यह देह आच्छादन मात्र है, क्षीण हो जायेगा अत इससे मोह नही रखना चाहिए । माता–पिता, भाई–बहन कुछ नही हैं। इसका मान नही करना चाहिए । मूढ चित्त लोक इस ससार को सुख का कारण मानते है । अविद्या से युक्त पुरुष ही इस ससार मे भोग के मोह मे पड़ा रहता है । नश्वर शरीर की यर्थाथता का विभत्स रूप मे चित्रण करती हुई मदालसा पुन कहती है कि ' स्त्री हसती है तो हड्डी दिखाई देती है और उसके नेत्रो मे वसा की कलुषता दिखाई पडता है– 'हासोऽस्थिसदर्शनमक्षियुग्ममत्युज्ज्वल यत्कलुष वसाया'[2] इस तरह सभी भोगो से रहित व्यक्ति ही आत्म ज्ञान प्राप्त कर सकता है । धर्म –अधर्म, सत्य–असत्य का त्याग इन सबसे परे व्यक्ति निस्पृह रूप मे रहने पर ही वह महान आत्मज्ञानी होगा । आत्मा स्वरूप रहित है।

1 मार्कण्डेय पुराण –23/38
2 मार्कण्डेय पुराण –23/17

एक ही आत्मा सभी शरीरो मे विद्यमान है । मदालसा ने राजा को बताया कि ' भूत का मर्दन होता है परन्तु आकार का मर्दन कैसे हो सकता है **'भूतैर्भूतानि मर्द्यन्ते अमूर्त्तो मर्द्यते कथम्'**1। मदालसा ने अर्थहीनं नाम को नकारा है ।क्रोध ,मोह ,लोभ इत्यादि सासारिक पिपासाये आत्मा से पृथक है। आत्मा लोभरहित, मोहरहित है । जिस व्यक्ति को आत्मा का ज्ञान हो जाता है । वह इस ससार से विरत रहाता है । यह शरीर पृथ्वी का सूक्ष्म अश है ।

कर्म का स्वरूप –

वेद मे कर्म को विद्या एव अविद्या प्राप्ति का हेतु कहा गया है मार्कण्डेय पुराण के अनुसार– देवासुर सग्राम मे शुक्राचार्य दैत्यो को युद्ध स्थल से न भागने का उपदेश देते हुए अपितु स्वकर्म करने पर बल देते हुए कहा था कि मृत्यु तो निश्चित हे विधाता ने तुमको उत्पन्न किया है।2 यदि विधाता की इच्छा नही है तो तुम्हारी मृत्यु किसी भी स्थिती मे नही हो सकती , वो चाहेगा तभी तुम्हारी मृत्यु होगी, मृत्यु का कोई निश्चित स्थान नही है अत तुम निवृत्त (कर्म करो) हो ।

कर्म एव पुरुषार्थ की दूसरी झलक –शमीक ऋषि ने पक्षियो के निमित्त कहा था कि जीव मात्र ही अपने–अपने कर्म से निहत और रक्षित होते है' सब कार्यो मे ही मनुष्य को यत्न करना चाहिए नही तो पुरुषार्थ न करने से साधुओ के निकट निन्दनीय होना पडता है' । मार्कण्डेय पुराण मे धर्म पक्षियो द्वारा धर्म करने का जो प्रसङ्ग है वह अत्यन्त रोचक है। धर्म पक्षियो द्वारा मानव शरीर का जो उपाख्यान वर्णित हे वह भी अत्यन्त भाव पूर्ण है इस शरीर के प्रति मोह न करना , कर्म के प्रति सवेदनशील होना ही मुख्य कर्तव्य है इस प्रकार जो धर्म पक्षी कुछ समय पहले अकर्मण्य थे अपने पिता के त्याग को देखकर उनमे कर्म के प्रति भावना अपने–आप जागृत हो जाती है । मार्कण्डेय ऋषि पुन जैमिनि ऋषि से शरीर की नश्वरता एव कर्म करने पर बल देते हुए कहते है कि – शमीक ऋषि ने अपने पुत्रो से कहा था कि' यह शरीर हड्डी, मास, त्वचा, रक्त आदि से भरा हुआ है '3 इतनी सी बात सम्भवत सभी मनुष्य जानते है किन्तु

1 मार्कण्डेय पुराण –23/42
2 मार्कण्डेय पुराण –2/49–50
3 मार्कण्डेय पुराण –3/59–72

आगे आप जैसे–जैसे इन पक्षियो के कहे हुए वचनो को ग्रहण करिये तो लगता है कि यह शरीर एक मिट्टी का बना हुआ महल है अत व्यक्ति को स्वकर्म करना चाहिए । कर्म तीन प्रकार के होते है –नित्य, नैमित्तिक एव प्रारब्ध। पक्षिगण यह भी स्वीकारते है कि विश्व मे कोई जीव ऐसा नही है जो प्रारब्ध के वश मे न हो, प्राणियो की जितनी भी चेष्टाये है वह सब देवाधीन है । इसी विषय मे सुकृष मुनि कहते है कि 'अनर्थक पौरुष धिक्कार है, मै समझता हूँ दैव बलवान है ।[1] भाव–अभाव की परम्परा भी मनुष्य को व्याकुल करती है। और यह सब मनुष्य के प्रारब्ध का ही फल होता है जैसे–धन–सम्मान आदि युक्त, ऐश्वर्य सम्पन्न, उत्तमवश मे कोई महात्मा जन्म लेता है और द्रव्यादि के नष्ट होने पर भीलो के द्वारा उसी को सान्त्वना प्राप्त होती है, कोई दानी भी भिखारी हो जाता है और कोई हत्या करके भी अवध्य रहता है । कोई दूसरे की मृत्यु से रक्षा करके भी, दूसरो के द्वारा मृत्यु को प्राप्त होता है ।'

कर्मफल(जन्म मृत्यु का चक्र) :–

मनुष्य का जन्म, उसके पूर्व की स्थिति मृत्यु पश्चात की स्थिति का क्रम मार्कण्डेय पुराण मे बहुत ही सूक्ष्म प्रकार से वर्णित है। जैसे घडी की सूई निरन्तर वृत्ताकार अनवरत चलती रहती है वैसे ही मनुष्य कर्म के अनुसार जन्म मृत्यु के चक्र मे निरन्तर चलता रहता है । स्त्री एव पुरुष के ससर्ग से गर्भ स्थापन होता है। गर्भ मे ही उसके शरीर के अवयव निश्चित होकर धीरे–धीरे वृद्धि को प्राप्त होता है । गर्भ पूर्ण होने के पश्चात उदर से निकलकर प्राणी को असह्य मूर्च्छा होती है फिर वायु के सम्पर्क से उसको सज्ञा आती है ।

'निष्क्रान्तश्चोदरान्मूर्च्छामसह्या प्रतिपद्यते ।
प्राप्नोति चेतना चासो वायुस्पर्श समन्वित ।।'[2]

इस प्रकार जन्म लेते ही प्राणी मोह–माया मे फंस जाता है । चारो अवस्थाओ को प्राप्त करता हुआ मृत्यु को प्राप्त होता है । इस तरह अच्छे–बुरे कर्म करते हुए प्राणी स्वर्ग–नरक को भोगते हुए पुन जन्म लेता है इस प्रकार जीवन–मृत्यु का चक्र चलता रहता है ।

1 मार्कण्डेय पुराण –3/76

2 मार्कण्डेय पुराण –11/18

पुण्य–पाप कर्म का फल –

सभी व्यक्ति को अपने द्वारा किये गये पुण्य एव पापो का फल अवश्य मिलता है ।मार्कण्डेय पुराण मे स्पष्ट रूप से कहा गया है कि –

'यथाबीजहिभूपालपयासिसमवेक्षते ।।
पुण्यापुण्येतथा कालदेशान्य कर्मकारकम् ।
स्वल्प पाप कृत पुसा देश कालोपपादितम् ।।'1

समस्त बीज जिस प्रकार जल की अपेक्षा करते है, पुण्य–पाप भी इसी प्रकार देश, काल और पात्र की अपेक्षा करते है। राजा विपश्चित द्वारा यमदूत से पाप –पुण्य के फल का वर्णन विस्तार से पूछे जाने पर यमदूत ने विभिन्न पापो के कर्मफल का वर्णन निम्न प्रकार से किया– वेद, ब्राह्मण तथा गुरु की निन्दा करने पर दारुण पक्षी पापी मनुष्य की जीभ छेदन करते हैं। जो पापी चुगली करते है उनकी जीभ छुरी से दो खण्ड कर दी जाती हे । जो पापी ब्राह्मण वा अन्य जाति को एक पक्ति मे बैठा कर असमान भाव से भोजन कराते है वह उनकी विष्ठा का भोजन करते है । उच्छिष्ट अवस्था मे स्पर्श करने से उनके हाथ अग्नि कुण्ड में गिरकर जलते है ।'स्वर्ण चुराने वाले, ब्रह्म हत्या करने वाले, मद्य पीने वाले, गुरु की स्त्री का हरण करने वाले पापी लोग चारो ओर से जलती अग्नि मे जलाये जाते है । मार्कण्डेय पुराण मे अन्य प्रकार के भी पापो के कर्म फलो का वर्णन प्राप्त होता है ।

भोग की असारता :–

यह जगत् सर्व भोगमय हे क्योकि सयत आत्मा ब्राह्मण लोग भोग के निमित्त ही यज्ञ करते है एव ज्ञानी पुरुष दृष्ट एव अदृष्ट दोना भागों की कामना करते हुए इसी निमित्त वह देवमदिर निर्माण, कुआ, तालाब का निर्माण एव दान धर्म एव यज्ञ का अनुष्ठान करते है। जो मनुष्य भोग मे आसक्त नही है उनकी बुद्धि परमात्मा का अनुसरण करने वाली हाती है । 'पुत्र, मित्र और स्त्री मे आसक्त प्राणिवर्ग सरोवर की कीचड़ मे डूबे हुए वन हाथी के समान दुख को प्राप्त होते है –

पुत्रमित्रकलत्रेषु सक्ता सीदन्ति जन्तव ।
सर पङ्कार्णवेमग्नाजीर्णा वनगजाइव।।2

1 मार्कण्डेय पुराण –14/23–24
2 मार्कण्डेय पुराण –63/37

सदाचरण –

सदाचरण मात्र धर्म का एक अङ्ग समझा जाता है सदाचारी व्यक्ति को सुह्रद, दीक्षित, राजा,स्नातक, श्वसुर तथा ऋत्विक यह छ व्यक्तियों के घर समागम करने पर उनकी पूजा अर्चना करनी चाहिए । मार्कण्डेय पुराण के अनुसार' जहाँ निम्न चार वस्तुए न रहे वहाँ सदाचारी पुरुष को नही रहना चाहिए –

ऋण प्रदाता वेद्यश्चश्रोत्रिय सजलानदी ।
जिता मित्रो नृपोयत्र बलवान्धर्म तत्पर ।।[1]

सदाचारी के लिए मास भक्षण निषिद्ध नही था किन्तु उसे सुअर व मुर्गे का मास नही खाना चाहिए । सदाचारी पुरुष द्वारा अपने धर्म का पालन न करने पर उसे षष्ठ,मार्जार, चूहा, कुक्कुट, पतित, अपविद्ध, नग्न, नराधम, चाण्डाल, अधर्म आदि पुकारा जाता था । सदाचारी पुरुष को उपार्जित किये हुए धन का चतुर्थांश, धर्म के लिए सचित करना चाहिए आधे भाग से अपना पालन–पोषण एव शेष भाग को मूल धन के रूप मे वृद्धि करना चाहिए ।

ब्रह्म हत्या पाप कर्म :–

मार्कण्डेय पुराण मे ब्रह्म हत्या का उल्लेख पाप कर्म के रूप मे प्राप्त होता है । इन्द्र ने त्वष्टा प्रजापति के पुत्र त्रिशिरा की हत्या की थी क्योकि वह तपस्या कर रहे थे उनकी तपस्या से इन्द्र को भय हुआ था। ब्रह्म हत्या के पश्चात इन्द्र के तेज की हानि हुई इससे इन्द्र को पाप का भागी होना पडा था। दूसरी ब्रह्म हत्या बलदेव जी ने की थी। बलदेव ने मदिरा के नशे मे चूर होकर सूत द्वारा उनका सम्मान न किये जाने पर ब्रह्म (सूत) हत्या की थी इस प्रकार देवताओ द्वारा भी क्रोधवश अधर्म कार्य हो जाता था।

योग –

' सासारिक चित्त वृत्ति का निरोध कर उसे ब्रह्म से जोड दिया जाय उसी को योग कहते है।[2] चित्त की एकाग्रता मुक्ति के लिए परम अपेक्षित है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार ज्ञान के द्वारा अज्ञान का वियोग होना ही मोक्ष है । मोक्ष काम के लिए योग का अभ्यास आवश्यक है ।

1 मार्कण्डेय पुराण –31/116

2 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ–556

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार भगवान दत्तात्रेय कहते है कि –

"योगे च शक्तिर्विदुषा येन श्रेय पर भवेत्।
मुक्तिर्योगात्तथा योग सम्यग्ज्ञानान्महीपते।।
सङ्गदोषोद्भव दुख ममत्वासक्तचेतसाम् ।।[1]

योग से मोक्ष, सम्यक ज्ञान से योग, दुख से सम्यक् ज्ञान और ममतासक्त चित्त से ही दुख का आविर्भाव होता है। अत अष्टाङ्ग योग की साधना मन की एकाग्रता से ही सम्भव है। मन को वश मे रखने के लिए योगी को अपने प्राण को वश मे करना चाहिए आर्थात योगी पुरुष को प्रणायाम करना चाहिए । प्राण एव अपान वायु का निरोध ही प्राणायाम है। प्राणायाम के तीन भेद है– लघु, मध्यम, उत्तरीय। श्री बदरीनाथ शुक्ल के अनुसार लघु प्राणायाम मे 12, मध्यम मे 24 और उत्तम मे 36 मात्राए होती है।[2] प्राणायाम की चार अवस्थाए है – ध्वस्ति, प्राप्ति, सवित, प्रसाद ।

ध्वस्ति–जिससे चित्त की मलिनता दूर हो जाए उसे ध्वस्ति कहते है ।

प्राप्ति –ऐहिक एव आमुष्मिक काम को स्वय निरन्तर अवरुद्ध करे उसे प्राप्ति कहते है ।

सवित–अतीव एव दूरस्थ आदि सब विषयो को जानना ही सवित है

प्रसाद–चित्त, पचवायु, इन्द्रिय, इन्द्रियो के विषय समूह से शुद्धि लाभ प्रसाद है ।

आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, पञ्चप्राण आदि द्वारा योगियो को ब्रह्म मे प्रवृत्त होना चाहिए । मार्कण्डेय पुराण के अनुसार योग प्रवृत्त पुरुष मे अचचलता, आरोग्यता, अनिष्ठुरता, देह मे सुगधि का सचार, मूत्र, पुरीष की अल्पता, काति, प्रसाद ओर मधुर स्वर यह सब प्रथम चिन्ह है।[3] योगियो द्वारा अरिष्ट सकेत मिलने पर योगी पुरुष को चित्त से योग युक्त होकर परब्रह्म मे अभिनिविष्ट होना चाहिए योग द्वारा मनुष्य का शरीर बन्धन नही प्राप्त करता एव योग द्वारा ब्रह्म साधना जैसा कठिन कार्य भी सरलता पूर्वक किया जा सकता है ।

1 मार्कण्डेय पुराण –36/2

2 मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन पृष्ठ –89

3 मार्कण्डेय पुराण –36/63

उपसर्ग – आत्मा का दर्शन होने पर योगियो मे अनेक उपसंर्ग होते है। सात्विक, राजसिक और तामसिक भेद से अपरापर विघ्न योगियो के चित्त पर आक्रमण करते है। योगियो को इस कामना का यत्न पूर्वक त्याग कर देना चाहिए। ये उपसर्ग पॉच प्रकार के है। जो निम्न है– प्रातिभ/श्रावण/दैव/भ्रम/आवर्त्त ।

प्रातिभ– यह योग साधना मे भयकर रुप से विघ्न उपस्थित करते है जिससे वेदार्थ , काव्य , शास्त्रार्थ , विद्या और शिल्पयोगी के मन पर प्रतिभात करते है ।

श्रावण– जिसे सम्पूर्ण शब्द का अर्थ ज्ञात हो जाय ,हजार–हजार योजन दूर का शब्द भी सुनाई पडे वही श्रावणी है ।

दैव– दैव का अर्थ है– देव भक्ति का विकास । जिसके द्वारा मूर्तिमान देवता के समान योगी उन्मत्त के सदृश आठो दिशाओ का दर्शन करता है वही दैव है ।

भ्रम – जिससे योगी का मन दूषित होने से निराश्रय रूप भ्रमण करे वही भ्रम उपसर्ग है ।

आवर्त्त– जिसके प्रभाव से ज्ञानावर्त्त जलावर्त्त के समान व्याकुल होकर चित्त का विनाश करता है उसी को आवर्त्त उपसर्ग कहते है ।[1]

इन सभी विघ्नो से योगियो को बचने का उपाय करना चाहिए ।

सात भाव – योगी पुरुष भू आदि बुद्धि की सात प्रकार की सूक्ष्म धारणा मस्तक मे धारण करे, ये सात भाव निम्न है– पृथ्वी–गन्ध, जल–रस, तेज–रूप, वायु–स्पर्श, आकाश–शब्द, मन–सूक्ष्म मन, बुद्धि–सूक्ष्म बुद्धि। योगी इन सात प्रकार के सूक्ष्म सधान पूर्वक भूतादि मे राग छोडकर ही सद्‌भाव को जानकर मोक्ष प्राप्त करता है ।

' ऐतान्येव तु सधाय सप्त सूक्ष्माणि पार्थिव ।
भूतादीना विनाशोऽत्र सद्भावज्ञस्य मुक्तये ।।[2]

यह सप्तविधि सूक्ष्म सधान करके भूतादि मे विगत राग हो सकने से ही सद्भावज्ञ पुरुष मुक्ति लाभ करता है ।

1 मार्कण्डेय पुराण –37/13

2 मार्कण्डेय पुराण –37/26

अष्टसिद्धि– योग मे अष्टसिद्धियॉ मोक्ष के सूचक है । इनको प्राप्त करने पर मनुष्य जन्म–मरण के चक्र मे नही पडता । इसे अष्टाड्ग योग भी कहते है । यह अष्टसिद्धियॉ निम्न है– अणिमा/लघिमा/ महिमा /प्राप्ति/ प्रकाम्य / ईशित्व / वशित्व / कामावसायित्व ।

योग साधक को उपर्युक्त अष्टसिद्धियो का त्याग करना चाहिये।

अणिमा–साधक को अणिमा (ऐश्वर्य) का त्याग करना चाहिए । जिसके द्वारा सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हो सके वह अणिमा है ।

लघिमा–जिसके द्वारा सब कार्यो मे ''ीघ्रता उत्पन्न हो सके वह लघिमा है , अर्थात लघिमा भाक्ति द्वारा सब कार्य अत्यन्त ग़ीघ्र सम्पन्न कर लेता हे ।

महिमा – जिसके द्वारा सब पूज्यनीय हो सके वह महिमा है । साधक महिमा सिद्धि द्वारा सबसे पूजा प्राप्त कर लेता है ।

प्राप्ति– जिसके द्वारा सब इच्छित फल की प्राप्ति हो सके वह प्राप्ति है । साधक को इस (प्राप्ति) ऐश्वर्य के मोह मे नही फॅसना चाहिए ।

प्राकाम्य – इस सिद्धि द्वारा साधक को व्यापक ग़क्ति उत्पन्न हो जाती है । इस सिद्धि को प्राकम्य कहते है।

ईशित्व– जिसके प्रभाव से सब ईश्वर का हो जाये वह ईशित्व ।

वशित्व– जिसके प्रभाव से सब वशीभूत हो उसका नाम वशित्व है । अर्थात सबको वश मे कर लेने की 'ग़क्ति ही वशित्व है ।

कामावसायित्व– जिसके द्वारा स्वेच्छानुसार गमन कर सके और स्वेच्छानुसार कार्य सिद्ध हो सके वह कामावसायित्व है । योगी इन आठ प्रकार के गुणो के प्रभाव से ईश्वर के समस्त कार्य करने मे समर्थ होता है। यह सब गुण मुक्ति की सूचना कर देते है ।

योगियो का आचार–व्यवहार :–

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार योगियो का आचार–व्यवहार नियमपूर्ण होना चाहिए। योगियो को अपना अपमान अमृत के समान एव सम्मान विष के समान समझना चाहिए । योगी वस्त्र से जल को छानकर पिये, आतिथ्य, श्राद्ध, यज्ञ, आदि मे नही जाए, योगी भिक्षा द्वारा अपना जीवन यापन करे। योगियो

को अस्तेय, ब्रह्मचर्य, त्याग, अलोभ एव अहिसा इन पॉच व्रंतो का पालन करना चाहिए।[1] योगियो को भोजन से पूर्व पॉच आहूतियॉ[2] देने का भी वर्णन प्राप्त होता है ।

शाक्त मत –

शाक्तमत की ऐतिहासिक धारा प्रागैतिहासिक काल से देखी जा सकती है। सिन्धु धाटी की सस्कृति मे मातृदेवी की उपासना की जाती थी। ऋग्वेद मे अदिति एव अन्य देवियो के वर्णन प्राप्त होते हैं। केनोपनिषद मे भी हेमवती –उमा का उल्लेख मिलता है। महाभारत के एक स्तोत्र मे देवी की वन्दना की गयी है। देवी शक्ति का अवतार है इसी आधार पर शाक्त धर्म का जन्म हुआ। मार्कण्डेय पुराण मे मातृदेवी के दुर्गा, उमा, पार्वती आदि अनेक रूपो का चित्रण है।शाक्त धारा का शैव धारा के साथ चिर काल तक सम्बन्ध रहा है।

शक्ति तत्व– "शक्लृ शक्तौ"तथा "शक आमर्षणे " धातुओ से 'क्तिन 'प्रत्यय करने पर 'शक् 'प्रकृति और 'ति' प्रत्यत के सयोग से 'शक्ति ' शब्द पाणिनि व्याकरण द्वारा निष्पन्न होता है । इसके अनुसार शक्ति शब्द सामर्थ्य और ज्ञान वाचक है।[3]

"या देवी सर्व भूतेषु शक्ति रूपेण सस्थिता ।नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम ।।[4]"

" जो देवी सब प्राणियो मे शक्ति रूप मे स्थित हैं, उनको नमस्कार है, नमस्कार है, बारम्बार नमस्कार है। अर्थात हमारे चारो ओर शक्ति तत्व विद्यमान है। बिना शक्ति के कुछ भी समव नही है ,शरीर मे यदि शक्ति नही रहेंगी तो व्यक्ति मरणासन्न रहेगा। सूर्य मे ताप की शक्ति , अग्नि मे दाह की शक्ति, वायु मे गति की शक्ति आदि है। इसी शक्ति शब्द दुर्गा सप्तशती मे देवी का नाम दिया गया है। वही शक्ति रूपी देवी अव्यक्त रूप से अनेक नामो को धारण करती हैं और भक्तो की भावना के अनुसार अव्यक्त होकर भी व्यक्त रूपो को धारण करती है। देवी सब इन्द्रियो की अधिष्ठात्री है।

1 मार्कण्डेय पुराण –38 / 16

2 मार्कण्डेय पुराण –38 / 13–14

3 शक्तिअङ्क"कल्याण "पृष्ठ –522

4 मार्कण्डेय पुराण –82 / 18

आद्या शक्ति तत्वातीत होते हुये भी सर्वतत्वमयी और प्रपञ्चरूपा है। वह नित्या परमानन्द स्वरुपणी चराचर जगत की बीजरूपा है। यही अचिन्त्य शक्ति सर्वस्वरूप मे, सब मे, सबकाल मे व्याप्त है। यह शक्ति अनेक रूप मे ससार मे व्याप्त है, इसी को कोई देवी, कोई काली, कोई शक्ति, कोई ईश्वर, कोई विष्णु आदि नामो से वर्णन करते हैं। जिस समय निशुम्भ दैत्य को देवी ने मारा था और उसके भाई शुम्भ ने देवी के बहुत से रूप देखकर कहा था कि तुम्हारे साथ अनेक सहायक है इसीलिए तुम जीत रही हो, तब देवी ने कहा था कि –

एकैवाह जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा ।

पश्यैता दुष्टमय्येव विशन्त्योमद्विभूतय ।।1

देवी ही चेतन शक्ति है, यही पूर्ण है । उत्पत्ति, स्थिति, सहार का कारण इन्हे ही माना जाता है। देवी से ही सृष्टि सम्भव है, देवी को ही जगत् की माता, चर, अचर विश्व की ईश्वरी बताया गया है। इन्हे ही मिथ्या जगत् की उत्पत्ति का हेतु माना गया हे। देवी की इच्छा से इस भौतिक जगत् की सृष्टि हुई है । यह सम्पूर्ण जगत् मे नित्य है, व्याप्त है यह ब्रह्म ज्ञान स्वरूपा विद्या है। जन्म–मृत्यु का हेतु है। यह सभी देवताओ के आयुधो से युक्त एक तेज पुञ्ज है जिसमे सभी देवताओ की शक्ति विन्मान है जगत् का स्वरूप देवीमय है, शक्तिमय है ।

देवी का जगत् से सम्बन्ध स्थान–स्थान पर मिलता है । शक्ति सर्वत्र व्याप्त है सभी प्राकृतिक पृथ्वी आदि पदार्थ उनके शरीर है। इस ससार का आधार ही देवी शक्ति है। सृष्टि तुम्हारा लास्य, प्रलय तुम्हारा ताण्डव है' विनाशायच दुष्कृताम् ' के व्रत को धारण करने वाली मॉ शक्ति ही है, शक्ति ही स्वय ईश्वर का स्वरूप है । शक्ति जननी हे । इच्छा, क्रिया, ज्ञान, परा, चिति, शक्ति है । यह शक्ति ही सत्य धर्म है । यही नित्या है, समस्त जगत् उसकी मूर्ति है । देवी जब देव कार्य करने के लिए प्रकट होती हे तब उसे उत्पन्न हुई कहते है ।

1 मार्कण्डेय पुराण –87/3

दुर्गा का स्वरूप (आधि भौतिक, आधि दैविक एव आध्यात्मिक दृष्टि से) –

मार्कण्डेय पुराण मे दुर्गा का रूप एक देवी के रूप मे उनकी स्तुति, उपासना, महिमा, असुर वध आदि का वर्णन किया गया है। दुर्गा इस ग्रथ का बीज है । मेधाऋषि ने मोह जनित भ्रम के रहस्य को 'दुर्गा माहात्म्य' के द्वारा दूर किया है। मेधाऋषि द्वारा कहे गये देवीमाहात्म्य को सुनकर सुरथ राजा एव समाधि वैश्य का मोह दूर हो गया था । सुरथ राजा ही सावर्णि मनु हुए । इस महाशक्ति का अवतार सृष्टि के आरभ मे मधु –कैटभ नामक दैत्य को मारने के लिए योगमाया के रूप मे हुआ । अथर्व वेद मे इस शक्ति को सती कहा गया है । इस महाशक्ति ने असुरो का वध करने के लिए समय–समय पर अलग–अलग रूपो मे अवतार लिया । यही देवी कालिका, दुर्गा, चामुण्डा, महिषासुर मर्दिनी, जयन्ती, भीमाक्षी आदि नामो से सम्बोधित की जाती हे । दुर्गा सप्तशती आधिभोतिक, आधिदैविक एव आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है ।

आधिभौतिक रूप मे :–

दुष्ट प्रकृति के लोग जब अपने अत्याचारो द्वारा सज्जनपुरुषो को प्रताडित करते है, तो एक न एक दिन उन आसुरी प्रकृति के लोगो को अपने कर्मो का फल अवश्य प्राप्त होता है । उनके कर्मो के दण्ड देने के पीछे देवी शक्ति का ही हॉथ होता है, माध्यम अवश्य ही सज्जन पुरुष ही क्यो न बने । कुछ प्राकृतिक रूप से भी दण्ड मिलता है जैसे –सर्प, व्याघ्र आदि से या आसामायिक दुर्घटना द्वारा । इस तरह आसुरी प्रकृति के लोगो को दण्ड अवश्य मिलता है।

आधि दैविक दृष्टि से – देवी सप्तशती की कथा का आशय सृष्टि के विकास के आरम्भिक परिवर्तनो से है । चराचर की सृष्टि का मूलाधार सूर्य है पर सृष्टि के आरम्भ मे जब सूर्य का आविर्भाव हुआ तब बहुत समय तक तम् का आवरण उसके प्रकाश को रोके रहा । जो पदार्थ शक्ति या प्रकाश देव भाव के फैलने मे बाधक होती है उसे सृष्टि ज्ञाता ऋषियो न असुर की सज्ञा दी है । वृत्र अथवा महिषासुर तम् के अधिपति है उनका वध देव भाव की शक्ति द्वारा सम्पन्न होना ही था । अत आधि दैविक रूप से दुर्गा असुरो (तमस्)का सहार करने वाली रूप मे वर्णित है ।

आध्यात्मिक रूप मे –

आत्मा सम्बन्धी रूप मे दुर्गा सप्तशती का महत्व अधिक बढ जाता है। इसका प्रत्येक श्लोक मन्त्रित है, प्रत्येक श्लोक बहुत ही गूढ है वाणी द्वारा मन ही मन मन्त्रो के उच्चारण से एक अलग तरह से अनुभूति होती है एव मानसिक शक्ति का विकास होता है । बहुत से मनुष्य इस शरीर तक ही इस जीवन को समझते है किन्तु कुछ इस शरीर से परे उस शक्ति को ही जानने का प्रयास करते है एव अपनी मनोवृत्तियो को जागृत करते है । प्रत्येक मनुष्य के जीवन मे उतार–चढाव, सुख–दु,ख लगे ही रहते है जब मनुष्य दुखो से घबराता है तो शक्ति स्वरूपा देवी के पास जाता है जिससे उसको एक अलग ही शान्ति की अनुभूति प्राप्त होती है । शक्ति को ही प्राणी सर्वस्य समझता है और उसी की उपासना , आराधना मे लगा रहता है। इस प्रकार यह तीनो दर्शन क्रमश स्थूल , सूक्ष्म एव आत्म क्षेत्र अर्थात् मे रूप मे प्रतीति गोचर होता है ।

देवी की शारीरिक रचना :–

ब्रह्मा, विष्णु आदि अनेक देवताओ के मुख एव शरीर से एक बडा तेज निकला, जो स्त्री रुप मे परिवर्तित हो गया और देवी के रुप मे उत्पत्ति हुयी।

महादेव –मुख
यम – केश
विष्णु –दोनो हाथ
चन्द्रमा –स्तन
इन्द्र –मध्यस्थल
वरुण –जघा, उरू
पृथ्वी – नितम्ब
ब्रह्मा –चरण
सूर्य – अगुली (पैर की)
वसु – अगुली (हाथ की)
कुबेर –नासिका
प्रजापति – दात
पावक – तीनो नेत्र
सध्या दोनो – भृकुटि
वायु –दोनो कान

देवी के आयुध एवं आभूषण –

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार देवी की शारीरिक रचना होने के पश्चात सभी देवताओ ने मिलकर एक एक आयुध एव आभूषण प्रदान किया । जो निम्न है –

महादेव –शूल

नारायण – चक्र

वरुण – शख

हुताशन –शक्ति

वायु – धनुष–बाण

इन्द्र –वज्र एव घटा

यम –काल दण्ड

वरुण – पाश

दक्ष प्रजापति – अक्षमाल

ब्रह्मा–कमण्डल

सूर्य – रोमकूप मे किरण

काल – खड्ग, चर्म

समुद्र – हार , वस्त्र आदि

विश्वकर्मा – परशु , अस्त्र एव कवच

हिमालय –सिह

इस प्रकार सभी देवताओ से प्राप्त आयुध एव आभूषण से सुसज्जित होकर असुरो को सहार करने के लिये आगे बढी।

देवी की विभिन्न रूपो में उत्पत्ति –

महामाया (योगनिद्रा) देवी –

महामाया देवी की शारीरिक रचना उनके आभूषण आदि का वर्णन नही मिलता, मात्र उनके आयुधो एव स्वाहा, स्वधा रुप आदि की चर्चा मिलती है। इनके अस्त्र निम्न है– खड्ग , भाल , गदा ,चक्र, शख ,चाप (धनुष), बाण, भुशुडी, परिघ।

महामाया ने मधु – कैटभ को अपनी माया द्वारा मोहित कर लिया था एव भगवान विष्णु को नीद से जगाया था।

काली का स्वरूप :– विचित्रा खट्वाङ्ग को लिये, मुडो की माला से शोभायमान, बाघम्बर धारण किये हुये, सूखे मास वाली, जीभ का लहलहाते हुये, लाल नेत्रो वाली, भीतर घुसे हुये नेत्रो वाली है। देवी पार्वती द्वारा क्रोध करने से पार्वती का शरीर काला पड गया अत मा काली कहलायी। महाकाली शक्ति सहित रुद्र रुप मे सृष्टि का सहार करती है

लक्ष्मी का स्वरूप – विष्णु की पत्नी लक्ष्मी जी की महिमा मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। लक्ष्मीजी के किस–किस स्थान पर जाने से मनुष्यो को शुभ फल और अशुभ फल प्राप्त होता है।[1] इसका वर्णन निम्न है –

मनुष्य के पैर मे – गृह प्रदान करती है

सक्थिनी अस्थिमे – वस्त्र और रत्न

गोद मे – पुत्र प्रदान करती है

हृदय मे –पुरुष के सब मनोरथ पूर्ण होते है

कठ मे – कठाभूषण, प्रवासी प्रियतम का आगमन

मुख मे – सुन्दर लावण्य , कवित्व, आज्ञा सफल

मस्तक मे – व्यक्ति को छोडकर अन्य का आश्रम ग्रहण करती है।

किमिच्छिक व्रत मे लक्ष्मी जी की पूजा होती है। राजा अविक्षित की माता ने इस व्रत को किया था।

सरस्वती देवी का स्वरूप –मार्कण्डेय पुराण मे सरस्वती देवी की स्तुति प्राप्त होती है।[2] जिसमे सरस्वती देवी को ॐकार अक्षर सस्थान कहा गया है अर्थात परम अक्षर, परम ब्रह्म, स्थिर–अस्थिर, सद्–असद्, तीनों लोक, तीनो वेद, तीनो आश्रम, काल, अवस्था, सोम सस्था, हवि सस्था, पाक सस्था यह सभी देवी सरस्वती से निरूपित हुए है। अर्धमात्रा, अशेष देवी सरस्वती से है । विश्व का आवास, स्वरूप, ईश्वर, परमेश्वर, साख्य, वेदान्त, तर्कशास्त्र, त्रिगुण, सुख, असुख, सकल–निष्कल, नित्य–अनित्य, स्थूल–सूक्ष्म सब पदार्थ देवी सरस्वती से है । स्वर, व्यजन आदि सभी का ज्ञान सरस्वती से है । सरस्वती देवी को विद्या की देवी कहा गया है। मनुष्य की सभी अभीष्ट वस्तुए साथ छोड देती है किन्तु सरस्वती ऐसी देवी है जो मनुष्य का साथ कभी नही छोडती ।

1 मार्कण्डेय पुराण –16/171–177

2 मार्कण्डेय पुराण –21/32–48

दुर्गा माहात्म्य—मार्कण्डेय पुराण मे दुर्गा माहात्म्य आस्तिक जन के मन मस्तिष्क पटल पर कामधेनु के समान स्थित है । भगवती दुर्गा प्रकृति देवी है । वह सृष्टिकार्य मे ब्रह्मा के साथ, पालन मे विष्णु के साथ एव प्रतिसृष्टि मे शिव के साथ, त्रिगुणात्मिका रूप मे रहती है । देवी के त्रिमूर्ति महाकाली, महालक्ष्मी एव महासरस्वती का त्रिगुण रूप से आपस मे पारस्परिक सम्बन्ध है। देवी महाकाली तमोगुण रूप रुद्र सहित सृष्टि की सहार कर्त्री है । महालक्ष्मी विष्णु सहित रजोगुण रूप मे सृष्टि का पालन करती है एव महासरस्वती ब्रह्मा सहित सत्व गुण रूप मे सृष्टि निर्माण करती है अत इन तीनो देवियो का आपस मे पारस्परिक सम्बन्ध है । महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती कमश शक्ति, स्वर्ण और विद्या की अधिष्ठात्री देवियॉ है एव कमश आध्यात्मिक, आधिभौतिक, आधिदैविक कष्टो का विनाश करती है। जहॉ किसी देवता का सामर्थ्य कार्य नही करता वही से मॉ की गति प्रारम्भ होती है। चराचर जगत् मे कण–कण मे मॉ की सत्ता विद्यमान है । अतल, वितल, सुतल आदि लोको मे मॉ भगवती की सत्ता स्थित है। मॉ भगवती अनेक रूपो को धारण कर अलग–अलग वाहनो मे सुशोभित होती है। चामुण्डा का रूप धारण कर प्रेत पर आरूढ़ होती है और कही ऐन्द्री रूप मे ऐरावत पर, वैष्णवी मे गरूड पर, माहेश्वरी मे वृषभ पर सुशोभित होती है, कौमारी रूप में मोर पर आरूढ होती है ।[1]

देवी के औपाधिक स्वरूप –मार्कण्डेय पुराण के देवी माहात्म्य वर्णन मे देवी के कार्यानुरूप विविध नामो का उल्लेख प्राप्त होता है जो निम्न है – देवी को जयन्ती, अम्बिका, भद्रकाली, परमेश्वरी, कालरात्रि, चण्डिका, अमलानने, अपराजिता, भद्रा, कौशिकी, कालिका, पार्वती, महादेवी, शिवा, प्रकृति, रौद्रा, नित्या, गौरी, धात्री, बुद्धि, कल्याणी, नैऋति लक्ष्मी, शर्वाणी, दुर्गा, दुर्गपारा, सारा , सर्वकारिणी, ख्याति, कृष्णा, धूम्रा, विष्णुमाया, भिमाक्षी, चामुण्डा, शिवदूती, कात्यायनी, रक्तदन्तिका, शताक्षी, शाकम्भरी, भीमा देवी, भ्रामरी, सनातनी आदि।

सप्तमातृका शक्ति– मार्कण्डेय पुराण मे रक्तबीज वध प्रसग मे सप्तमातृका का उल्लेख प्राप्त होता है ।

'हसयुक्त विमानस्था साक्ष सूत्रकमण्डलु । आयाता ब्रह्मण शक्ति ब्रह्माणी साभिधीयते।।
माहेश्वरी वृषारूढा त्रिशूल वरधारिणी। महाहिवलया प्राप्ता चन्द्रलेखा विभूषणा।।[2]

1 मार्कण्डेय पुराण –85 / 16

2 मार्कण्डेय पुराण –85 / 14–20

यह सप्तमातृका देवताओ के चैतन्यांश रूप उन्ही के वाहन आयुध आदि से सप्तमातृका देवी का समीकरण हुआ ।

चैतन्याश	देवी	अस्त्र	वाहन
ब्रह्मा	ब्रह्माणी	कमण्डल	हस
शिव	माहेश्वरी	त्रिशूल	वृष
कुमार	कौमारी	शक्ति	मयूर
विष्णु	वैष्णवी	चक्र	गरुड
वराह	वाराही	मुख	वाहन विहीन
नृसिह	नारसिही	नख	वाहन विहीन
इन्द्र	ऐन्द्री	वज्र	वाहन विहीन

यही सप्तमातृका ऋग्वेद[1] मे सात बहनो 'सप्त स्वसार' के नाम से उल्लिखित है अन्य ग्रन्थो मे इन सप्तमातृकाओ के साथ चामुण्डा देवी का नाम जोडकर अष्टमातृका का उल्लेख प्राप्त होता है कही–कही षोडशमातृका का भी उल्लेख प्राप्त होता है।

मुख्यअसुर स्वरूप एव उनका वध– मार्कण्डेय पुराण मे असुरो की चर्चा मुख्य रुप से दुर्गा माहात्म्य मे आयी है।अध्याय 78 से 90 तक दुर्गा स्तुति, देवी – असुर सग्राम एव महात्म्य आदि का वर्णन प्राप्त होता है। देवी असुर सग्राम मे मुख्यत–मधु–कैटभ, महिषासुर, शुम्भ –निशुम्भ, रक्तबीज, चण्ड –मुण्ड वध, आदि है। प्रत्येक युद्ध का अन्त तामसिक शक्ति पर सात्विक शक्ति की विजय दर्शाता है। प्रत्येक युद्ध एक अलग परिचय देता है।

मधु–कैटभ का वध –ब्रह्मा की स्तुति द्वारा विष्णु को निद्रा रुपी महा माया की माया से होता है, तो "महिषासुर" वध सब देवताओ के तेज से उत्पन्न देवी द्वारा होता है। देवी महिषासुरमर्दिनी के नाम से विख्यात होती है। शुम्भ–निशुम्भ कावध पार्वती देवी के शरीर से उत्पन्न कालिका देवी द्वारा होता है। शुम्भ वध के आख्यान की सहायता से–ज्ञानमय स्तर से मुक्त होकर जीव किस प्रकार आनन्दमय स्तर को पहुचता है, यह दिखाया गया है। इस प्रकार देवी शुम्भ–निशुम्भ मर्दिनी कहलाती है।

1 ऋग्वेद – 1/164/3

चण्ड–मुण्ड का वध करके मा कालिका चामुण्डा देवी के नाम से विख्यात हुयी । रक्त बीज वध सप्त मातृकाओ की सहायता से देवी ने किया, जो देवी की ही अश थी अर्थात सहायक देवी थी । रक्तबीज के एक–एक बूँद से अनेक रक्तबीजो का जन्म होता है । डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –'देवी माहात्म्य मे पारमेष्ठ्य असुर, सौर असुर, चान्द्र असुर और पार्थिव असुर इन चार मण्डलो के असुरो के युद्ध का वर्णन है :–

1–मधु–कैटभ – पारमेष्ठ्य असुर है ।

2–महिषासुर – सौरमण्डल पर आक्रमण करने वाला असुर है ।

3– शुम्भ–निशुम्भ –चन्द्रमा पर आक्रमण करते है ।

4–रक्तबीज–पृथ्वी पर आक्रमण करते है ।[1]

असुर गण –मार्कण्डेय पुराण के दुर्गा माहात्म्य अश मे निम्न असुरो का युद्ध वर्णन एव कुछ असुरो का नामोल्लेख प्राप्त होता है – मधु –कैटभ , महिषासुर, चिक्षुर, चामर, उदग्र, महाहनु, असिलोम, वाष्कल, परिवारित, बिडाल, काल, उग्र, उद्धत, अन्धक, उग्रास्य, उग्रवीर्य, असुरा, दुर्धर, दुर्मुख, उग्रदर्शन, सुग्रीव, चण्ड–मुण्ड, शुम्भ–निशुम्भ, धूम्रलोचन, उदायुध, कम्बु, कोटिवीर्य, धुम्रवशजात, कालक, दौहृद, कालकेय, रक्तबीज, वैप्रचित्त, दुर्गम, अरुण आदि । इन सभी असुरो को माँ भगवती अपनी दिव्य दृष्टि से सहार कर सकती थी किन्तु प्रत्येक असुर को अलग–अलग शस्त्रो से सहारती है क्योकि शत्रु भी शस्त्रपूत होकर मोक्ष को प्राप्त हो जाये। मार्कण्डेय पुराण में अन्य स्थल पर वृत्रासुर, बलाक, कृजम्भ, बल एव तालकेतु नामक राक्षसो का नामोल्लेख प्राप्त होता है ।

रात्रि सूक्त मे देवी स्तुति :–

रात्रि सूक्त मे देवी को स्वाहा, स्वधा, वषट्कार कहा गया है । यह हवि देने के मन्त्र है । त्रिमात्रा–ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत के साथ ही साथ अर्द्धमात्रा भी कहा गया है जो कि ॐकार स्वरूप है । रात्रि सूक्त मे देवी को महाविद्या, महामेधा, महामाया, महास्मृति, महामोहा, महादेवी, महासुरी, त्रिगुणात्मिका, भयंकर यमस्वरूपिणी, महारात्रि, मोहरात्रि, श्री, ईश्वरी, लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, क्षान्ति, शान्ति, सौम्या, सौम्यतरा, अखिलात्मिका कहा गया है ।

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –179–180

"यच्चकिंचित्क्वचिद्वस्तु सद सद्वाऽखिलात्मिके। तस्य सर्वस्य या शक्ति सा त्व कि स्तूयसे मया।।[1]"

इस मन्त्र मे देवी को शक्ति स्वरूपा कहा गया है क्योकि यह देवी सभी देवताओ के आयुधो से सम्पूर्ण है, सभी देवताओ द्वारा प्रदान किये गये अगो से परिपूर्ण है इसमे सभी देवताओ की शक्ति एक साथ विद्यमान है। यह कहा जाता है कि देवी की पूजा से सभी देवताओ की पूजा हो जाती है। जगत् का स्वरूप देवीमय है। रात्रि को देवी का स्वरूप कहा गया है। यही देवी तमोगुणमयी निद्रास्वरूपिणी है। ऋक् यजु, सामवेद का आश्रय रूप है ।

नमस्तस्यै – नमस्तस्यै – नमस्तस्यै नमो नम – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार दुर्गा माहात्म्य मे देवी सूक्त मे देवी को 24 नामो एव रूपो मे स्तुति की गयी है यथा –

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण सस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नम ।।[2]

इस प्रकार विष्णुमाया, चेतना, बुद्धि, निद्रा, क्षुधा, छाया, शक्ति, तृष्णा, क्षान्ति, जाति, लज्जा, शान्ति, श्रद्धा, कान्ति, लक्ष्मी, धृति, वृत्ति, स्मृति, नीति, तुष्टि, पुष्टि, मातृ, भ्रान्ति, चित्ति ये सभी 24 देविया है।[3] इनकी आराधना मनुष्य कामनानुसार अलग–अलग नामो से करता है। मन्त्रमे नमस्तस्यै का तीन बार सम्बोधन करने का अभिप्राय देवी को आधिभौतिक, आधिदैविक, आध्यात्मिक तीनो रुपो मे नमस्कार एव प्रसन्न करना है एव भौतिक, दैविक, आध्यात्मिक कष्टो से दूर रखने के लिये प्रार्थना करना है।

श्री वासुदेव भारण अग्रवाल के अनुसार –"नमस्तस्यै" जो तीन बार कहा गया है शक्ति का वितान है जो त्रिक रुप मे होता है।[4] "नमो नम" का अर्थ है मेरा कुछ नही है, मेरा कुछ नही है। अन्त करण की शान्ति अवस्था मे "नम" शब्द का प्रयोग होता है। नमो नम करना योग है। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार–नमो नम यह शिव शक्ति की सम्मिलित आराधना है यह विश्राम भूमि है जिससे शिव शक्ति का समुच्चय है।[5]

1 मार्कण्डेय पुराण –78/63
2 मार्कण्डेय पुराण –82/18
3 मार्कण्डेय पुराण –82/12–37
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –189
5 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –189

ऊँ के स्वरूप का वर्णन :–

ऊँ शब्द अकार,उकार एव मकार इन तीन अक्षर से बना है। अकार सात्विक है, उकार राजसिक एव मकार तामसिक है। इसके अतिरिक्त ओकार मे अर्द्धमात्रा भी है । इसमे गाधार स्वर का आश्रय होने से गाधारी नाम से प्रसिद्ध है। यह अर्द्धमात्रा सत्व, रज एव तम इन तीनो गुणो से परे है। ओकार को तीनो वेद स्वरूप –ऋक ,यजु ,साम एव तीनो देव स्वरूप ब्रह्मा, विष्णु, शिव एव तीनों अग्नि स्वरूप बताया गया है। इसी ओकार को वेद, अग्नि और देव स्वरूप भी बताया गया है। योग युक्त पुरुष अक्षर –अक्षर मे ओकारमय होता है। मार्कण्डेय पुराण मे "अकार को भूलोक, उकार को भुवर्लोक एव व्यञ्जन मुक्त मकार को स्वर्लोक कहा गया है। "

"अकार स्त्वथ भूर्लोक उकारश्चोच्यते भुव ।।

सव्यञ्जनो मकारश्च स्वर्लोक परिकल्पयते।

व्यक्ता तु प्रथमा मात्रा तृतीया चिच्छक्तिरर्धमात्रा पर पदम्।[1]"

ओकार की पहली मात्रा हृस्व, दूसरी दीर्घ तीसरी प्लुत स्वरुप है। अर्द्धमात्रा के सवरुप का वर्णन नही किया जा सकता। ओंकार का ध्यान करने वाली योगीजन ससार के बन्धनो से मुक्त हो जाते है एव ससार चक्र का अतिक्रमण करते हुये उस ओकार स्वरुप पर ब्रह्म मे लीन हो जाते हैं ।

दुर्गामहात्म्य को दुर्गा सप्तशती क्यो कहा जाता है – देवी महात्म्य मे दुर्गा का मुख्य रुप से नाम न लेकर देवी के ही नामो से सम्बोधित किया गया है यही देवी प्रयोजन के अनुसार स्थान –स्थान पर अलग–अलग नामो से उत्पन्न हुयी। मा काली का रूप भयकर है, तो मा दुर्गा का सौम्य। अन्य ग्रन्थो मे कहा गया है "दुर्गा दुर्ग विनाशिनी " अर्थात दुर्गा ने दुर्ग नामक असुर का वध करने से दुर्गा कहलायी। "एकैवाह जगत्यत्र .. " से देवी की एक रूपता की झलक मिलती है। मार्कण्डेय पुराण (स्व० श्री कन्हैया लाल मिश्र)के देवी माहात्म्य मे श्लोको की कुल सख्या 589 है। सप्तशती का अर्थ तो 700 श्लोक

1 मार्कण्डेय पुराण –39 / 10–12

होने चाहिये । गीता प्रेस के दुर्गा सप्तभाती पुस्तक मे 700 श्लोको की सख्या उवाच , अर्द्ध श्लोक आदि मिलाकर पूरी होती है। किन्तु कहा जाता है कि प्राचीन समय मे इसकी सख्या 700 थी यद्यपि मार्कण्डेय पुराण मे 'सप्तशती' शब्द कही नही आया है । डॉ0 विष्णु दत्त राकेश के अनुसार यह दुर्गा सप्तशती नही बल्कि सतीमूलक होने से इसे सती तथा उसकी अगभूता सात माताओ का उल्लेख करने वाली होने से इस कृति को सप्तसती कहा जायेगा । परवर्ती विद्वानो के अनुसार सप्तसती के श्लोको की गणना विभिन्न स्थानो पर निम्न सख्या मे प्राप्त होती है –

ब्रह्माण्ड पुराण–524 श्लोक, 9 अर्द्ध श्लोक

कात्यायनी तत्र –578 श्लोक

रुद्रयामल–580 श्लोक

परवर्ती विद्वान –709 श्लोक

मूलपुराणान्तर्गत – 589 श्लोक

डॉ0 हरि नारायण दुबे के अनुसार देवी माहात्म्य क्षेपक है । सप्तसती के अश की तिथि दसवीं शताब्दी से पूर्व मानी जाती है क्योकि इसकी एक प्राचीन पाण्डुलिपि 998 ई0 मे विरचित उपलब्ध हुई।[1]

सप्तसती की दार्शनिकता :–

शक्ति के बिना जगत् मे कुछ भी नही है । आत्मा और परमात्मा के बीच मे भी यही तत्व प्रधान है । अनात्मा नाम की कोई वस्तु ससार मे है ही नही, जो कुछ दृश्य है वह सब शक्ति का स्वरूप है। शक्ति उपासना बहिर्मुखी और अन्तर्मुखी दोनो प्रकार से की जाती है किन्तु साध्य एक ही है। जिस ब्रह्म का रूप अनादि है उसी प्रकार देवी का रूप अनादि है। यही त्रिगुणात्मिका प्रकृति है –

"प्रकृतिस्त्व च सर्वस्य गुणत्रय विभाविनी ।
कालरात्रि र्महारात्रि र्मोहरात्रि श्च दारुणा।।"[2]

1 पुराण समीक्षा पृष्ठ –58

2 मार्कण्डेय पुराण –78/59

यही देवी के प्रभाव से सम्पूर्ण प्राणी वासना रूप भवर वाले मोहरूपी गड्ढे मे गिरते है देवी को विकार रहित सब पदार्थो का आश्रय स्वरूप मुक्ति का कारण कहा गया है । देवी को दुर्गम भवसागर मे अद्वितिय नौका स्वरूप कहा गया है –

"मेधासिदेवि विदिताखिलशास्त्रसारा।
दुर्गासि दुर्ग भवसागरनौरसङ्गा[1]"

देवी भोग, स्वर्ग एव मुक्ति प्रदान करती है। देवी तत्व ज्ञान देती है व विवेकी पुरुषो को मोहित भी करती है। सब मिलाकर यही कहा जा सकता है, सब कुछ व्याप्त है, देवी मृत्यु देती है तो जीवन भी देती है। ससार की उत्पत्ति के समय यह सृष्टि रूप है तो, काल के समय यह महामारी रूप मे हो जाती है। यही सनातनी देवी है। देवी मनुष्य के अन्दर अह की भावना समाप्त करती है । 'वह देवी भगवती नित्या होने पर भी इस प्रकार बारम्बार उत्पन्न होकर जगत् का पालन करती है वही भगवती इस विश्व को मोहित करती है । वही इस विश्व का प्रसव करती हे और उनके निकट प्रार्थना करने से वह सतुष्ट होकर तत्व ज्ञान और ऐश्वर्य प्रदान करती है।[2]

मोक्ष :–

'मोक्ष' प्राप्ति जीवन का परम लक्ष्य माना जाता है। ज्ञान प्राप्त होने पर अज्ञान से विरक्ति होती है, इसी को दत्तात्रेय भगवान ने मुक्ति कहा है। ममता आसक्त चित्त से दु ख का आर्विभाव, दु ख से सम्यक् ज्ञान का आर्विभाव , सम्यक् ज्ञान से योग का एव योग से मोक्ष की प्राप्ति होती है ।

'ज्ञानादेव च वैराग्य ज्ञान वैराग्य पूर्वकम्'[3]

1 मार्कण्डेय पुराण –81/11
2 मार्कण्डेय पुराण –89/32–34
3 मार्कण्डेय पुराण –36/4

षष्ठ अध्याय
मार्कण्डेय पुराण में वर्णित भूगोल

मार्कण्डेय पुराण मे भौगोलिक चित्रण अत्यन्त विस्तृत है। इसमे सम्पूर्ण पृथ्वी के पर्वत, नदी, जनपद आदि का वर्णन ,मिलता है । इसमे वर्णित देश – विदेश,जनपद आदि की सख्या लगभग 350 के निकट है। नदियो की गणना लगभग 25 से 30 के निकट है । इसमे विश्व की भौगोलिक स्थिति के अतिरिक्त भारत वर्ष का वर्णन अधिक विस्तार से दिया गया है। पृथ्वी के सात द्वीपो मे से जम्बू द्वीप मे नौ वर्ष एव नौ वर्षो मे एक भारत वर्ष का नाम आता है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार पृथ्वी का विस्तार पचास करोड योजन है। पृथ्वी उत्तर–दक्षिण मे नीची एव मध्य मे ऊची चौडी है तथा यह पृथ्वी–लवण, दधि,सुर,घृत,दुग्ध,जल, आदि के समुद्र से घिरी हुयी है ।

पृथ्वी पर सप्त द्वीप .–

मार्कण्डेय पुराण मे पृथ्वी पर स्थित सात द्वीपो का उल्लेख प्राप्त होता है। राजा प्रियव्रत के सात पुत्र हुए उन्होने अपने एक –एक पुत्रो को एक–एक द्वीप प्रदान किया। इस प्रकार ये सप्त द्वीप राजा के सप्त पुत्रो के कारण प्रसिद्ध हुए ।

1. जम्बू द्वीप – मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित सात द्वीपो मे से जम्बू द्वीप का नाम प्रथम स्थान पर आता है। श्री बलदेव उपाध्याय के अनुसार – "जम्बू द्वीप आरम्भ काल मे भारत वर्ष का ही सूचक देश था परन्तु शको तथा कुषाणो के आगमन से भारतीयो की भौगोलिक दृष्टि विशेष रूप से विस्फारित हुयीं और उस युग तक बहुत से अज्ञात देश भी भारतीयो की ज्ञान सीमा के भीतर विराजमान हो गए । ऐसे ही युग मे जम्बू द्वीप के नव वर्षों की कल्पना हमारे पुराणकारो ने की।"[1]

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार जम्बू द्वीप का परिमाण एक लाख योजन था। इस जम्बू द्वीप पर राजा प्रियव्रत ने शासन किया उसके बाद अपने ज्येष्ठ पुत्र आग्नीध्र जम्बू द्वीपका राजा बनाया था।[2]

1 पुराण विमर्श पृष्ठ –330

2 मार्कण्डेय पुराण –50/32

आग्नीध्र के नौ पुत्र हुए। आग्नीध्र ने जम्बू द्वीप को नौ भागो मे विभाजित कर अपने नौ पुत्रो को वहाँ का राजा बनाया। नौ पुत्रो के नामानुसार ही नौं वर्षों का भी विभाजन हुआ।[1]

2 प्लक्ष द्वीप–राजा प्रियव्रत ने अपने द्वितीय पुत्र मेधातिथि को प्लक्ष द्वीप का राजा बनाया।[2] मेधातिथि के सात पुत्र हुए ।राजा मेधातिथि ने प्लक्ष द्वीप को अपने सात पुत्रो मे विभाजित किया। मेधातिथि के सात पुत्रो के नामानुसार सात वर्ष का भी विभाग किया।

3 शाल्मलि द्वीप – राजा प्रियव्रत एव रानी प्रजापति ने अपने तृतीय पुत्र वपुष्मान को शाल्मलि द्वीप का राजा बनाया। राजा वपुष्मान के सात पुत्र हुए।उन्ही सात पुत्रो के नामानुसार सात वर्ष का भी विभाग हुआ।

4 कुशद्वीप – राजा प्रियव्रत के चतुर्थ पुत्र ज्योतिष्मान को यहाँ का राजा बनाया गया था । ज्योतिष्मान के सात पुत्रो ने यहाँ पर शासन किया । ज्योतिष्मान के सात पुत्रो के नामानुसार सात वर्षों का विभाजन हुआ। बलदेव उपाध्याय के अनुसार –कुशद्वीप का अधुनिक नाम नूबिया है । कुशद्वीप का उद्गम स्थान है।' कप्तांन स्पीक' ने मिस्त्र देश मे बहने वाली अफीका की नील नदी के उद्गम का पता लगाया । यह पौराणिक भूगोलीय यथार्थता का विजय घोष है । कुश राजा का समय 2200–1800 ई0 पूर्व माना जाता है।[3]

5 क्रौंच द्वीप .– राजा प्रियव्रत ने द्युतिमान को क्रौंच द्वीप का राजा बनाया । द्युतिमान के सात पुत्र हुए। इन सात पुत्रो के नामानुसार सात पुत्रो के सात भाग हुये ।[4]

6 शाकद्वीप – राजा प्रियव्रत ने शाकद्वीप का राजा भव्य को बनाया। राजा भव्य के सात पुत्र हुए । 'राजा भव्य ने शाकद्वीप का सात भाग करके सातो पुत्रो को दे दिया । वह सप्त भाग, सप्त वर्ष इन्ही के नाम से प्रसिद्व हुए, 'तन्नामकानि वर्षाणि शाकद्वीपे चकार स[5]"

1. मार्कण्डेय पुराण –50/35
2. मार्कण्डेय पुराण – 50/17
3. पुराण विमर्श पृष्ठ –318
4. मार्कण्डेय पुराण –50/24
5. मार्कण्डेय पुराण – 50/22

श्री बलदेव उपाध्याय के अनुसार –शकद्वीप की पहचान युनानी लेखको के द्वारा वर्णित सिथिया के रूप मे की जाती हैं ।[1]

7 **पुष्कर द्वीप** – राजाप्रियव्रत ने अपने सातवे पुत्र सवन को पुष्कर द्वीप का राजा नियुक्त किया। सवन के दो पुत्रो ने यहॉ पर शासन किया।' इन सात द्वीपो मे से प्लक्ष शाल्मलि, कुश, क्रौंच और शाक आदि पॉच द्वीपो मे वर्णाश्रम धर्म का पालन किया जाता था एव यहॉ हिसा विधि वर्जित थी।[2]

जम्बू द्वीप के नौ वर्ष :–

मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त सात द्वीप का उल्लेख पहले ही किया जा चुका हैं । उन सात द्वीप मे प्रथम द्वीप 'जम्बू द्वीप' है । जम्बू द्वीप के राजा प्रियव्रत हुए । राजा प्रियव्रत ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को आग्नीध्र को जम्बू द्वीप का राजा बनाया था । आग्नीध्र के नौ पुत्र हुए । इन नौ पुत्रो का नाम निम्न है –नाभि, किपुरुष, हरि, इलावृत, रम्य, हिरण्य, कुरु, भद्र,केतुमाल था। आग्नीध्र के नौ पुत्रो के नामानुसार ही जम्बूद्वीप का नौवर्ष मे विभाजन हुआ । इन विभाजनो का विस्तृत विवरण निम्न है–

नाभिवर्ष/किपुरुष वर्ष/ हरि वर्ष/ इलावृत वर्ष/ रम्य वर्ष/ हिरण्य वर्ष / कुरु वर्ष / भद्र वर्ष (भद्राश्व वर्ष) / केतुमाल वर्ष।

1 **भारतवर्ष** – आग्नीध्र के नौ पुत्रो मे प्रथम पुत्र नाभि हुए । नाभि के पुत्र ऋषभ हुए, ऋषभ के पुत्र भरत हुए एव भरत के पुत्र सुमति हुए । ऋषभ के पुत्र भरत के नाम से ही भारत का नाम 'भारत वर्ष' पडा। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार– जम्बू द्वीप के दक्षिण हिम नाम का वर्ष भरत को मिला जो कालान्तर मे उनके नाम से भारत कहलाया ।[3] श्री वासुदेव शरण अग्रवाल ने स्पष्ट रूप से यह माना है कि नाभि के पौत्र और ऋषभ के पुत्र भरत से ही भारत का नाम 'भारत वर्ष ' पडा । दुष्यन्त पुत्र भरत के नाम से भारत का नाम नही पडा ।[4] (भारत वर्ष का विस्तार एव क्षेत्रीय विभाजन का उल्लेख अग्रिम पृष्ठो पर हुआ है)

---

1 पुराण विमर्श पृष्ठ – 318
2 मार्कण्डेय पुराण – 50/31
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –138
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –138

2 किंपुरुष वर्ष — यहॉ नन्दन वन के समान प्लक्ष खण्ड है ।[1] यहॉ के पुरुषो की आयु 10000 व० होती थी। पुरुष एव स्त्री सभी निरोगी होते थे । स्त्रिया कमल के सुगन्ध वाली होती थी । ' किंपुरुष वर्ष तो किन्नरो का देश है जो हिमालय प्रान्त का सूचक है ।'[2]

3 हरि वर्ष — मार्कण्डेय पुराण के अनुसार राजा आग्नीध्र के तृतीय पुत्र हरि के नाम से ' हरि वर्ष ' नाम का वर्ष स्थापित हुआ। आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार –'हरि वर्ष सम्भवत सुग्द (बोखरा प्रान्त) है जो घोडो के लिए सर्वदा प्रसिद्ध था।'[3] यहॉ के मनुष्य निरोगी थे एव बुढापा कभी नही आता था। देव रूपी मनुष्य देवलोक से गिरकर मनुष्य यहॉ जन्म लेते थे एव इक्षुरस का पान करते थे ।[4]

4 इलावृत वर्ष –इलावृत को मेरुवर्ष भी कहते थे ।' इलावृत वर्ष सम्भवत इलि नदी की घाटी है जो साइबेरिया के पर्वत से निकलकर बालकश मे गिरती है ।'[5] किन्तु वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार– इलावृत की पहचान चीनी तुर्किस्तान के विपुल प्रदेश से की जा सकती है।[6] मार्कण्डेय पुराण के अनुसार इलावृत वर्ष मे पद्म के समान प्रभा वाले, पद्म के समान गन्ध वाले एव पद्म के समान चौडे नेत्रो वाले मनुष्य पैदा होते थे।यहॉ के निवासियो की आयु 13000वर्ष तक होती थी।

5 रम्य वर्ष — आग्नीध्र का पॉचवा पुत्र रम्य था।मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यहॉ के मनुष्य बुढ़ापा रहित एव दुर्गन्ध रहित होते थे।यहॉ के मनुष्य न्यग्रोध के फल का रस पीते थे।[7] "रम्यक वर्ष सुदूर पूर्व के रमिया रम्नि टापुओ का सभवत सूचक है।"[8]

1 मार्कण्डेय पुराण — 57/2
2 पुराण विमर्श पृष्ठ — 331
3 पुराण विमर्श पृष्ठ — 331
4 मार्कण्डेय पुराण — 57/5
5 पुराण विमर्श पृष्ठ — 331
6 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –39
7 मार्कण्डेय पुराण –57/12
8 पुराण विमर्श पृष्ठ — 331

6 हिरण्य वर्ष – हिरण्य वर्ष मे हिरण्यवती नदी बहती थी जिसमे बहुत से कमल थे।[1] यहॉ पर जन्म लेने वाले मनुष्य सत्व सम्पन्न, बलशाली एव तेजस्वी होते थे। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह वर्ष उत्तर दिशा मे स्थित था। आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार– "हिरण्यमय वर्ष एशिया "बदकशॉ" प्रदेश का द्योतक है जो हीरा,जवाहरात तथा कीमती धातुओ की खानो के लिए प्रसिद्ध रहा है।[2]

7 कुरू वर्ष – कुरू वर्ष मे भगवान हरि मत्स्य रूप मे अवस्थान करते है।कुरू वर्ष मे देवलोक से भ्रष्ट देवता ही मनुष्य रूप मे जन्म लेते थे। यहॉ के वृक्ष सब कामनाओ की पूर्ति करते थे। कुरू वर्ष मे भद्रसोमा नही बहती थी।[3] सूर्यकान्त,चन्द्रकान्त पर्वत के अतिरिक्त अन्य छोटे –छोटे पर्वत एव नदिया थी। यहॉ के निवासी 14हजार वर्ष पर्यन्त जीवित रहते थे।[4] यहॉ पर चन्द्रद्वीप एव भद्रद्वीप नामक दो प्रसिद्धद्वीप भी था। बलदेव उपाध्याय के अनुसार –"उत्तर कुरू तोलामी का "ओत्तरी कोराई"देश है जो सभवत चीनी तुर्किस्तान की तारिम को द्योतित करता है।[5]

8 भद्राश्व वर्ष :– भद्राश्व वर्ष मे भगवान चतुर्बाहु जनार्दन हयग्रीव रूप मे अवस्थान करते हैं।[6]यहॉ के मनुष्य 1000वर्ष तक जीवित रहते थे एव मनुष्य 8गुणो से युक्त सहनशील स्वभाव के होते थे। भद्राश्व वर्ष मे सीता,शखावती,भद्रा चक्रावती आदि अनेको नदिया बहती थी।[7] श्वेत पर्ण, नील,शैवाल,पर्णशालाग्र आदि श्रेष्ठ पर्वत थे । इसी से जुडे अन्य छोटे–छोटे पर्वत यहॉ विद्यमान थे ।[8] भद्राश्व देवकूट पर्वत के पूर्व मे स्थित था।

1 मार्कण्डेय पुराण – 57/14
2 पुराण विमर्श पृष्ठ – 331
3 मार्कण्डेय पुराण –56/23
4 मार्कण्डेय पुराण–56/22
5 पुराण विमर्श पृष्ठ – 331
6 मार्कण्डेय पुराण – 56/10
7 मार्कण्डेय पुराण – 56/6–8
8 मार्कण्डेय पुराण – 56/4–5

आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार– 'भद्राश्व सम्भवत चीन का सूचक है । चीन का जातीय चिन्ह है– राफेद ड्रेगन। ड्रेगन अग्रेजी भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है अपने मुहँ से ज्वाला उद्‌गीर्ण करने वाला मकर या सर्प, जो अक्सर घोटक मुख–घोडा मुख वाला–बताया जाता है । इसीलिए कल्याणकारी घोटक वाले देश– भद्राश्व –से चीन की पहचान भलीभॉति जानी जाती है ।1

केतुमाल वर्ष :– केतुमाल वर्ष मे भगवान हरि– वाराह रूप मे अवस्थान करते हैं । यहॉ सप्तकुल पर्वत, विशाल,कम्बल,कम्म पर्वत आदि थे। यहॉ के मनुष्यो की आयु 1000 वर्ष थी।मौलि, महाकाय,शाकपोत,करम्भक,अच्चुलाख्य आदि मनुष्य लोग वास करते थे।2 केतुमाल वर्ष पश्चिम दिशा मे स्थित था। बलदेव उपाध्याय के अनुसार–"यह केतुमाल चक्षु– या वक्षु नदी के द्वारा पहचाना जा सकता हैं जो उससे हो कर बहती थी। चक्षु–या वक्षु– आक्सस–आमूदरिया जो अराल सागर मे आज गिरती है और यही का भू–भाग केतुमाल की सज्ञा से अभिहित था।3" वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार– केतुमाल द्वीप पामीर–पठार से लेकर कृष्ण सागर तक फैले हुये बडे रूसीमैदान का एक भाग होना चाहिये।4 आचार्य बलदेव उपाध्याय ने जम्बू द्वीप के नो वर्षो की निम्न सारणी प्रस्तुत की है5–

(उत्तर)

उत्तर कुरु (श्रृङ्गी पर्वत)

हिरण्यम (श्वेत पर्वत)

रम्यक (नील पर्वत)

सुमेरू

(पश्चिम) केतुमाल– इलावृत वर्ष – मेद्राश्व (पूर्व)

हरिवर्ष(निषधवर्ष पर्वत)

किपुरूष वर्ष (हेमकूट)

भारत वर्ष (हिमालय)

(दक्षिण)

1 पुराण विमर्श पृष्ठ –331
2 मार्कण्डेय पुराण – 56/14
3 पुराण विमर्श पृष्ठ –331
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –139
5 पुराण विमर्श पृष्ठ –330

भारत वर्ष का विस्तार (क्षेत्रीय विभाजन) —

भारत वर्ष मे चारो युगो कीविधि विद्यमान है । भारत वर्ष सभी लोको का बीज स्वरूप है । भारत वर्ष मे जन्म लेने वाले अप्सरा,मृग,पशु,पक्षी एव मनुष्य आदि सभी जीव अपने शुभ– अशुभ कर्मो के फल स्वरुप उत्पन्न होते थे । मार्कण्डेय पुराण के आधार पर– ' समस्त लोको मे भारत वर्ष ही एक मात्र कर्म भूमि है। देवतागण भी सदा अभिलाषा करते हैं कि यदि वे देवत्व से कभी भ्रष्ट हो तो पृथ्वी के मध्य इस भारत वर्ष मे ही मनुष्य योनि प्राप्त करे ।'[1] मार्कण्डेय पुराण कालीन भारत वर्ष नौ भागो मे विभक्त था जो निम्न है– इन्द्रद्वीप/कशेरुमान /ताम्र वर्ण/गभस्ति मान/नागद्वीप /सौम्य / गान्धर्व / वारूण / नवम् भारत हैं ।[2]

भारत वर्ष का नव भाग समुद्र से आवृत्त था जहॉ सरलता से भूमि के रास्ते नही पहुचा जा सकता था यह दक्षिण और उत्तर मे सहस्त्र योजन परिमाण वाला था ।' भारत वर्ष के इस नव खण्डात्मक विभाजन का मुख्य कारण गुप्तो के समय मे भारत वर्ष का सास्कृतिक विस्तार था । इसी युग मे भारतीय सभ्यता तथा सस्कृति का, भाषा तथा साहित्य का, धर्म तथा दर्शन का पूर्वी द्वीप पुजो मे आश्चर्य जनक विस्तार सम्पन्न हुआ ।[3] किन्तु प्रश्न यह उठता हैं कि भारत के नव विभाजन वाले श्लोक मे "अय तु नवमस्तेषा" क्यो लिखा गया है? इसकी स्पष्ट व्याख्या करने मे विद्वानो को अत्यन्त कठिनाई का सामना करना पडा है । राजशेखर की काव्य मीमासा एव वामन पुराण के अनुसार यह नवम् भाग कुमारी द्वीप या कन्याकुमारी था। भारत वर्ष के नव विभाजनो मे से पॉच ही खण्डो का वर्तमान नाम प्राप्त होता है।

बलदेव उपाध्याय के अनुसार नव नामो की सूची निम्न हैं —

वर्तमान नाम

1–इन्द्र द्वीप — इन्द्रद्युम्न, अण्डमान टापू

2–कशेरुमान — मलयद्वीप

. . . .

1 मार्कण्डेय पुराण – 54/62–63
2 इन्द्रद्वीप कशेरूमास्ताम्रवर्णो गभस्तिमान्। नागद्वीपस्तथा सौम्यो गान्धर्वो वारूणस्तथा।।
अयं तु नवमस्तेषा . . ।। मार्कण्डेय पुराण – 54/6–7
3 पुराण विमर्श पृष्ठ – 339

3—ताम्रपर्ण — सिहल, लका

4—गभस्तिमान — अप्राप्त

5—नागद्वीप — नागवर = नक्कवर (चोल शिलालेख)
= निकोबार टापू

6—सौम्य — अप्राप्त

7—गान्धर्व — अप्राप्त

8—वारुण — बोरनियो टापू [1]

9—भारत — कुमारी द्वीप — कन्याकुमारी

भारतवर्ष के पूर्व मे किरात जाति एव पश्चिम मे यवन गण निवास करते हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र या भारत वर्ष के मध्य मे निवास करते थे। इन चारो जातियो को अपने —अपने कर्मो से स्वर्ग लाभ, पुण्य लाभ, पाप, मोक्ष आदि की प्राप्ति होती थी। भारत वर्ष मे चारो वर्णो के साथ—साथ चारो युगो मे मनुष्य की आयु भी निर्धारित थी । भारत वर्ष के चारो युग एव आयु की सारिणी निम्न हैं —

सत्युग मे मनुष्य की आयु चार सौ वर्ष (400 वर्ष),
त्रेता युग मे मनुष्य की आयु तीन सौ वर्ष (300 वर्ष)
द्वापर युग मे मनुष्य की आयु दो सौ वर्ष (200 वर्ष)
कलयुग मे मनुष्य की आयु सौ वर्ष (100 वर्ष) थी ।

भारत वर्ष का कार्मुक संस्थान (प्राचीन विभाजन) :—

मार्कण्डेय पुराण मे भारत वर्ष का भौगोलिक विभाजन का विवरण दो प्रकार से प्राप्त होता हैं । प्रथम तो कार्मुक (धनुषाकार) अर्थात् भारत की आकृति धनुष के आकार की हैं।द्वितीय— कूर्म अर्थात् कच्छप आकृति, जिसमे कूर्म के प्रत्येक अगो के आधार पर जनपदो का विभाजन किया गया हैं। (इसका विस्तृत विवरण आगे उल्लिखित हैं) भारत की धनुषाकार आकृति का वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे इस प्रकार से है —"भारत को पूर्व दक्षिण और पश्चिम दिशा मे महासागर धनुषाकार रुप घेर रहा है और उत्तर दिशा मे हिमालय पर्वत धनुष के गुण के समान विद्यमान रहता है।"

1 पुराण विमर्श पृष्ठ — 340

दक्षिणापरतो ह्यस्य पूर्वेण च महोदधि।
हिमवानुत्तरेणास्य कार्मुकस्य यथागुण।।[1]

इसमे प्राचीन भुवनकाश का उल्लेख प्राप्त होता है।इस प्राचीन भुवनकोश का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण[2]के अतिरिक्त वायु पुराण[3], कूर्म पुराण[4], मत्स्य पुराण[5] ब्रह्माण्ड पुराण[6] एव महाभारत के भीष्म पर्व मे भी प्राप्त होता है। किन्तु मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त भुवनकोश का वर्णन अन्य पुराणो मे नही प्राप्त होता ।

मार्कण्डेय पुराण के कार्मुक (धनुषाकार) सस्थान मे सात कुल पर्वत(इनमे सहायक अनेक अन्य छोटे–छोटेपर्वत) एवं पर्वत से निकलने वाली अनेक महत्व पूर्ण नदिया एव अनेक जनपदो का वर्णन प्राप्त होता है।

कार्मुक संस्थान के जनपदों की सूची –

"जनपद एक सास्कृतिक भौगोलिक इकाई की सज्ञा होती थी।[7] कार्मुक सस्थान के जनपदो को 7 भागो मे बाटा गया था। ये भाग निम्न हैं–1–मध्य प्रदेश 2–उदीच्य 3–प्राच्य (पूर्व प्रदेश) 4–दक्षिणापथ 5– अपरान्त (पश्चिम देश) 6–विन्ध्यपृष्ठ 7–पर्वताश्रयी।

1–मध्य देश के जनपद– मत्स्य,अश्वकूट,कुल्य,कुन्तल, काशी,कोशल, अर्बु कलिङ्ग, वृक आदि है ।

2–उदीच्य जनपद– बाह्लेक वाटधान, आभीर, कालतोयक, अपरान्त, शूद्र, पह्लव ,चर्मखण्डिक, गान्धार,यवन, सिन्धु, सौवीर, मद्रक, शत्रुद्रुज, कलिग,पारद, हारभूषिक, माठर, बहुभद्र, कैकेय, दशमालिक, कम्बोज, दरद, बरबर, अगलौकिक, चीन, तुषार, तामस, हसमार्ग, काश्मीर, शूलिक, कुहक, उर्ण, दार्व आदि हैं ।

3– प्राच्य (पूर्व देश)जनपद– अभ्रारक, मुद्गारक, अन्तर्गिरि, बहिर्गिरि, प्लवग, रगेय, माल, दामल, वर्त्तिक, उत्तर ब्रह्म, प्रविजय,भार्गव, गेय मल्लक, प्राग्ज्योतिष, मद्र, विदेह, ताम्रलिप्तक, मगध, मल्ल, गोमेद आदि हैं।

1 मार्कण्डेय पुराण – 54/59
2 मार्कण्डेय पुराण अध्याय – 54
3 वायु पुराण अध्याय –45
4 कूर्म पुराण – पूर्वार्द्ध अध्याय –46
5 मत्स्य पुराण अध्याय –114
6 ब्रह्माण्ड पुराण अध्याय – 49
7 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152

4– दक्षिणा पथ(दक्षिण देश)– पाण्डय, केरल, चोल, कुन्त्य, शैलूष, मूषिक, कुमार, वानवाषक, महाराष्ट्र, माहिषिक, कलिग, आभीर, वैशिक्य, अश्मक, भोगवर्द्धन, नैमिष, कुन्तल, आन्ध्र, वनदारक आदि है ।

5–अपरान्त (पश्चिम देश) जनपद– सूर्यारक, कालिबल, दुर्ग, कट, पुलिन्द, सुमीन, रूपक, स्वापद, कुरुमिन, तोशल, कोशल, त्रैपुर, विदिश, भीरुकच्छ, उत्तर नर्मद, माहेय, सारस्वत, काश्मीर, सुराष्ट्र, आवन्त्य आदि।

6–विन्ध्य पृष्ठ (विन्ध्यवासी)जनपद– सरज, करूष, केरल, उत्कल, उत्तमर्ण, दशाण, भोज्य, किष्किन्धक, तुम्बरू,पटु, नैषद, अन्नज, तुष्टिकार, वीरहोत्र, अवन्ति यह सभी जनपद विन्ध्य के पीठ पर स्थित थे ।

7– पर्वताश्रयी (पर्वतीय)जनपद– डॉ0 वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –'प्राचीन भारत वर्ष मे पर्वताश्रयी या पहाडी जनपदो के दो समूह थे। एक कुल्लू कॉगडा से लेकर जम्बू के डोगरा प्रदेश तक और दूसरा कश्मीर के पुछहजारा से लेकर अफगानिस्तान के पहाडी इलाको तक।'[1] इन जनपदो के नाम निम्न हैं– नीहार, हसमार्ग, कुरु, गुर्गण, खस, कुन्त, प्रावरण, उर्ण, दार्व, कृत्तक, त्रिगर्त, गालव, किरात आदि। चूकि ये पर्वत का आश्रय लेने वाले जनपद थे इसलिए इन जनपदो को पर्वताश्रयी जनपद की सूची मे रखा गया था। मार्कण्डेय पुराण मे वर्णित जनपदो का भू– भाग बहुत विस्तृत है ' अफगानिस्तान स कामरूप तक और हिमालय से दक्षिण तक जनपदो का ताता फैला हुआ था और सम्भवत कोई भी भू भाग ऐसा नही था जो जनपद के रुप मे विकसित न हुआ हो।[2]

कूर्म सस्थान :–

कूर्म का अर्थ कच्छप । मार्कण्डेय पुराण मे भारत वर्ष का द्वितीय भौगोलिक विभाजन कूर्म के प्रत्येक अगो के आधार पर किया गया है । कूर्म सस्थान मे जनपदो की सूची तो प्राप्त होती है किन्तु कार्मुक सस्थान की तरह पर्वत एव नदियो की सूची नही प्राप्त होती । आचार्य बलदेव उपाध्याय के अनुसार– कूर्म सस्थान पर आधारित जनपद सूची ज्योतिषशास्त्र के ग्रन्थो मे –'वराहमिहिर की वृहत्सहिता के नक्षत्र ग्रथ मे तथा पराशरादि मुनियो द्वारा निर्मित प्राचीन ज्योतिष ग्रन्थो मे उपलब्ध होती हैं।[3]

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –153

3 पुराण विमर्श पृष्ठ –355

मार्कण्डेय पुराण के अनुसार भगवान हरि कूर्म रूप धारण कर नव भागो मे वास करते हैं । नक्षत्र और सम्पूर्ण विषय भी नव भागो मे विभक्त होकर उनके चारो ओर वास करते है । '

'नवधा सस्थिते न्यस्य नक्षत्राणि समन्तत '[1]

भगवान कूर्म के नव भाग निम्न है–

1– मध्यभाग 2– कूर्म का मुख 3– कूर्म का पूर्व–दक्षिण पैर 4– दक्षिण कुक्षि 5– पश्चिम दक्षिणी पैर 6– पुच्छ या पृष्ठ भाग 7– पश्चिमोत्तर पैर 8– उत्तर कुक्षि 9– पूर्वोत्तरी पैर

'इस कूर्म स्थानीय भारत का मुख पूर्व की ओर हे और इसी दिक् सूत्र को पकडकर अन्य अवयवो की आपेक्षित स्थिति निश्चित की जा सकती हैं ।'[2]

कूर्म सस्थान के जनपदो की सूची –

भगवान कूर्म (कच्छप) की शारीरिक रचनानुसार भारत को नौ भागो मे विभाजित किया गया हैं। इन नौ भागो मे देश, जनपद आदि की मिश्रित सूची निम्न है –

1– कूर्म के मध्य स्थल मे – वेदि, मद, अरिमाण्डव्य, शाल्व, नीप, शक, उज्जिहान, घोष सख्य, खस, सारस्वत, मत्स्य, शूरसेन, माथुर, धर्मारण्य, ज्योतिषिक, गौर ग्रीव, गुडाश्मक, वैदेहक, पाचाल,सकेत कक, मारुत, कालकोटि, पाखण्ड, कापिजल, कुरुबाह्य, उदुम्बर आदि ।[3]

2–कूर्म के मुख मे – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार कूर्म के मुख मे वृषध्वज, अजन, जम्बू नामक, मानवाचल, शूप कर्ण, व्याघ्रमुख, मुर्वर,कर्वटाशन, चन्द्रशेखर, खश, मगध, शिनि,मैथिल, शुभ्र, वदनदन्तुर, काशय, मेखल, मुष्ट, ताम्रलिप्त आदि।[4]

3–पूर्व–दक्षिण पाद मे – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार कूर्म के पूर्व– दक्षिण पाद मे कलिग, वग, जठर, कौशल, मूषिक, चेदि, उर्ध्वकर्ण, मत्स्य, आन्ध्र, विदर्भ, नारिकेल, धर्मद्वीप, ऐलिक, व्याघ्रग्रीव, महाग्रीव, त्रैपुर, श्मश्रुधारी, कैष्किन्ध, हैमकूट, निषध, कटकस्थल, दशार्ण, हारिक, नग्न, काकुलालक, पर्ण, शबर आदि है।[5]

1 मार्कण्डेय पुराण –55/5
2 पुराण विमर्श पृष्ठ –335
3 मार्कण्डेय पुराण –55/6–9
4 मार्कण्डेय पुराण –55/11–14
5 मार्कण्डेय पुराण –55/16– 19

4–कूर्म के दक्षिण कुक्षि में निवास – लका, कालजिन, शैलिक, भृगुकच्छ, कोकण, आभीर, अवन्ति, दाशपुर, आकारी,महाराष्ट्र,कर्णाट, गोनर्द, चित्रकूट, चोल, कोलगिरि, जटाधर, नासिक, वारिचर, कोल, चर्मपट्ट, दक्षिण,कौरुष, ऋषिक, ऋषभ, सिहल, कॉची, कुजर, दरी, कच्छ, ताम्रपर्णी आदि है।1

5–कूर्म के दक्षिण पद मे – काम्बोज,वडवामुख,सिन्धु, सौवीर,आनर्त्त,वनितामुख, द्रावण,सार्गिग, शूद्र, प्राधेय, बर्बर, किरात, पारद, पाण्डय, पराशव, कल, धूर्तक, हैमगिरिक, सिन्धु,कालक, वैरत, सौराष्ट्र, दरद, द्राविड, महार्णव आदि है।2

6–कूर्म के पूछमे – मणिमेघ, क्षुराद्रिअस्त्रगिरि, अपरान्तिक, नोहय, शान्तिक, विप्रशस्तक, पञ्चनद, वमन, अवर, तारक्षुर अगतक, शर्कर, शाल्मवेश्मक, गुरुस्वर, फाल्गुनक, फाल्गुलुक, गुरुह, चकल आदि है।3

7–कूर्म के वामपद मे – माण्डव्य,चण्डखार, अश्व, कालनद, कुशात्त, लडह, स्त्री बाह्य, बालिक, नृसिह, धर्मबद्ध,उलूक आदिहैं।4

8–कूर्मकेवामकुक्षि में –हिमालय, कौञ्च, कैलास, धनुष्मान, वसुमान, कुरुबक, क्षुद्रवीण, रसालय, कैकय, भोगप्रस्थ, यामुन, अन्तर्द्वीप, त्रिगर्त, आग्नीज्य, अर्दन, अश्वमुख, प्राप्त, चिबिड, केशधारी, दासरेक, वाटदान, शवधान, पुष्कल, अधम, कैरात, तक्षशिल, अम्बष्ठ, मालव, मद्र, वेणुक, वदन्तिक, पिगलगानकलह, हूण, कोहलक, माण्डव्य, भूतियुवक, शातक, हेमतारक, यशोमत्य, गान्धार, खरस, गरराशि, यौधेय, दासमेय, राजन्य, स्यामक, क्षेमधूर्त्त आदि हैं ।5

9– कूर्म के पूर्व–उत्तर पैर मे – पशुपाल, कीचक, काश्मीर, अभिसारजन, दरद, अगण, कुलट, वनराष्ट्र, सौरिष्ठ, ब्रह्मपुरक, वनवाह्यक, किरात, कौशिक, नन्द, पह्लव, लोलन, दार्व, दामरक, कुरट, अन्नदारक, एकपद, खश, द्योष, स्वर्ग, भौम, अनवाद्यक, यवक, हिग, चिरप्रवारण, त्रिनेत्र, पौरव, गधर्व आदि।6

.1 मार्कण्डेय पुराण –55 / 20–28
2 मार्कण्डेय पुराण –55 / 30– 32
3 मार्कण्डेय पुराण – 55 / 34 – 36
4 मार्कण्डेय पुराण –55 / 38 –40
5 मार्कण्डेय पुराण –55 / 41–47
6 मार्कण्डेय पुराण –55 / 48 –52

कूर्म सस्थान मे नक्षत्र –

मार्कण्डय पुराण मे भगवान कूर्म के नव भागो मे तीन तीन नक्षत्रो को कमश 27 नक्षत्रो को नव भागो मे विभाजित किया गया है। जो कि निम्न है–

1– कूर्म के मध्य भाग मे – कृतिका,रोहिणी,मृगशिर नक्षत्र

2– मुख मे – आद्रा, पुनर्वसु, पुष्य नक्षत्र

3– कूर्म के पूर्व दक्षिण पैर मे– आश्लेषा,मघा,पूर्वाफाल्गुनी

4– कूर्म के दक्षिण कुक्षिमे–उत्तराफाल्गुनी,हस्त, चित्रा नक्षत्र

5– पश्चिम दक्षिणी पैर मे– स्वाती, विशखा, अनुराधा नक्षत्र

6– पुच्छ या पृष्ठ भाग मे –ज्येष्ठा,मूल, पूर्वाषाढा

7– पश्चिमोत्तर पैर मे–उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा

8– उत्तर कुक्षि मे –शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद

9– पूर्वोत्तरपैर मे– रेवती,अश्विनी, भरणीनक्षत्र

कूर्म के विभिन्न अगो मे रहने वाले ये 27 नक्षत्र उस देश मे रहने वाले निवासियो को शुभ– अशुभ फल देने वाले होते थे। अशुभ फल की शान्ति के उपाय के लिये डा0वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –"जप,होम, दान,स्नान, अक्रोध,अद्रोह, मैत्री, उपवास,इन उपायो का आश्रय लेना चाहिये ।[1]

भारत वर्ष के पर्वत :–

मार्कण्डेय पुराण मे प्राचीन भारत के भौगोलिक खण्ड मे कुल 7 पर्वतो की सख्या का उल्लेख प्राप्त होता है।किन्तु "प्राचीन भौगोलिक परिभाषा क अनुसार पर्वत दो प्रकार के होते हैं–

(क) वर्ष पर्वत (ख) कुल पर्वत

वर्ष पर्वत एक वर्ष या बडे भू–खण्ड को दूसरे वर्ष से अलग करते है। कुल पर्वत वे है जो देश के भीतर ही उसकी प्रादेशिक सीमाओ को सूचित करते है।[2]

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –155
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ ––143

मार्कण्डेय पुराण में मुख्य सात कुल पर्वत निम्न है– महेन्द्र मलय, सह्य, शुक्तिमान, ऋक्ष, विन्ध्यपारियात्र2 इन सात कुलपर्वतों के अतिरिक्त अन्य छोटे–छोटे अनेक पर्वतो का भी वर्णन मार्कण्डेय पुराण में प्राप्त होता है।

हिमालय का वर्णन – हिमालय को देव भूमि कहा गया है। यहाँ 100वर्ष तक विचरण करने पर भी व्यक्ति तृप्त नही होता। हिमालय पर शीतलता अधिक है। स्वर्ग से भी सुन्दर इस स्थान पर व्यक्ति वृद्ध नही होता। सदैव यौवन की वृद्धि को प्राप्त होता है। यहाँ सभी प्रकार के फल,अन्न,जल, किन्नरों का संगीत,वीणा की झंकार आदि विद्यमान है। गन्धर्व,किन्नर आदि देवता हिमालय पर विचरण करते रहते हैं।अत्यन्त रमणीय स्थल हिमालय पर देखने को मिलते हैं। कहीं पर मोर नृत्य करते हैं तो कहीं कोयल, दात्यूह, पपीहा, टिटीहरी, आदि घूमते है और कहीं पुंस्कोकिल के समान मनोहर मधुरालाप गुजांयमान हो रहा हैं ।यह पर्वत दक्षिण दिशा में स्थित हैं। पूर्व से पश्चिम तक फैला हुआ है तथा समुद्र में भी स्थित है। जठर, निषध, देवकूट,पारियात्र, कैलाश,हिमालय,श्रृङ्गवान,जारुधि ये आठों पर्वत मर्यादा पर्वत कहलाते हैं।

महेन्द्र – उत्कल प्रदेश के गंजाम जिले में पूर्वघाट के ऊंचे शिखर को महेन्द्र पर्वत कहते है।इस पर्वत पर प्राचीन के चार विशाल बने हुयें है। यहाँ पर 11 वीं शताब्दी में एक जयस्तम्भ राजा राजेन्द्रचोल ने बनवायाहै।

मलय – वर्तमान समय मे यह मैसूर के दक्षिण और त्रावण कोर के पूर्व में विद्यमान हैं।"भारत के दक्षिण मे एक पर्वत श्रृंखला जहाँ चंदन के वृक्ष बहुतायत से पाये जाते है–मलयगिरि कहलाते हैं।1" मलय पर्वत सात कुलाचल पर्वत में भी आता है।

सह्य – वर्तमान समय में यहऔरगांबाद के पश्चिमी घाट पर विद्यमान हैं महाराष्ट्र के शिवनेरी, विशालगढ़,प्रतापगढ़, पन्हाला, रायगढ़,आदि किले इसी पर्वत पर विद्यमान हैं सह्य पर्वत से ही कृष्णा एवं गोदावरी नदी निकलती है। महाबलेश्वर,मंगेशी आदि तीर्थ क्षेत्र इसी पर्वत पर है।

....

1. संस्कृत हिन्दी कोश – वामन शिवराम आप्टे

मध्य भाग म गुजरात से बिहार तक विन्ध्य पर्वत खडा है। विन्ध्य और सतपुडा का सयोग अमरकण्टक मे होता है। यही से नर्मदा उद्गम हुआ है।

जठर पर्वत —यह पूर्व दिशा मे स्थित है। नील एव निषध पर्वत से मिले हुये है।

निषध पर्वत — यह मेरु पर्वत के पश्चिम मे है ये भी नील एव निषध पर्वत से मिले हुये हैं।

पारियात्र पर्वत — यह पर्वत राजस्थान का आधार है। आधुनिक सन्दर्भ मे यह अरावली के नाम से प्रसिद्ध है। अरावली के सर्वोच्च शिखर का नाम "आबू " है। आबू मे जैन के पवित्र स्थान बसे हुए है। सिन्ध पजाब स आग बढन वाल परकीय मुसलमाना के आक्रमण इस पर्वत के आश्रय से रोके गये है। इसका प्राचीन नाम पारियात्र है। इसकी सात कुल पर्वतो मे गणना होती है।

देवकूट पर्वत — यह जठर पर्वत के ही समीप पूर्व दिशा मे नील एव निषध पर्वत से मिला हुआ है।

जारुधि पर्वत — यह उत्तर दिशा म समुद्र मे स्थित है।

श्रृङ्वान पर्वत — यह पर्वत जारुधि पर्वत के समीप है।यह उत्तर दिशा मे समुद्र मे स्थित है।

कैलाश पर्वत — यह पर्वत दक्षिण दिशा मे स्थित है। पूर्वसे पश्चिम तक फैले हुए समुद्र मे भी स्थित है। आज भी इस पर्वत को कैलाश पर्वत ही कहत है जो कि हिमालय की एक चोटी है।

मन्दर पर्वत — सम्भवत यह मगध दश का शिखर रहा होगा । रामायण के अनुसार यह पूर्व दिशा मे स्थित था। "इस पर सुवर्ण वर्ण क, लोह सदृश मुख वाले, वेग से दौडने वाले,मनुष्य भक्षी किरात नामक जाति निवास करती थी।[1] पूर्व म स्थित यह विष्कम्भक पर्वत है। इस पर कदम्ब का वृक्ष है।यह पर्वत 11सौ योजन म फैला हुआ है।

दर्दुर पर्वत — "वर्तमान सन्दर्भ म यह भारत के दक्षिण मे विद्यमान नील गिरि पहले " दर्दुर " पर्वत कहलाता था।"[2]

1 वाल्मीकि रामायण 4/39/24–26 तक
2 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 47

वैद्युत पर्वत – वाल्मीकि रामायण के अनुसार दक्षिण मे सूर्यवान पर्वत के चौदह योजन दूरी पर था।

रैवतक पर्वत– आधुनिक सन्दर्भ मे यह काठियावाड़ जिले मे हैं।इसका प्राचीन नाम उज्जयताद्रि भी है। यह गिरनार नाम से भी प्रसिद्ध है। इस पर गोरखनाथ शिखर सबसे ऊँचा है।इस पर स्थित दामोदर कुण्ड अत्यन्त पवित्र कुण्ड है। कहा जाता है कि यहाँ पितरो की हड्डिया डाली जाती थी क्योकि इस कुण्ड मे हड्डिया गल जाती थी । रैवतक पर्वत शिव जी के अश का निवास क्षेत्र भी माना जाता है।

अर्बुद पर्वत– अर्बुद पर्वत भारत के पश्चिम मे स्थित था । जिसे आबू पर्वत भी कहते हैं।

ऋष्यमूकपर्वत – वर्तमान समय मे यह बिलारी जिले के उत्तर मे है।

मेनाक पर्वत – यह पर्वत लका और भारत के बीच मे पडने वाले समुद्र मे स्थित है।

त्रिकूट पर्वत – यह पर्वत मन्दर पर्वत के दक्षिण मे स्थित था। वर्तमान समय मे यह दक्षिण पूर्वी लका का पर्वत है।

हेमकूट पर्वत – इसे मूजवान पर्वत भी कहते थे एव वर्तमान सन्दर्भ मे इसे हिन्दुकुश पर्वत भी कहते है। यह जम्बू द्वीप का पर्वत है एव नो हजार योजन तक फेला हुआ है।

ऋषभपर्वत – इसे प्राचीन काल मे श्वेत पर्वत भी कहते थे।"यह आधुनिक श्वेत सागर के मध्य कोई पर्वत रहा होगा जो उत्तरी ध्रुव के निकट स्थित है।"[1]

मेरूपर्वत – यह इलावृत वर्ष के मध्य म है। यह सोने का पर्वत है जो कि सोलह हजार योजन पृथ्वी के अन्दर हे और ऊँचाई चौरासी हजार योजन है। यह पर्वत पूर्व मे श्वेत,पश्चिम मे नीला, दक्षिण मे पीला एव उत्तर मे नीले रग का है। इसकी चोटी सकोरे के समान बत्तीस हजार चौड़ी है। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एव शूद्र चारो वर्ण आठो दिशाओ मे वास करती हे।

गन्धमादन पर्वत – यह पश्चिम दिशा म स्थित हे। यह ग्यारह सौ योजन में फैला हुआ है। इस पर्वत पर जामुन क वृक्ष पाये जाते हैं।इसके शिखर स जम्बू फल गिरते हैं जम्बू फल हाथीं के समान बडा होता है।

1 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 43

विपुल – यह उत्तर दिशा मे स्थित हे । यह पर्वत भी 11 सौ योजन मे है। इस पर पीपल का वृक्ष है।

सुपार्श्व – यह दक्षिण मे स्थित था। इसका परिमाण 11 सौ योजन है। इस पर बरगद का वृक्ष है।

चन्द्रकान्त पर्वत – यह पर्वत कुरू वर्ष मे स्थित है।

सूर्य कान्त पर्वत – यह पर्वत भी कुरू वर्ष मे स्थित है।

कामरूप पर्वत – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह पर्वत पूर्व दिशा मे स्थित है। इस पर्वत पर विजयपुर का निर्माण हुआ। जिसे स्वरोचि मे अपने पुत्र विजय को प्रदान किया था। इसके अतिरिक्त मार्कण्डेय पुराण मे कुमुद, प्रभृति आदि पर्वत का भी नामोल्लेख प्राप्त होता है।

नदियां : –

गगा – जगत्कारण भगवान नारायण ने ध्रुवाधार नामक पद से प्रादुर्भूत हो त्रिपथगामिनी गगा सुधायोनि चन्द्रमण्डल मे प्रविष्ट होकर सूर्य की किरणो के सम्पर्क से सवर्धित हो सुमेरू पर्वत के ऊपर गिरी। मेरू पर्वत मे चार धाराओं मे विभक्त होकर पूर्व दिशा में चैत्ररथ वन मे "सीता" नाम से विख्यात हुयी। वरूणोद पर्वत, शीतान्तपर्वत से होती हुयी पृथ्वी मे जाकर भद्राश्व वर्ष से होती हुयी समुद्र मे मिलती है। दक्षिण मे गन्धमादन पर्वत से गिरकर "अलखनन्दा" नाम से विख्यात हुयी । नन्दन वन, मानसरोवर तथा रम्य पर्वत से होती हुई हिमालय पर गिरी जहॉ भगवान वृषध्वज (शिव) ने अपने मस्तक पर धारण किया। राजा भागीरथ घोर तपस्या, अर्चना, आराधना करके भगवान शिव से गगा को पृथ्वी पर लाये, जिससे वह सात भागो मे विभक्त होकर दक्षिणी समुद्र मे गिरी वहॉ से तीन भागो मे बट गयी। पूर्व मे महानदी, पश्चिम मे सुचक्षु एव उत्तर मे भद्रसोमा नाम से विख्यात हुयी इस तरह गगा नदी अनेक रूपो में अनेक नामो को प्राप्त करते हुये पृथ्वी पर एक पवित्र नदी के रूप मे पूजनीय हो गयी।

सरस्वती– सरस्वती नदी का उल्लख वेदो, पुराणो तथा रामायण आदि मे प्राप्त होता है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार सरस्वती नदी हिमालय के प्रत्यन्त सब पर्वतों से निकली हैं। साख्यायन श्रौतसूत्र (13 –29) मे लाट्यायन श्रौतसूत्र (10/15/1) मे तथा अन्य श्रौतसूत्रों में सरस्वती नदी के किनारे यज्ञ करने का अपना

अलग ही महत्व है। एव इसे सिद्ध स्थान बताया गया है। पुराणो मे सरस्वती को ब्रह्मा की पत्नी तथा वाणी की देवी, विद्या की देवी आदि बताया गया।' विद्वानो के अनुसार सरस्वती हिमालय की सिरमुर श्रेणी से जिसे शिवालिक कहते हैं, निकलकर पटियाला के बीच बहती हुई राजपूताना के मरुभूमि के उत्तरी भाग मे विलुप्त हो जाती हैं। जिसे मनु ने 'विनशन' प्रदेश कहा है ।[1] चलोर नामक ग्राम के मरु मे लुप्त होकर बरखेडा मे दिखाई देती है । उर्नई की मार्कण्डा नदी उसमे मिलती हैं और अन्त मे यह घग्गर या घर्घर मे मिल जाती हैं । महाभारत के अनुसार भी सरस्वती एक बार लुप्त होकर, तीन बार प्रादुर्भूत हुई है।[2]

सिन्धु – इसका आधुनिक नाम भी सिन्धु नदी है । हिमालय मे गगोत्री के पास उत्पन्न होकर पजाब और सिन्ध प्रदेश मे बहता हुआ सिन्धु नदी पश्चिम समुद्र मे विलीन होती है।

यमुना – पुराणो के अनुसार यमुना सूर्य कन्या मानी गयी है । यमुना उत्तर भारत की बडी नदी है । यमुना का ही पुराना नाम अशुमती और कालिन्दी है । यह जमुनोत्री के नाम से प्रसिद्ध है एव उत्तरप्रदेश के प्रयाग मे गगा–यमुना का सगम होता है ।

इरावती – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह हिमालय के प्रत्यन्त पर्वत से निकली है । 'भारत के उत्तर दिशा मे इरावती नदी विद्यमान थी जिसे आधुनिक समय मे रावी कहते है ।'[3]

गोमती– आधुनिक नाम इसका गोमती ही है यह लखनऊ आदि स्थानो मे बहती है ।

कौशिकी – कौशिकी नदी को कोसी नदी कहा जाता है ।

विपाशा – यह नदी हिमालय से निकलती है । 'उत्तर दिशा मे पाचाल देश के ही कुरुजागल प्रदेश, इक्षुमती तथा शरदण्डा के पश्चात 'विपाशा' नदी मिलती थी ।'[4] इसे व्यास नदी कहा जाता है ।

सदानीरा – यह नदी पारियात्र पर्वत से निकली है इसे वर्तमान समय मे राप्ती नदी कहा जाता है

1 एन०एल० दे० .ज्याग्रा ० डिक्शनरी

2 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 51–52

3 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 54

4 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 54

शोण – इसे वर्तमान समय मे सोन नदी कहते है। यह सुरथाद्रि पर्वत से उत्पन्न हुई है। 'शोण मध्य प्रदेश के मण्डला जिला के अमरकटक से निकलती है और बुन्देलखण्ड, मिर्जापुर, शाहाबाद जिले मे बहती हुई पॉच सौ मील चलकर पाटलिपुत्र के समीप गगा मे मिल जाती है ।[1]

नर्मदा – यह दक्षिण दिशा मे बहती है । यह भी सुरथाद्रि पर्वत से उत्पन्न हुई है ।

मदाकिनी – यह नंदी चित्रकूट पर्वत से निकली है ।

तमसा – यह नदी ऋक्ष पर्वत से निकली है ।

जम्बू नदी – गन्धमादन पर्वत से जम्बू नामक फल गिरता है जो कि बहुत बडा होता है उसी फल के रस से जम्बू नदी बहती है । 'इस जम्बू नदी से जाम्बू नामक स्वर्ण की उत्पत्ति होती है ।'[2]

हिरण्यवती नदी – यह हिरण्यवर्ष मे बहती है जिसमे बहुत से कमल है ।

भद्रसोमा नदी – यह कुरुवर्ष में स्थित है। यह सूर्यकान्त एव चन्द्रकान्त पर्वत के बीच बहती है अत्यन्त निर्मल एव पवित्र जल धारा वाली नदी है ।

पयोष्णि – यह नदी विन्ध्यपाद से निकलती है । यह शुभप्रद एव पुण्य जल वाली है । आधुनिक नाम ताप्ती है । यह विन्ध्य पर्वत से निकलकर चित्रकूट होकर बहती है ।

गोदावरी – यह भी विन्ध्य पर्वत से निकलती है। यह नदी दक्षिण दिशा मे स्थित थी । आन्ध्र प्रदेश मे गोदावरी विशाल रूप धारण करती हुई पूर्व सागर मे मिलती है ।

कृष्णा – यह नदी विन्ध्य पर्वत से निकलती है। यह नदी दक्षिण दिशा मे स्थित थी।

महानदी – यह नदी विन्ध्य पर्वत से उत्पन्न हुई । भारत के दक्षिण मे यह नदी बहती है । वाल्मीकि रामायण मे चित्रोत्फला कहा गया है ।[3]

1 'वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 52

2 मार्कण्डेय पुराण – 51/29

3 वाल्मीकि रामायण – 4/40/9

ताम्रपर्णी – यह नदी मलय पर्वत से उत्पन्न हुई है । 'आधुनिक तिन्नवेरी जिले मे तॉबरबारी नदी को ताम्रपर्णी कहते थे जो कावेरी के दक्षिण मे बहती है ।'1

चर्मण्वती – यह नदी पारियात्र पर्वत से निकलती है। वर्तमान समय मे यह चम्बल घाटी मे बहती है।

कृतमाला – इसका उद्‌गम स्थल मलय पर्वत है इसका आधुनिक नाम वेगा है। यह दक्षिण दिशा मे बहती है ।

इसके अतिरिक्त वरुणा, घुष्करिणी, निर्विन्ध्या आदि नदियो का नामोल्लेख प्राप्त होता है ।

वन –

चैत्ररथ वन – यह वन पूर्व दिशा के पर्वतो मे विद्यमान था । कोषग्रन्थो मे इसे ' कुबेर का उद्यान ' कहा गया है ।

नन्दन वन – यह दक्षिण दिशा मे स्थित था । ' रामायण के अनुसार यह नन्दन वन कुबेर के प्रसिद्ध वन का नाम था ।'2

वैभ्राज वन – यह पश्चिम दिशा के पर्वत मे था ।

सावित्र वन – यह उत्तर दिशा के पर्वत मे विद्यमान था ।

इसके अतिरिक्त रैवतक, उत्पलावत एव गुहविशाल वन का नामोल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है।

सरोवर .–

मार्कण्डेय पुराण मे निम्न प्रमुख सरोवरो का वर्णन प्राप्त होता है –

अरुणोद – यह सुमेरु पर्वत के पूर्व मे स्थित था ।

मानस – यह सुमेरु पर्वत के दक्षिण मे स्थित था ।

शीतोद – यह सुमेरु पर्वत के पश्चिम मे स्थित था ।

महाभद्र – यह सरोवर सुमेरु पर्वत के उत्तर दिशा मे स्थित था ।

1 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 53

2 वाल्मीकि रामायण – 3/30/15

जनपद –

कार्मुक एव कूर्म सस्थानो के अन्तर्गत वर्णित जनपदो मे से कुछ के विस्तृत वर्णन एव आधुनिक नाम प्राप्त होते है जो कि इस प्रकार है –

अश्मक – अश्मक नाम का एक राजा था । इसी से सम्भवत इस राज्य की स्थापना हुई होगी । इसे अस्सक एव अश्वक भी कहा जाता है । प्राचीन समय मे आन्ध्र प्रदेश मे गोदावरी नदी के तट पर अश्मक नाम का राज्य था इसका विस्तार दक्षिण के सह्य आदि पर्वत तक था इसका नाम षोडश महा जनपदो के अन्तर्गत आता है।

अवन्ति – सात मोक्षदायिका नगरी मे अवन्ति का नाम आता है ।

अयोध्या मथुरा माया काशी काची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्ष दायिका ।।[1]

वर्तमान समय मे यह मध्यप्रदेश का उज्जैन नामक स्थान है । यह प्राचीन समय मे दो भागो मे बटा हुआ था । उत्तरी एव दक्षिणी अवन्ति ।

आनर्त्त – आधुनिक समय मे यह उत्तरी काठियावाड कहलाता है। रुद्रदामन जो कि पश्चिम भारत के शको का राजा था उसी ने इस राज्य पर विजय प्राप्त की थी ।

कलिङ्ग– वर्तमान समय मे यह उडीसा प्रान्त मे है । वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार– यह वर्तमान मे देहरादून जिला है ।[2] राजा खारवेल ने कलिङ्ग नगर –भवन आदि को अलकृत कराया । कालिदास की रचनाओ मे भी कलिङ्ग का उल्लेख मिलता है । 'महाभारत मे इसकी स्थिती गोदावरी नदी के उत्तर मे बताई गयी है ।'[3] यह महानदी एव गोदावरी के मध्य स्थित था ।

1 प्राचीन भारत मे नगर तथा नगर जीवन पृष्ठ –378

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150

3 प्राचीन भारत का इतिहास एव सस्कृति पृष्ठ – 928

केकय – चन्द्रवशी राजा शिवि के पुत्र केकय ने इस राज्य क़ी स्थापना की थी । यह आधुनिक समय मे पश्चिमी पजाब माना जाता है।' प्राचीन केकय जाति के लोग ही आजकल कश्मीर और सिन्धु मे घक्कर जाति के नाम से प्रसिद्व है ।'1 कतिपय पुराणो मे इस प्रकार का वर्णन प्राप्त होता है कि केकय लोग अबु जाति (अनार्य जाति) के वशज थे । ये लोग पहले केकय नगर मे ही रहते थे जो कालान्तर मे केकय कहलाने लगे ।

कम्बोज – यह सोलह महा जनपदो मे से एक था। यह दक्षिणी –पश्चिमी कश्मीर से लेकर हिन्दुकुश तक फैला हुआ था। इसकी राजधानी राजपुर (हाटक) थी । कनिघम का कहना है कि राजपुर ही कश्मीर का राजौरी नामक स्थान है। कौटिल्य ने कम्बोजो को "वार्ताशास्त्रोपजीवी सघ" कहा है। कम्बोज एक जाति है। पतजलि कम्बोजो को अनार्य मानते थे। आधुनिक "पामीर" और बदख्शा का सम्मिलित नाम कम्बोज कहलाता है।

कुरु – आधुनिक दिल्ली तथा मेरठ का स्थान कुरु देश था। इसकी गणना षोडश महाजनपद मे होती है। जातक ग्रन्थो के अनुसार यह दो मील की परिधि मे स्थित था । यह भारत के उत्तर – पश्चिम मे विद्यमान था। वैदिक साहित्य मे कुरु एव पाचालों का एक साथ उल्लेख मिलता है। कहा जाता है कि यहॅा के लोग बुद्धि एव बल के लिए प्रसिद्ध थे।

किरात – "यह आधुनिक वर्मा देश का नगर था जिसे किरात कहते थे। भारत का पूर्वी सीमा प्रदेश किरात कहलाता था।"2

केरल – आधुनिक सन्दर्भ मे भी इसका नाम केरल है। यह भारत के दक्षिण मे स्थित है।

कुन्तलं – यह ग्वालियर का कोन्तवाद प्रदेश था। वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –"कुन्तल का पाठ दूसरे पुराण मे कुन्तय है जो ग्वालियर का कोन्तवाद प्रदेश था।"3

. . ..

1 प्राचीन भारत मे हिन्दूराज्य पृष्ठ – 118

2 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ – 74

3 मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –149

कोशल – यह भी षोडश महाजनपदो मे आता है। वर्तमान समय मे यह फैजाबाद मण्डल मे आता है जो कि अवध का क्षेत्र है। "यह उत्तर मे नेपाल से लेकर दक्षिण मे सई नदी तथा पश्चिम मे पाचाल से लेकर पूर्व मे गण्डक नदी तक फैलाहुआ था।कोशल की राजधानी श्रावस्ती थी ।"[1] वैदिक वाङ्मय के अनुसार कोशल एक जाति थी।

काञ्ची – इसका वर्तमान नाम कजीवरम् है जोकि तमिलनाडु मे स्थित है। प्राचीन काल मे यह काञ्चीवरम् के नाम से प्रसिद्ध था।यह दक्षिण मे स्थित है।"प्रयाग की प्रशस्ति मे काञ्ची के पल्लव नरेश विष्णुगोप का उल्लेख हुआ है।"[2] प्राचीन समय मे इसकी परिधि पॉच मील थी एव मन्दिरो की सख्या लगभग अस्सी थी। यह पल्लव राजवश की राजधानी थी।"काञ्ची का सम्बन्ध भारवि तथा दण्डी जैसे महाकवियो से भी था। "[3]

काशी – षोडश महाजनपद मे काशी का नाम आता है। वर्तमान काल मे यह वाराणसी के नाम से जाना जाता है। जातक से ज्ञात होता है कि मगध, कोशल और अग के ऊपर काशी का अधिकार था। जातको मे वाराणसी के लगभग आधे दर्जन नाम मिलते हैं।[4] काशी का नाम वाराणसी पडने का कारण वरणा तथा अस्सी नदियो के बीच होना है। इसे बनारस भी कहते हैं। "काशी नगरी की प्राचीनता वैदिक युग से की जाती है। अथर्ववेद मे काशी के निवासियो का सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है। महाभारत के अनुसार इस नगर की स्थापना दिवोदास नामक राजा ने की थी। यह सस्कृत शिक्षा का भी केन्द्र था।[5] प्राचीन समय मे स्थापित विश्वनाथ मन्दिर वर्तमान समय मे भी श्रद्धालुओ का केन्द्र है।

यवन – आधुनिक समय मे यह पश्चिमी पजाब है। रामायण युग मे यह किष्किन्धा के उत्तर में था।

हैमकूट – इसे हिन्दुकुश पर्वत एव मूजवान पर्वत भी कहते हैं।

1 प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ – 78
2 प्राचीन भारत मे नगर तथा नगर जीवन पृष्ठ –218
3 प्राचीन भारत का इतिहास तथा सस्कृति पृष्ठ –929
4 प्राचीन भारत मे नगर तथा नगर जीवन पृष्ठ –121
5 प्राचीन भारत का इतिहास तथा सस्कृति पृष्ठ –948

चोल — 864ई0 के लगभग इसकी स्थापना हुयी। आधुनिक समय मे यह त्रिचनापल्ली नामक चोल जाति के नाम से सम्भवत चोल नामक प्रदेश की स्थापना हुयी। तजौर, त्रिचनापल्ली एव पद्दुकोट्टा के प्रदेशो को चोल मण्डल के नाम से कुछ इतिहासकार मानते हैं। चोल राज्य की नये सिरे से नींव विजयामल के समय से पडी।

चीन — आधुनिक समय मे यह भारत का पडोसी राज्य है। इसका नाम चीन ही है।

चित्रकूट — आधुनिक समय मे यह उत्तर प्रदेश मे स्थित है। इसके नाम मे कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। किविदन्ती है कि मार्कण्डेय ऋषि का जन्म चित्रकूट मे ही हुआ था।

बाह्लीक— वर्तमान समय मे यह ईरान का बलरव नामक स्थान है। यह भारत के उत्तर मे विद्यमान था। वृन्दावन दास के अनुसार —"क्रौञ्चगिरि पर्वत जिसे आजकल कुराकुरम् कहते हैं। उमावन इसी स्थान के पास है।इस वन का वर्तमान नाम शरवन है। इस प्रदेश मे बाह्लीक जाति निवास करती थी।"[1] विद्वानो के अनुसार बाह्लीक बेद्धिओई लोगथे। जो मरकोसिया के पास के प्रदेश मे रहते थे।

शूरसेन — शत्रुघ्न के पुत्र शूरसेन के नाम पर इस प्रदेश का नाम शूरसेन पडा। इसका आधुनिक नाम मथुरा है।

माहिषिक — यह सम्भावना की जाती है कि नर्मदा की घाटी के निकट ही कोई माहिषिक स्थान था। "माहिषिक देश सुदूर दक्षिण मे स्थित था।"[2]

मालव — मालवा वर्तमान समय मे मध्यप्रदेश के सागर —उज्जैन आदि के भू —भाग में स्थित है।इसके दो भाग थे। पूर्वी मालवा जिसकी राजधानी विदिशा थी एव पश्चिमी मालवा की राजधानी उज्जयिनी थी ।

मद्र — मद्र जाति द्वारा इस नगर को बसाये जाने के कारण इसका नाम मद्र पड़ा । मद्र एक जाति थी जिसका उल्लेख हमे वृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त होता है। राबी एव चिनाब नदी मद्र देश के समीप बहती थी । यह भारत के उत्तर —पश्चिम में स्थित था। यह जनपद दो भागों में विभक्त था।

1 प्राचीन भारत मे हिन्दू राज्य पृष्ठ —71

2 वाल्मीकि रामायण — 4/40/11

यह राबी, चिनाब, झेलम तक फैला हुआ था। इसकी राजधानी साकल (स्यालकोट) थी।" दक्षिण रूस का प्राचीन नाम मद्र था। यहीं से मेडेन ईरान से आये थे।इन्हीं मद्रो के अधिपति शल्य महाराज महाभारत युद्ध मे कौरवो की ओर से सम्मिलित हुये।[1]

मूषिक — सिन्ध का एक गणराज्य। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार — हैदराबाद की मूसी नदी के तटवासी को मूषिक कहा जाता है।[2]

माठर — मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह उदीच्य जनपद था। यह गजनी का प्रदेश था।[3]

मागध — कुरु वश के राजा वृहद्रथ ने मगध राज्य स्थापित किया था। यह सोलह जनपदो मे से एक है। मगध मे वर्तमान पटना, गया आदि स्थान मिले हुए थे।यह बिहार के दक्षिण मे स्थित था। "इस महाजनपद की सीमा उत्तर मे गगा से, दक्षिण मे विन्ध्य पर्वत तक, पूर्व मे चम्पा से, पश्चिम मे सोन नदी तक विस्तृत थी।[4] मगध के चावल दूर–दूर तक निर्यात किये जाते थे।

मत्स्य — इसे मच्छ भी कहा जाता था। प्राचीन समय मे मत्स्य की राजधानी विराट थी।मत्स्य जयपुर क्षेत्र मे बसा हुआ था। कुरु वश के राजा मत्स्य ने इसकी स्थापना की थी जो ग्वालियर से बरार तक फैला हुआ था।

मल्ल — मल्ल राजा के नाम पर ही मल्ल प्रदेश की स्थापना हुयी थी। यह राजा चन्द्रकेतु का पुत्र था। वर्तमान समय का मुल्तान नामक स्थान ही मल्ल देश था।

प्राग्ज्योतिष — पौराणिक मान्यता के अनुसार यहॉ प्राचीन काल मे ब्रह्मा ने उपस्थित हो कर नक्षत्रों की रचना की थी। अत इस स्थान का नाम प्राग्ज्योतिष पुर पडा।[5] कालिका पुराण में[6] प्राग्ज्योतिष पुर का नाम कामाख्या था।विद्वानो के अनुसार आधुनिक गोहाटी स्थान ही प्राग्ज्योतिष पुर था। यह आधुनिक असम देश मे स्थित है। प्राचीन काल मे यह चारो तरफ से पहाडी से घिरा हुआ था।

1 प्राचीन भारत मे हिन्दू राज्य पृष्ठ — 52
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
4 प्राचीन भारत का इतिहास पृष्ठ –81
5 प्राचीन भारत का इतिहास तथा सस्कृति पृष्ठ – 966
6. कालिका पुराण अध्याय –38

नासिक – नासिक का एक नाम गोवर्द्धन भी था।यहाँ पर जैन तीर्थस्थल भी प्राप्त होते है। चैत्य,विहार एवे बौद्ध गुफाये भी प्राप्त होते है। महराष्ट्र मे गोदावरी नदी के तट पर यह बसा हुआ है।

नैषध – कुरु के पुत्र निषध ने अपने नाम पर यह राज्य बसाया ग्वालियर से चालीस मील दूर नरवर ही प्राचीन निषध या नैषध है।

कच्छ – 7वी शताब्दी मे श्युआन चुआग ने सौवीर के चार भागो मे से कच्छ का उल्लेख किया है।

ताम्रपर्णी – सिह पुर के राजकुमार विजय ने ताम्रपर्णी नगरी बसायी थी, एव अपनी राजधानी बनायी थी।

ताम्रलिप्तक – गुप्त काल का यह महत्व पूर्ण बन्दरगाह था। जो कि पूर्वी भारत मे स्थित था। ताम्रलिप्तक आधुनिक पश्चिमी बगाल के मेदनी पुर जिले में स्थित था। इत्सिग ने यहॉ पर नौ वर्षो तक रहकर शिक्षा प्राप्त की । राहुल मित्र यहॉ के प्रमुख आचार्यो मे से थे। फाहियान चम्पा से ताम्रलिप्तक तक पचास योजन की दूरी तय करके पहुचॉ था ।

तक्षशिला – तक्षशिला प्राचीन समय मे गान्धार की राजधानी बनी थी। तक्षशिला शिक्षा का प्रमुख केन्द्र था।यहॉ पर दूर – दूर से विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने आया करते थे। वसुबन्धु, चाणक्य राजाप्रसनेजित, जीवक राजवैद्य ने यही से शिक्षा प्राप्त करके विद्वान हुए । आधुनिक समय मे यह पाकिस्तान के रावल पिण्डी जिले मे है। प्राचीन काल मे यह जैन धर्म का तीर्थ स्थल था। यहॅा पर एक सौ पॉच जैन तीर्थस्थलो का उल्लेख प्राप्त होता है।

आन्ध्र – यह दक्षिण का जनपद था। वर्तमान समय मे यह आन्ध्र प्रदेश के नाम से विख्यात है एव दक्षिण मे स्थित है।

सूर्यारक – श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –वर्तमान समय में यह बबई मे स्थित है एव सोपारा नाम से प्रसिद्ध है।[1]

माहेय – मही नदी के कॉठे के लोग माहेय है।[2]

सारस्वत – गुजरात की सरस्वती नदी के कॅाठे के निवासी सारस्वत है।[3]

. . .

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152
2. मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152

तोशल – वर्तमान समय मे यह भुवनेश्वर के पास स्थित है।

त्रैपुर – जबलपुर का त्रिपुरी प्रदेश ही त्रैपुर है।[1]

तुम्बरू – आधुनिक तुमैन ग्वालियर राज्य ।[2]

त्रिगर्त – यह पर्वताश्रयी जनपद था। वर्तमान समय मे त्रिगर्त कुल्लू कॉंगडा प्रदेश है।

घोषसख्य – यह कूर्म सस्थान का जनपद था। यह कूर्म के मध्य भाग मे स्थित था। घोषसख्य का वर्तमान स्थल हरियाणा प्रदेश है।[3]

धर्मारण्य – गया के पास स्थित वन को धर्मारण्य कहते हैं।

गजाह्य – प्राचीन काल का हस्तिनापुर प्रदेश ।

काकुलालक – उडीसा के श्री काकुल का निवासी।[4]

दासपुरं – यह प्रदेश कूर्म के दक्षिण कुक्षि में विद्यमान था। श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –शुद्ध पाठ दसपुर या मन्दसौर के निवासी ।

गन्धर्व – भारत के उत्तर –पश्चिम मे यह स्थित था।[5] यह देश काबुल नदी पर स्थित था।

गान्धार – प्राचीन समय मे गान्धार की राजधानी तक्षशिला थी। जो शिक्षा एव साहित्य का प्रमुख केन्द्र था। कुषाण काल मे गान्धार के नाम से एक विशेष गान्धार कला का जन्म हुआ। यह आधुनिक सन्दर्भ मे पाकिस्तान के पेशावर तथा रावलपिण्डी नामक स्थान मे फैला हुआ था।

सिन्धु – सिन्धु प्रदेश सिन्धु नदी के नाम पर पडा है। डॅा० वासुदेव शरण अग्रवाल इसे "दोआब का प्रदेश" मानते हैं।[6] डा० अग्रवाल यह भी मानते है कि यहॉं का मुख्य भोजन सत्तू और पान था जिसके कारण सिन्धु और सप्त सिन्धु दो भागो मे सिन्ध प्रदेश बटा हुआ था।

. . . . .

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –154
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –152
3 मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –153
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –154
5 वाल्मीकि रामायण –7/91/3
6 पाणिनी कालीन भारत पृष्ठ – 62

सौवीर – आधुनिक पाकिस्तान ही सौवीर था । जिसमे आधुनिक समय के मुल्तान और झालावाड का भू–भाग सम्मिलित था। कुछ विद्वानो का मानना है कि सिन्धु और वितस्ता (झेलम) के बीच सौवीर प्रदेश स्थित था। सौवीर दक्षिणी सिन्ध मे स्थित था। सौवीर की राजधानी शेरुव थी ।

सौराष्ट्र (सुराष्ट्र) – इसको उर्जयत्, सुराष्ट्र, सुरथ आदि नाम विद्वानो ने बताए है । विद्वानो के अनुसार सौराष्ट्र गुजरात मे आता था । चन्द्रगुप्त के समय मे सौराष्ट्र मौर्य साम्राज्य का एक अग था ।

सिहल – आधुनिक सन्दर्भ मे यह श्रीलका है । इसका सिहल नाम सिहपुर के राजकुमार विजय ने अपने पिता सिहबाहु के नाम पर इसका नाम सिहल रखा था ।

शतद्रुज– यह उदीच्य जनपद था। शतद्रुज सतलज के उपरले क्षेत्र के त्रिगर्त आदि प्रदेश थे।[1]

दरद– मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह उदीच्य जनपद था । समवत यह कश्मीर का उत्तर पश्चिमी भाग था ।[2]

बर्बर– यह समवत सिन्धु–सागर सगम के पास का प्रदेश था ।[3]

पुष्कल– यह भी उदीच्य जनपद था एव यह गन्धार की पश्चिमी राजधानी थी ।[4]

हसमार्ग – यह भी उदीच्य जनपद था । यह उत्तरी कश्मीर का हुंजा प्रदेश है ।[5]

शूलिक – वर्तमान समय मे यह मध्य एशिया का प्रदेश है ।

कुहक – श्री वासुदेव शरण अग्रवाल के अनुसार –कुहा या काबुल नदी के तटवासी को कुहक कहा जाता था ।[6]

ऊर्ण – स्वात प्रदेश मे ऊनासर के निवासियो को ऊर्ण कहा जाता था ।[7]

. .. .

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
5. मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
6 मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151
7 मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151

दार्व – सभवत वर्तमान समय मे यह जम्मू स्थित डोगरा प्रदेश है।

रङ्केय – यह प्राच्य देश का जनपद था । वर्तमान में समवतः यह बगाल का रक्त मुक्तिका प्रदेश है ।[1]

शैलूष – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह दक्षिण देश का जनपद था जो अभी भी वर्तमान समय मे है ।

शैलूष दक्षिण मे स्थित रामेश्वरम् के निवासियो का कहा जाता है ।

आटव्य – समवत वर्तमान समय मे बस्तर में इन्द्रवती नदी का प्रदेश ।[2]

शबर – बस्तर की शबरी नदी के निवासी जो गजम और विशाखापत्तन तक फैले है ।[3]

ऋषिक – श्री वासुदेव शरण अग्रवाल नैषिक को ऋषिक पाठ मानते हैं। वर्तमान समय मे यह खानदेश

का प्राचीन नाम ऋषिक था।[4]

पाण्ड्य– प्राचीन ताम्रपर्णी एवं कृतमाला नदी इस प्रदेश से होकर गुजरती थी। सभवत कोचीन त्रावकोर

का दक्षिणी भाग था । वर्तमान समय का मदुरा और तिनवल्ली जिला इसी के अन्तर्गत आता था ।

पाचाल – वर्तमान समय का रुहेलखण्ड, बदायू, बरेली, फर्रुखाबाद आदि पाचाल के भू–भाग के अन्तर्गत

आते थे। इसके पूर्व मे गोमती नदी बहती थी। पांचाल प्रदेश उत्तर में हिमालय से लेकर चंबल तक फैला

हुआ था। साख्यायन श्रौतसूत्र तथा उपनिषदो मे पाचाल के रहने वाले ब्राह्मणों का दार्शनिक चर्चाओ मे

भाग लेने का उल्लेख मिलता है ।

विदूरथ – यह दक्षिण मे स्थित था ।

शर्कर – इस प्रदेश के निवासी कूर्म के पुच्छ मे स्थित थे । सिन्ध का रोडी प्रदेश सख्खर प्रदेश ।[5]

पशुपाल– वर्तमान मे कॉगडा का गद्येरन प्रदेश।

1 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151

2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151

3 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151

4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –151

5 मार्कण्डेय पुराण एक सांस्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –154

विदेह – रामायण युग मे विदेह की राजधानी मिथिला थी । शतपथ ब्राह्मण के अनुसार 'विदेह मे आर्य सस्कृति के प्रथम प्रवर्तक विदेघमाधव थे जिन्होने प्रतीच्य भाग से ज्ञान की ज्योति लाकर यहॉ जलाई ।'[1] आधुनिक सदर्भ मे तिरहुत क्षेत्र को विदेह जनपद कहते थे।

विदर्भ– वर्तमान बरार नामक स्थान ही प्राचीन समय मे विदर्भ था जो कि भारत के पश्चिम मे स्थित था।

दशमालिक – यह उदीच्य जनपद था। "सम्मवत अफगानिस्तान का रोह प्रदेश, जो कि मध्यकालीन नाम था। "[2]

दशार्ण – आधुनिक सन्दर्भ में भेलसा, वेत्रवती तथा बुन्देलखण्ड की अन्य छोटी नदियों का प्रदेश दशार्ण कहलाता था।[3]

उत्कल – आधुनिक सन्दर्भ मे यह बदायू क्षेत्र है जो कि प्राचीन समय मे पूर्व मे स्थित था ।

घोष – यह यमवश की शाकद्वीपीय जाति थी सम्मवत जाति के नाम पर ही इस नगर की स्थापना हुई होगी ।

हारभूषिक – मार्कण्डेय पुराण के अनुसार यह उदीच्य जनपद था। इसका दूसरा रूप हारहूण भी मिलता है। कन्धार का प्रदेश जहॉ काले रग की दाख होती है।[4]

पुर – पद्मिनि नामक विद्या के बल पर तीन पुरो का निर्माण हुआ जिसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे मिलता है।

विजयपुर – यह कामरूप पर्वत पर बनाया गया था जिसे स्वरोचि ने अपने पुत्र विजय के नाम पर बनवाकर के वहॉ का राजा नियुक्त किया। यह पूर्व दिशा मे स्थित था ।

नन्दवतीपुर – यह उत्तर दिशा मे स्थित था। इसे स्वरोचि ने अपने पुत्र मेरुनन्द को सौंपा ।

1 शतपथ ब्राह्मण –1 –4 – 1–10तक
2 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150
3 वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ–82
4 मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन पृष्ठ –150

तालपुर — इसे स्वरोचि ने अपने तृतीय पुत्र प्रभाव को सौंपा, जो कि दक्षिण मे स्थित था ।

प्रतिष्ठानपुर — यह इलाहाबाद मे गगा नदी के किनारे बसा हुआ है। आधुनिक नाम झूसी है ।

वाराणसीपुर — यह गगा नदी के किनारे बसा हुआ है। इसे मोक्षदायिनी नगरी भी कहते हैं ।

वनस्पति —

वृक्ष — मार्कण्डेय पुराण मे निम्न वृक्षो का नामोल्लेख प्राप्त होता है– अशोक, मालती, पारिजात, कोविदार, कटहल, बडहल, पुन्नाग, मन्दार, बेर, पाटल, देवदारु, मोचरस, कदम, केतकी, सुखुवा, ताल, तमाल,पलाश, पारावत, ककोल, मौलसिरी, वजुल, कुमुद, पुण्डरीक, नीलकमल, नलिन, तैदू, चपा, कमल,आम, अमरा, अमलवेला, भिलाव, सप्तकर्ण, नारियल, तिदू, बेल, अजीर, अनार, नीबू, तिल, कनेर, हिंगोट, करोद, हड, बहेडा आदि ।

पक्षी — मार्कण्डेय पुराण मे निम्न पक्षियो का नामोल्लेख प्राप्त होता है — चकोर, सारिका,प्रियपुत्र, चातक, कलहस,चक्रवात, शातपत्र, कोयल, जलमुर्गावी, हस, कूर्महरियल, अरिष्टनेमि, भृगराज, कोकिला, प्लव, कारकण्डव, गरुड, सम्पाति, शुक, हरैल, जीव जीवक, सुपार्श्व, कुन्ति, प्रलोलुप, कंक, कन्धर, पिगाक्ष, विबोध, सुपुत्र,सुमुख, बाज,आडि,बक, दात्यूह,पपीहा, टिटहरी, कलहसी आदि ।

कन्दरा — इसमे पक्षी गण निवास करते थे । यह पर्वत के अन्दर बना रहता था ।

पशु — हॉथी, मृग, मृगी, गवय, सर्प, श्वापद, खरगोश, कछुआ, गोय,श्वपित, खड्गी, ग्राम्यसूकर, ग्राम्यकुक्कुट,छाग, गौ, अश्व, गर्दभ,ऊँट, खच्चर, महिष, मेष, वानर, रौही (मृगी) आदि ।

सप्तम अध्याय
ज्योतिष एवं कला

ज्योतिष .–

मार्कण्डेय पुराण मे ज्योतिष का भी पर्याप्त वर्णन प्राप्त होता है। इससे राजा, ऋषि , मुनि आदि सभी प्रभावित थे । राजा की पत्नी द्वारा राजा के प्रति अप्रिय व्यवहार का कारण विवाह के समय ग्रहो का एक दूसरे के प्रति वक्री होना ही बताया गया है।

"पाणिग्रहण काले त्व सूर्यभौमशनैश्चरै । शुक्र वाचस्पतिम्या च तव भार्यावलोकिता ।।
तन्मुहूर्त्तेऽभवच्चन्द्रस्तस्या सोमसुतस्तथा। परस्पर विपक्षौ तौ तत पार्थिव ते भृशम्।।1

दुष्टकाल मे जन्मे पुत्र या पुत्री भी दुख के कारण बनते है। रेवती नक्षत्र के अन्त मे जन्म ग्रहण करना दुखदायी होता है। ऋतवाक् ऋषि का पुत्र इसी काल मे जन्मा था।राज्याभिषेक के समय भी राजा द्वारा ज्योतिषियो से शुभ लग्न के बारे मे विचार – विमर्श का उल्लेख मिलता हैं राजा करन्धम को जब पुत्र हुआ था तो उन्होने भी ज्योतिषियो से पुत्र जन्म के समय लग्न, नक्षत्र के शुभ– अशुभ के बारे मे पूछा था

ज्योतिषिगणो ने कहा था कि –शस्ते मुहूर्ते नक्षत्रे लग्ने चैव सुतस्तव।।
समुत्पन्नो महावीर्यो महाभागो महाबल ।भविष्यति महाराजस्तवात्मज ।।
अवैक्षतेम देवाना गुरु. शुक्रश्च सप्तम. ।सोमश्चतुर्थस्तनय तवैन समवैक्षत।।
उपान्तसस्थितश्चैव सोमपुत्रोप्यवैक्षत। नावैक्षतेमं सविता न भौमो न शनैश्चर ।।2

"आपका पुत्र प्रशस्तमुहूर्त्त ,प्रशस्तनक्षत्र और प्रशस्तलग्न मे उत्पन्न हुआ है ,अतएव हे राजन ! यह आपका पुत्र महाभाग्यवान , अत्यन्त वीर्यवान , असीम बलशाली और महराज होगें।यह देखिये इस पुत्र ब्रहस्पति और शुक्र सप्तम है या सप्तम घर पर देखते है और चतुर्थ स्थान को चन्द्र अवलोकन करता हैऔर ग्यारहवे स्थान मे स्थित बुध की इन पर दृष्टि है और आपके पुत्र पर रवि मगल तथा शनैश्चर की दृष्टि नही है।"

1 मार्कण्डेय पुराण –68/26–27
2 मार्कण्डेय पुराण – 119/ 5–8

विवाह से पहले विवाह का उत्तम दिन निकाला जाता था उसके बाद ही विवाह होता था।राजा ज्योतिषियो से विवाह का उत्तम दिन पूछते थे।

" विशिष्टतरमेतस्या विवाहाय दिन वद"1

कृषि के क्षेत्र मे भी नक्षत्र ,लग्न देखा जाता था जैसे अमङ्गल दिन धान नही बोना चाहिये।चन्द्रमा की पूजा करके अच्छे पवित्र दिन मे कृषि कार्य का प्रारम्भ करना चाहिये।

गण्ड दोष :–

ज्योतिष की चर्चा मे गण्ड दोष का उल्लेख मिलता है । बच्चे के जन्म लेने के पश्चात गण्डान्तरति नामक दुष्ट के होने से गण्डदोष होता है यह आधे मुहूर्त तक रहता है जिसकी शान्ति के लिए नक्षत्र एव ग्रह की शान्ति करनी चाहिए। देव स्तुति करने चाहिए ।' गो–मूत्र एव सफेद सरसो से स्नान उस नक्षत्र की ग्रह पूजा धर्मोपनिषद श्रवण , शास्त्र दर्शन और जन्मावज्ञा जन्म का तिरस्कार करने से गण्डदोष की शान्ति होती है ।'2

नक्षत्र एवं राशि :–

मार्कण्डेय पुराण मे नक्षत्रो के शुभ–अशुभ फलो के विषय मे भी बताया गया है। श्रेष्ठ ग्रह मनुष्य को अभ्युदय प्रदान करते है तो दूसरी तरफ मनुष्य को पीड़ा भी देते है।' जिस नक्षत्र का जो अधिपति है उसके बिगडने से उस देश मे पुरुषो को दुःख अथवा भय उपस्थित होता है और इसी के श्रेष्ठ स्थान मे होने से मनुष्यो को शुभ होता है ।

यस्यर्क्षस्य पतिर्यो वै ग्रह स्तद्भावतो भयम् । तद्देशस्य मुनिश्रेष्ठ तदुत्कर्षे शुभागमः ।।3

ग्रहो एव नक्षत्रो के शुभ होने से शोभन की प्राप्ति एव बिगड़ने से अशोभन होता है। इसका प्रभाव केवल एक ही व्यक्ति पर नही अपितु देश, दिशा, नृप, पुत्र, प्रजा, स्त्री भृत्य आदि सभी पर पडता है।

1 मार्कण्डेय पुराण– 120/24

2 मार्कण्डेय पुराण –48/19–20

3 मार्कण्डेय पुराण – 55/56

मार्कण्डेय पुराण मे ग्रहो का शान्ति का उपाय बताया गया है कि पडित बुद्विमान व्यक्ति से विचार–विमर्श करना चाहिए । बुद्विमान व्यक्ति को मैत्री एव अद्रोह भाव से सब के साथ सम्बन्ध रखना चाहिए एव इसी का उददेश्य देना चाहिए । बुद्विमान व्यक्ति को देश, जन, स्त्री, नृप, आदि की पीडा को अपनी पीडा समझ कर ग्रहो की शान्ति करनी चाहिऐ। ऐसा नही है कि पुण्य पुरुष को ग्रह की पीडा नही होती उन्हे भी ग्रहो के शुभ–अशुभ फल प्राप्त होते है। ग्रहो की शान्ति के लिए उपवास, शान्ति स्तोत्र का पाठ, देवताओ का वदन, जप, होम, स्नान दान आदि करनी चाहिए ।

ग्रह पूजा च कुर्वीत सर्वपीडासु मानव ।एव शाम्यन्त्यशेषाणि घोराणि द्विज सत्तम ।।1

उपर्युक्त श्लोक मे ग्रह पूजा की भी बात कही गयी है।

मार्कण्डेय पुराण मे 27 नक्षत्रो एव दस राशियो के निम्न नाम प्राप्त होते है–

नक्षत्र – कृतिका,रोहणी,मृगशिर,आर्द्रा, पुनर्वसु,पुष्य, आश्लेषा,मघा, पूर्वफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी,हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपद, उत्तरभाद्रपद, रेवती, अश्विनी,भरणी ।

राशि – मेष, मिथुन, कर्कट, सिह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, मीन।

इस प्रकार भगवान कूर्म मे देश ,देश मे नक्षत्र ,नक्षत्र मे राशि और ग्रह,ग्रह मे राशि स्थित है।

कला :–

कला शब्द की व्युत्पत्ति कल् +अच्+टाप् धातु एवं प्रत्ययो के सयोग से हुयी है। भारतीय साहित्य मे चौसठ कलाओ का उल्लेख प्राप्त होता है। मस्तिष्क में स्थित सूक्ष्म से सूक्ष्म इच्छाओं को व्यक्त करना ही कला है। सगीत कला , लेखन कला एव मूर्तिकला आदि भावो को अभिव्यक्त करने के माध्यम है। कला रुपो की निर्माण कर्त्री है। कला के द्वारा व्यक्ति अपने मन मे छिपी हुयी भावनाओ को व्यक्त करता है। कला को व्यक्त करने पर व्यक्ति अपने पीड़ाओ से छुटकारा प्राप्त करता है तथा उसे शक्ति प्रदान होती है। मार्कण्डेय पुराण मे शेषशायी विष्णु 2 सूर्य एव देवी आदि का उल्लेख भारतीय कला का महत्वपूर्ण सूत्र है।

1 मार्कण्डेय पुराण –55/72

2 मार्कण्डेय पुराण – 1/2

संगीत कला :–

वैदिक काल से ही देवताओ द्वारा ऋचाओ का ज्ञान करने के प्रमाण प्राप्त होते है भिन्न–भिन्न स्तुति गान द्वारा देवतागण अपने आराध्य को प्रसन्न करते थे। मार्कण्डेय पुराण मे रात्रि सूक्ति[1] द्वारा देवी स्तुति, सूर्य स्तुति[2] एव सगीत की देवी सरस्वती[3] की स्तुति गान आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।सगीत द्वारा व्यक्त भाव अत्यन्त सूक्ष्म एव स्पष्ट होते हैं मार्कण्डेय पुराण मे सगीत का ज्ञान देवी सरस्वती के माध्यम से देवताओ को हुआ सरस्वती देवी ने सगीत ज्ञान का आशीर्वाद नागराज अश्वतर का वरदान मे दिया था।[4] देवी सरस्वती ने सप्त स्वर ग्राम के सात राग, सात गीत, मूर्च्छना, उन्चास प्रकार की ताल, तीन प्रकार के लय (द्रुत, विलम्बित, मध्य) चार प्रकार के पद, तीन प्रकार की गति आदि सगीत विद्या का विशाल भण्डार नागराज अश्वतर एव कम्बल को आशीर्वाद रुप मे प्रदान किया।

वाद्य यन्त्र– मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होने वाले कुछ वाद्ययन्त्रो का उल्लेख प्राप्त होता है जो वेद युगीन है कुछ वैदिक काल के पश्चात बनाये गये होगे।

वीणा – मार्कण्डेय पुराण मे " वीणा " का नामोल्लेख प्राप्त होता है।ऐतरेय आरण्यक के अनुसार यह यन्त्र एक समय कैशयुक्त चर्म से ढका था।[5]

तुम्बरू – तुम्बरु नारद जी का प्रसिद्ध वाद्य यन्त्र था।

तूर्य – मार्कण्डेय पुराण मे मगल कार्य के समय देवतूर्य बजने का उल्लेख प्राप्त होता है। राजा स्वरौचि के विवाह के समय देवतूर्य बजने लगे थे एव अप्सराये नृत्य करने लगी थी।

" नदत्सु देवतूर्येषु नृत्यन्तीस्वप्सर सु च "[6]

1 मार्कण्डेय पुराण – 78/53–67
2 मार्कण्डेय पुराण – 103/57–58
3 मार्कण्डेय पुराण –21/31–48
4 मार्कण्डेय पुराण –21/51
5' वाल्मीकि युगीन भारत पृष्ठ –597
6 मार्कण्डेय पुराण – 61/19

इसके अतिरिक्त अन्य माङ्गलिक अवसरो पर भी तूर्य बजाये जाने का वर्णन प्राप्त होता है।

वेणु, झर्झर, प्रणव, पुष्कर, मृदङ्ग, पटह, आनक, दुन्दुभी, शंख आदि वाद्ययन्त्रो का मात्र नामोल्लेख ही मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है, इनका विशेष विवरण नही मिलता।

गन्धर्व— वैदिक काल से ही गन्धर्वो की गणना सगीत कला प्रेमी के रुप मे की जाती रही है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार गन्धर्व लोग स्वर्ग मे सगीत प्रस्तुत करते थे।कलि गन्धर्व एव वरूथिनी अप्सरा का पुत्र "स्वरोचि " हुआ।[1] जो कालान्तर मे स्वरोचि के नाम से ही " स्वरोचिष–मन्वन्तर " पडा। गन्धर्व लोग जब पृथ्वी पर आते थे तब राजा लोग गन्धर्वो की पूजा अर्घ्य द्वारा करते थे।[2] सुदामा[3] तनय एव कलि आदि गन्धर्वो का नामोल्लेख तो प्राप्त होता है किन्तु उनके विषय मे कोई विशेष विवरण नही प्राप्त होता है।

नृत्य — मार्कण्डेय पुराण मे नर्तक के रुप और लावण्य को प्राथमिकता नही दी गयी अपितु उसके हाव भाव आदि ही प्रमुख हैं। "नृत्य" का परिभाषित करते हुए मार्कण्डेय पुराण मे कहा गया है – "हाव–भाव और कटाक्ष विक्षेपादि युक्त नृत्य को ही नृत्य कहते हैं अन्य नृत्य वृथा है।"

"चार्वधिष्ठानवन्नृत्य नृत्यमन्यद्विडम्बनम् "[4]

अप्सरा — अप्सराये नृत्य मे अत्यन्त दक्ष होती थी। अप्सराये विभिन्न अवसरो के साथ ही साथ राजा के दरबार मे नृत्य करती थी एव उनकी विलासिता का साधन भी होती थी मार्कण्डेय पुराण मे अप्सरा द्वारा ऋषि की तपस्या भग करने का उल्लेख प्राप्त होता है— वपु अप्सराने दुर्वासा ऋषि की तपस्या भग किया था तपस्या भग करने से वपु अप्सरा शाप ग्रस्त भी होती है।[5] मार्कण्डेय पुराण मे कुछ अन्य अप्सराओ का नामोल्लेख प्राप्त होता है–रम्भा, मिश्रकेशी, तिलोत्तमा, उर्वशी, घृताची, मेनका, पुञ्जिकस्थला, वरुथिनी, प्रम्लोचा, विश्वाची, सहजन्या आदि।

---

1 मार्कण्डेय पुराण – 60/4 और 7

2 मार्कण्डेय पुराण –125/7

3 मार्कण्डेय पुराण –106/55

4 मार्कण्डेय पुराण – 1/39

5 मार्कण्डेय पुराण –1/ 51 –52

विलासिनीगण— मार्कण्डेय पुराण के अनुसार विलासिनीगण राजा के दरबार मे नृत्य करती थी। विलासिनीगण किसी उत्सव आदि अवसरो पर नृत्य करती थीं।

" हृष्ट पुष्टे पुरे तस्मिन्गीत वाद्यैर्वराड्गना । विलासिन्योऽतिचार्वड्गयो ननृतुलस्यिमुत्तमम् ।।1"

ये विलासिन्या सम्भवत वेश्याये ही थी।

स्वस्तिक — भारतीय कला मे "स्वास्तिक" प्रतीकात्मक तत्व है।यह चिन्ह स्वस्ति भावना का बोधक है। मार्कण्डेय पुराण के अनुसार— गोबर से लिपी हुयी भूमि पर " स्वस्तिक " बनना चाहिये ।इससे व्यक्ति का धन, यश एव आयु की वृद्धि होती है।2

मूर्ति कला :—

मूर्ति —देवी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर पूजा करने का उल्लेख मार्कण्डेय पुराण मे प्राप्त होता है। सुरथ राजा एव समाधि वैश्य देवी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर पूजन करता था। यह मूर्ति पुलिन पर बनाया गया था।3 इससे स्पष्ट है कि इस समय तक मूर्तिकला का पर्याप्त विकास हो गया था।

सिहासन — सिहासन स्वर्ण के बनाये जाते थे।मार्कण्डेय पुराण के अनुसार —"पन्नगराज सुवर्ण के आसन पर विराजमान थे।"

" महाभागमासने सर्वकाञ्चने"4

रत्न आभूषण — मार्कण्डेय पुराण लोक जीवन कला का चित्रण नाना प्रकार के रत्नो एव आमषणो के माध्यम से करता है। मार्कण्डेय पुराण मे रत्नो एव आभूषण सभवत सभी वर्ण के लोग धारण करते रहे होगे।

कुण्डल — यह कानो मे पहना जाता था। मणि जडित होता था।5

केयूर — केयूर हाथो मे पहना जाता था।6

1 मार्कण्डेय पुराण — 125/9
2 मार्कण्डेय पुराण — 32/50—51
3 मार्कण्डेय पुराण —90/7
4 मार्कण्डेय पुराण — 21/ 104
5 मार्कण्डेय पुराण —21/103
6 मार्कण्डेय पुराण — 21/ 104

माला–हार – दिव्यमाला एव हार गले मे धारण किया जाता था।[1]

मार्कण्डेय पुराण मे सुवर्ण, चॉदी, मणि, हीरा, मूगा,[2] मोती, ताबा, कासा, रागा, सीसा एव वैदूर्य आदि रत्न एव धातु का नामोल्लेख प्राप्त होता है।

वास्तु कला –

मन्दिर – कामरूप पर्वत पर गुहविशाल वन मे "सूर्यमन्दिर"[3] का उल्लेख प्राप्त होता है किन्तु इस मन्दिर का निर्माण किस शैली मे हुआ था, इसका वर्णन मार्कण्डेय पुराण मे नही प्राप्त होता है।

पुर – पुर का निर्माण किस प्रकार होना चाहिये यत्किचित वर्णन इस पुराण मे प्राप्त होता है। मनुष्य ने अपने रहने के लिए सर्वप्रथम पुरो का निर्माण किया। यह पुर दो कोस लम्बा और उसका आठवॉ भाग मे चौडा होता था।[4] पुर के चारो ओर चहारदिवारी एव खाइयॉ बनायी जाती थी।

नगर – मार्कण्डेय पुराण मे नगरो के नाम तो मिलते हैं किन्तु इसका निर्माण किस प्रकार होता था , इसका विस्तृत वर्णन नही प्राप्त होता । जैसे– अरुणास्पद नगर आदि ।

उद्यान – मार्कण्डेय पुराण मे रैवत उद्यान का वर्णन प्राप्त होता है।यह उद्यान समस्त ऋतुओ के फल , वृक्ष पुन्नाग,[5] पलाश, बेल, नारियल आदि। इन्हीं वृक्षो पर चकोर ,शुक, बाज, आडि, कोयष्टि आदि अनेको पक्षीगण निवास करते थे।

1 मार्कण्डेय पुराण – 21/103
2 मार्कण्डेय पुराण –21/105
3 मार्कण्डेय पुराण –106/57 और 59
4 मार्कण्डेय पुराण –46/44
5 मार्कण्डेय पुराण –6/15

उपसंहार

मार्कण्डेय पुराण का माहात्म्य

मार्कण्डेय पुराण के वक्ता चार धर्म पक्षियो ने जैमिनि को मार्कण्डेय पुराण का माहात्म्य बताते हुये कहा कि इस पुराण के श्रवण एव पठन करने वाले व्यक्तियो की सभी कामनाये पूरी होती हैं एव व्यक्ति समस्त पापो से मुक्त होकर ब्रह्मलीनता को प्राप्त होता हैं। मार्कण्डेय पुराण का श्रवण करने से श्रोता ब्रह्महत्या जैसे महापाप कर्मो से मुक्त हो जाता है सौ करोड कल्प के . पाप नष्ट होजाते है –

श्रुत्वा पुनश्च ते पाप कल्प कोटिशतै कृतम्[1]

इसका श्रवण करने से पुष्कर मे किये गये दान के समान पुण्य प्राप्त होता हैं।श्रद्धालुओ को मार्कण्डेय पुराण के वाचक को ब्रह्मा के समान मानकर उनका पूजन करना चाहिये अन्यथा उसके सभी पुण्य नष्ट हो जाते है पडित उनको **शास्त्रचोर** कहते है।

नासौ पुण्यमवाप्नोति शास्त्रचोर स्मृतो हि स[2]

मार्कण्डेय पुराण को ज्ञान विज्ञान से सयुक्त पुराण की सज्ञा दी गयी है। इस पुराण को सुनकर व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है एव व्यक्ति अच्छे विमान मे बैठ कर स्वर्ग लोक को जाता है। स्वय इस पुराण के अनुसार मार्कण्डेय पुराण सहित अठारह महापुराणो के नाम का जप, त्रिकाल मे करने से अश्वमेध यज्ञ के फल के समान पुण्य व्यक्ति को प्राप्त होते हैं ।

मार्कण्डेय पुराण के महात्मय को सुनाते हुए वक्ता पक्षी कहते है कि जो नास्तिक हो , वेद–पुराण की निन्दा करने वाले, मर्यादा भग करने वाले ऐसे प्राणी के प्राण कठगत होने पर भी इस पुराण को न दे । जो प्राणी इस पुराण को भय, मोह या लोभ वश श्रवण या पठन करता है उसको नरक की प्राप्ति होती है अत प्राणी को शुद्ध मन से इस पुराण का श्रवण –पठन करना चाहिए । मार्कण्डेय पुराण के अध्ययन करने वाले प्राणी को दुर्भिक्ष का सामना नही करना पडता, सभी सुख साधन सम्पन्न होते है।

1 मार्कण्डेय पुराण –134 / 14

2 मार्कण्डेय पुराण – 134 / 21

तथा अनेक प्रकार के पातको से छूट जाता है। जो इस कथा को सुनता है, ऋद्धि, वृद्धि, स्मृति, शान्ति, लक्ष्मी, पुष्टि, तुष्टि, उसको नित्य प्राप्ति होती है –

ऋद्धि, वृद्धि , स्मृति, शान्ति श्री पुष्टिस्तुष्टिरेव च ।

नित्य तस्य भवेद्विप्र य श्रृणोति कथामिमाम् ।।[1]

मार्कण्डेय पुराण धर्म –स्वर्ग एव अपवर्ग को देने वाला है।मार्कण्डेय पुराण का श्रवण प्राणियो को भक्तिपूर्ण मन से सुनना चाहिऐ अन्यथा अवज्ञा करने पर प्राणी अनेक जन्म तक मूक एव सात जन्म तक बहरे रहते है।

मूको भवति जन्मानि सप्त मूर्ख प्रजायते ।[2]

मार्कण्डेय पुराण को सुनकर पुराण पूजन करना चाहिये ऐसे प्राणी पाप रहित होकर विष्णुलोक को प्राप्त होते हैं । इस पुराण को सुनने वाला को धर्म ,अर्थ, काम, मोक्ष इन चारो पुरूषार्थो की प्राप्ति होती है । व्यक्ति को पुराण का पाठ करने वाले व्यास को यथा शक्ति दान देना चाहिये जैसे सुवर्ण, वस्त्र, एव सुसज्जित गौ, ग्राम एव वाहन आदि देना चाहिए ।

....

1 मार्कण्डेय पुराण –134/34–35

2 मार्कण्डेय पुराण –134/24

सहायक पुस्तक सूची

ऋग्वेद (मूल) – स्वाध्याय मण्डल

अथर्ववेद (मूल) – स्वाध्याय मण्डल

ऐतरेय ब्राह्मण – सायण भाष्य सहित,आनन्दाश्रम तथा षड्गुरुशिष्य कृत, सुखप्रदा व्याख्या सहित, त्रिवेन्द्रम

शतपथ ब्राह्मण – कालेण्ड सम्पादित

तैत्तरीय ब्राह्मण – सायण भाष्य , आनन्दाश्रम

गोपथ ब्राह्मण – गास्ट्रा सम्पादित,लीडन

तैत्तरीय आरण्यक – सायण भाष्य सहित,आनन्दाश्रम

वृहदारण्यक उपनिषद – शाकर भाष्य–गिरिकृत टीका सहित, काशी

साख्यायन श्रौत सूत्र – डॉ0 हिलेब्रेण्टसम्पादित

लाट्यायन श्रौत सूत्र – चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी 1929

आश्वलायन गृह्य सूत्र – निर्णय सागर सस्करण, नारायणकृत टीका सहित

गौतम धर्म सूत्र – मस्करिकृत भाष्य सहित, मैसूर

आपस्तम्ब धर्म सूत्र – श्री हरदत्त कृत टीका सहित कुम्भ कोण सस्करण

वेदान्त सूत्र भाष्य – शङ्कराचार्य

ब्रह्म सूत्र – शकर भाष्य–5 टीका सहित, निर्णय सागर प्रेस बम्बई 1950

अग्नि पुराण – पडितश्रीराम शर्मा आचार्य, सस्कृति सस्थान बरेली 1969

कूर्म पुराण – पचानन तर्क रत्न द्वारा सम्पादित, बगवासी प्रेस, कलकत्ता, व स 1332

गरुड पुराण – पचानन तर्क रत्न द्वारा सम्पादित, बगवासी प्रेस, कलकत्ता, व स 1314

पद्म पुराण – वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई1895 द्वारा पत्राकार प्रकाशित

ब्रह्म पुराण – आनन्दाश्रम सस्कृत सीरीज, पूना सन् 1895ई0 पंचानन तर्क रत्न, बगवासी प्रेस, कलकत्ता

ब्रह्माण्ड पुराण – वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई द्वारा पत्राकार प्रकाशित सन् 1913ई0

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण – श्री वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई

भागवत पुराण – श्रीमद्भागवत, गीता प्रेस गोरखपुर

भविष्य पुराण – श्री वेकटेश्वर प्रेस ,बम्बई सन् 1910

मार्कण्डेय पुराण – (क) स्वर्गीय पडित कन्हैया लाल मिश्र, हिन्दी साहित्य सम्मेलन,प्रयाग1996

(ख) श्री राम शर्मा आचार्य नवज्योति प्रेस, मथुरा, 1975

(ग) अनुवादक –धर्मेन्द्र नाथ शास्त्री, भूमिका लेखक डॉ० विष्णु दत्त राकेश, रति राम शास्त्री साहित्य भण्डार, मेरठ

मत्स्य पुराण – आनन्दाश्रम, सस्कृत सीरीज, पूना, पचानन तर्करत्न, बगवासी प्रेस, कलकत्ता व०स० 1316

स्कन्द पुराण – वेकटेश्वर प्रेस, बम्बई द्वारा पत्राकार रूप मे प्रकाशित, बगवासी प्रेस, कलकत्ता द्वारा 7भागों में प्रकाशित, व.स.1318

वायु पुराण – हरिनारायण आप्टे द्वारा आनन्दाश्रम, सस्कृत सीरीज, पूना से प्रकाशित, सन् 1905 ई० 1905

वामन पुराण – वेकटेश्वर प्रेस , बम्बई

विष्णु पुराण – श्री वेकटेश्वर प्रेस , बम्बई

विष्णु धर्मोत्तर पुराण – क्षेमराज कृष्ण प्रेस ,बम्बई

कालिका पुराण – वेंकटेश्वर प्रेस – बम्बई

हरिवंश पुराण – पचानन तर्क रत्न द्वारा नीलकण्ठ की टीका के साथ सम्पादित बगवासी प्रेस,कलकत्ता व.स.1312

देवी भागवत – पचानन तर्क रत्न द्वारा सम्पादित, बगवासी प्रेस, कलकत्ता

याज्ञवल्क्य स्मृति – विज्ञानेश्वर कृत, मिताक्षरा टीका और वीर मित्रोदय टीका (चौखम्बा)

मनु स्मृति – कुल्लूक भट्टकृत ,मन्वर्थ मुक्तावली टीका

अष्टाध्यायी — गुरु प्रसाद शास्त्री ,वाराणसी ,1941

महाभारत — गीता प्रेस ,गोरखपुर

महाभाष्य — कीलहार्न ,गवर्नमेण्ट सेण्ट्रल प्रेस बम्बई

वाल्मीकि रामायण — गीता प्रेस ,गोरखपुर

गीता — गीता प्रेस ,गोरखपुर

पद्मिनी मेनन — पुराण सन्दर्भ कोश, रामबाग, कानपुर–12

श्री बदरी नाथ शुक्ल — मार्कण्डेय पुराण एक अध्ययन, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी

डॅा० राजबली पाण्डेय — (क) हिन्दू धर्म कोश (ख) हिन्दू सस्कार, विद्याभवन चौखम्बा, वाराणसी

पी॰वी॰ काणे — धर्मशास्त्र का इतिहास, प्रथम–पचम भाग, हिन्दी समिति, लखनऊ

श्री सिद्धेश्वर शास्त्री चित्राव — भारतवर्षीय, चरित्र कोश साधना प्रेस ,पूना

डॅा० हरवश लाल शर्मा — भारत दर्शन, भारत प्रकाशन मन्दिर, अलीगढ

पुसालकर — हमारे पुराण एक समीक्षा —"कल्याण "हिन्दु संस्कृति अक वर्ष-२५, 1950 ई॰

डॅा० राम जी तिवारी — भविष्य पुराण एक अनुशीलन वैशाली प्रकाशन, गोरखपुर,1986

डॅा० मजुला जयसवाल — वाल्मीकि युगीन भारत, महामति प्रकाशन, बहादुर गज इलाहाबाद

बलदेव उपाध्याय — पुराण विमर्श, चौखम्बा सुर भारती प्रकाशन, वाराणसी

ए०ई० पार्टिजर — ऐंशण्ट इण्डियन हिस्टारिकल ट्रेडिशन आक्सफोर्ड 1922

एस भीमशकर राव — (एस) हिस्टारिकल इम्पार्टेस ऑफ दॅपुराणॅाज ज०आ० हि० रि० सो० भाग–2 पृष्ठ 81–90

वी०आर०आर० दीक्षितार — पुराण इण्डेक्स (3वाल्यूम)मद्रास

वी०एन० लोनिया — भारतीय कला और सस्कृति

वासुदेव शरण अग्रवाल — मार्कण्डेय पुराण एक सास्कृतिक अध्ययन हिन्दुस्तानी एकेडमी, प्रयाग

श्री हरि नारायण दुबे — पुराण समीक्षा,इण्टरनेशनल इन्स्टीट्यूट रिसर्च, इलाहाबाद, 1984

श्री हरि शकर उपाध्याय — पद्मपुराण का सास्कृतिक अध्ययन

श्री वामन शिवराम आप्टे – सस्कृत हिन्दी कोश

डॉ० के०सी०श्रीवास्तव – (क)प्राचीन भारत का इतिहास एव सस्कृति (ख) प्राचीन भारत का इतिहास, यूनाइटेड बुक डिपो, 21 युनिवर्सिटी रोड, इलाहाबाद

श्री वृन्दावन दास – प्राचीन भारत मे हिन्दू राज्य साहित्य प्रकाशन ,मालीवाडा –नई सडक दिल्ली

डॉ० उदय नारायण राय – प्राचीन भारत मे नगर तथा नगर जीवन हिन्दुस्तानी एकेडमी , इलाहाबाद

एन०एल० दे० – ज्याग्रा०डिक्शनरी, पजाब गजेटियर अम्बाला जिला

श्री बी० त्रिपाठी – शक्ति परिक्रमा, श्री पीठम् आश्रम प्रतिष्ठानपुरी झूसी –इलाहाबाद

श्री हर दत्त जी शर्मा – "शक्ति तत्व का आर्य ग्रन्थो मे स्थान " कल्याण "शक्ति अक "सख्या–1, वर्ष–9पृष्ठ 522 , गीता प्रेस ,गोरखपुर।